महादेवी की गद्य रचनाएँ एक आलोचनात्मक अध्ययन

MAHADEVI KI GADYA RACHANAYEM EK ALOCHANATMAK ADHYAYAN

Thesis submitted to the
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
for the degree of
Doctor of Philosophy

By

USHA A. B.

Supervising Teacher

Dr. M. EASWARI
Professor & Head

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI - 682 022

1995

CERTIFICATE

This is to certify that this THESIS is a bonafide work carried out by **USHA. A.B.** under my supervision for Ph.D. and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any university.

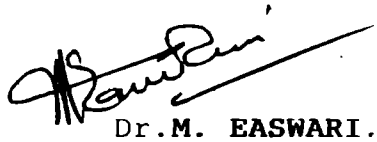

Dr.**M. EASWARI.**
Professor & Head of the Department
(Supervising Teacher)

Department of HINDI,
Cochin University of Science & Technology,
Kochi-682 022.

Date 19 / 1995.

DECLARATION

I hereby declare that the thesis entitled "MAHADEVI KI GADYA RACHANAYEM EK ALOCHANATMAK ADHYAYAN" has not previously formed the basis of any Degree, Diploma, Associateship, Fellowship or other similar title or recognition.

USHA.A.B.

Department of Hindi,
Cochin University of Science & Technology,
Kochi-682 022.

Date: 19-7-1995.

उपोद्घात

उपोद्घात

साहित्य जगत के आधुनिक हिन्दी साहित्यकारों में श्रीमती महादेवी वर्मा अद्वितीय, अप्रतिम और अनुपम हैं । महादेवी एक कवयित्री ही नहीं सफल गद्यकार भी हैं । लेकिन उनकी कविताओं पर जितना आलोचनात्मक अध्ययन हुआ है उतना गद्य को लेकर नहीं । "गद्य लेखिका महादेवी वर्मा" - डॉ. योगराज थानी, "महादेवी का गद्य साहित्य - विश्लेषण और स्वरूप" - डॉ. गोवर्द्धन सिंह, "महादेवी का गद्य साहित्य" - डॉ. त्रिलोकनाथ खन्ना, "महादेवी के रेखाचित्र" - गोपालकृष्ण कौल, "महादेवी का गद्य" - डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित आदि की कुछ पुस्तकें उपलब्ध हैं । लेकिन उनके गद्य का समग्रतापूर्वक विश्लेषणात्मक अध्ययन अब तक नहीं हुआ है । इसलिए महादेवी की गद्य रचनाओं का विश्लेषण करके उनका सही मल्यांकन करना ही मेरा विनम्र प्रयास है ।

प्रस्तुत शोध प्रबंध पाँच अध्यायों में विभक्त है । प्रथम अध्याय में महादेवी की जीवनी और रचनाओं का संक्षिप्त में अध्ययन हुआ है । महादेवी की रचनाएँ उनके रचना व्यक्तित्व का प्रामाणिक साक्ष्य है । कृति पर कृतिकार के व्यक्तित्व का प्रभाव अवश्य पडता है । इसलिए कृतिकार के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाले बिना कृति का अध्ययन अधूरा रहेगा । उसके परिप्रेक्ष्य में उनकी रचनाओं का विश्लेषण और रचना प्रक्रिया की रूपरेखा इसमें प्रस्तुत किये गये हैं

द्वितीय अध्याय है "महादेवी के संस्मरण और रेखाचित्र" । इसमें संस्मरण और रेखाचित्र की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए महादेवी के

संस्मरणात्मक रेखाचित्रों का अध्ययन विश्लेषण हुआ है । विषय की व्यापकता के कारण प्रस्तुत अध्याय को प्रतिपाद्य विषय के आधार पर चार विभागों में रखकर अध्ययन हुआ है ।

1. नारी संबंधी
2. पुरुष संबंधी
3. युग के महापुरुष और प्रतिष्ठित साहित्यकार संबंधी ।
4. पशु-पक्षी संबंधी ।

महादेवी के निबंधों का विवेचनात्मक अध्ययन तीसरे अध्याय में हुआ है । अपने निबंधों में महादेवी ने समाज, संस्कृति, भाषा और अन्य विषयों पर अपने विचार व्यक्त किये हैं ।यहँप्रत्येक विषय पर आधारित निबंधों का समग्रतापूर्वक अध्ययन हुआ है ।

चौथा अध्याय है महादेवी के आलोचनात्मक निबंध । हिन्दी के प्रतिष्ठित आलोचकों के साथ महादेवी नहीं गिनी जाती । फिर भी "साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध", "धरती", "दृष्टिबोध" आदि में महादेवी ने साहित्य संबंधी अपनी उच्चकोटि के विचारों को प्रस्तुत किया है । इस में काव्य प्रवृत्तियों के संबंध में उनकी अपनी कुछ धारणाएँ और प्रतिक्रियाएँ अभिव्यक्त हुई हैं । इनका अत्यन्त संयत और संतुलित विवेचन का प्रयास यहाँ किया गया है ।

पाँचवाँ अध्याय उनकी भाषा एवं शैली पर केन्द्रित है ।

उपसंहार में अध्ययन के आधार पर उभरनेवाले निष्कर्षों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध, कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की विभागाध्यक्षा और प्रोफेसर. डॉ. एम. ईश्वरी के निर्देशन में संपन्न हुआ है । उनके निरन्तर प्रोत्साहन और पथ प्रदर्शन ने ही इस शोध कार्य को दिशा एवं दृष्टि दी है । मैं उनके प्रति सदैव आभारी हूँ ।

इस विभाग के आदरणीय गुरुजनों, पुस्तकालय की अध्यक्षा और अन्य कर्मचारियों और मित्रों के प्रति मैं आभार प्रकट करती हूँ ।

हिन्दी विभाग,
कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय
कोचिन - 682022.

उषा. ए. बी.

19.07.1995.

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

उपोद्घात ..... I - III

पहला अध्याय ..... 1 - 18

महादेवी वर्मा के जीवन वृत्त - साहित्य साधना

जन्म - शिक्षा - नौकरी - विवाह - अन्य महापुरुषों और साहित्यकारों से संबंध और प्रभाव - महादेवी का व्यक्तित्व - महादेवी का जीवन दर्शन - महादेवी की प्रतिभा के बहुमुखी आयाम - कवयित्री महादेवी वर्मा - गद्यकार महादेवी वर्मा - अतीत के चलचित्र - श्रृंखला की कड़ियाँ - स्मृति की रेखाएँ - पथ के साथी - क्षणदा - साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - संभाषण - संचयन - दृष्टिबोध - चित्रकारी - कुशल वक्ता - पुरस्कार और सम्मान ।

दूसरा अध्याय ..... 19 - 112

महादेवी के संस्मरण और रेखाचित्र

रेखाचित्र - संस्मरण - रेखाचित्र और संस्मरण में साम्य-वैषम्य - महादेवी के संस्मरणात्मक रेखाचित्र -

1. नारी संबंधी

सेठ की पुत्रवधु - भाभी - बिट्टो - बिन्दा - सबिया - सबला - लछमा - भक्तिन - बिबिया - गौंगिया - निष्कर्ष ।

पृष्ठ संख्या

2. पुरुष संबंधी

रामा - घीसा - अलोपी - बदलू - चीनी फेरीवाला - पर्वत पुत्र - ठकुरी बाबा - निष्कर्ष ।

3. युग के महापुरुष और प्रतिष्ठित साहित्यकार संबंधी

पथ के साथी - कवीन्द्र रवीन्द्र - श्री मैथिली शरण गुप्त - सुभद्राकुमारी चौहान - निराला - जयशंकर प्रसाद - सुमित्रानन्दन पंत - सियाराम शरण गुप्त - स्मारिका - महात्मा गाँधी जवाहर भाई - राजेन्द्र बाबू - राजर्षि टण्डन - निष्कर्ष ।

4. पशु-पक्षी संबंधी

मेरा परिवार - कुक्कुट शावक - नीलकण्ठ मोर - गिल्लू - सोना हिरनी - दुर्मुख खरगोश - गौरा गाय - नीलू कुत्ता - निक्की, रोज़ी और रानी - निष्कर्ष ।

तीसरा अध्याय 113 - 157

महादेवी वर्मा के निबंध

सामाजिक निबंध

समाज और व्यक्ति - हमारी सामाजिक समस्यायें - भारतीय नारी का व्यक्तित्व - नारीत्व का अभिशाप - हिन्दू नारी का पत्नीत्व - शिक्षित नारी का कर्तव्य -

पृष्ठ संख्या

स्त्री का अर्थ स्वातंत्र्य - आधुनिक नारी पर
पाश्चात्य प्रभाव - युद्ध के प्रति नारी का दृष्टिकोण -
निष्कर्ष ।

सांस्कृतिक निबंध

संस्कृति - संस्कृति और प्राकृतिक परिवेश - भारतीय
संस्कृति की पृष्ठभूमि - साहित्य, संस्कृति और शासन -
भारतीय संस्कृति और बौद्ध दर्शन - निष्कर्ष ।

भाषा संबंधी निबंध

हमारा देश और राष्ट्र भाषा -

अन्य विविध निबंध

कसौटी पर - दोष किसका - हमारे वैधानिक युग की समस्या -
हिन्दी पत्र जगत एक दृष्टिकोण - स्वर्ग का एक कोना और
सुई दो रानी डोरा दो रानी - निष्कर्ष ।

चौथा अध्याय 158 - 179

महादेवी का आलोचनात्मक निबंध

कला - काव्य कला - मूर्तिकला - चित्रकला - काव्य
का स्वरूप - काव्य का प्रयोजन - काव्य का तत्व -
काव्य का भेद - काव्य का विषय - काव्य की भाषा -
छन्द और लय - छायावाद - रहस्यवाद - यथार्थ और
आदर्श - निष्कर्ष ।

पृष्ठ संख्या

पाँचवाँ अध्याय — 180 - 202

महादेवी की भाषा एवं शैली

संस्कृत निष्ठ भाषा - तद्भव देशज शब्द - विदेशी शब्द- मुहावरा, कहावत और लोकोक्ति - चित्रमयी भाषा - ओज गुण युक्त भाषा - प्रसाद गुण युक्त भाषा - प्रसंगानुकूल भाषा ।

शैली

चित्रात्मक शैली - भावात्मक शैली - दार्शनिक शैली - कथात्मक शैली - सूक्तिकथन शैली - विचारात्मक तर्क शैली - निष्कर्ष ।

उपसंहार — 203 - 211

संदर्भग्रंथानुक्रमणिका — 212 - 218

महादेवी वर्मा के ग्रंथ सूची

अन्य सहायक ग्रंथों की सूची

अंग्रेज़ी ग्रन्थ

पत्र-पत्रिकायें ।

पहला अध्याय

महादेवी वर्मा के जीवनवृत्त - साहित्य साधना

जीवन परिचय

जन्म:-

श्रीमती महादेवी वर्मा का जन्म सन् 1907 को फर्रुखाबाद के एक सुप्रतिष्ठित कायस्थ परिवार में हुआ । आपके पिता श्री गोविन्द प्रसाद वर्मा इन्दौर के डेली कॉलिज के प्राध्यापक, कर्मनिष्ठ नास्तिक थे । माता श्रीमती हेमरानी देवी धर्मपरायण, कलाप्रेमी नारी थी । घर का वातावरण सादगी और भक्ति से भरा था । उन्हें माँ-बाप और सगे-संबंधियों का स्नेह और वात्सल्य प्रभूत मात्रा में प्राप्त हुआ था ।

शिक्षा :-

शिक्षित, सुसंस्कृत और समृद्ध परिवार की होने से शुरू में महादेवी को घर में ही उर्दू, संगीत और चित्रकला की शिक्षा दी जाने लगी थी । 1912 में इन्दौर की मिशन पाठशाला में उनकी शिक्षा प्रारंभ हुई । उसके बाद प्रयाग के सुप्रसिद्ध क्रास्थवेट विद्यालय से उन्होंने शिक्षा प्राप्त की और आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. किया । अपनी कुशाग्रबुद्धि, अध्ययन प्रेम और जिज्ञासा से उन्होंने अंग्रेज़ी, गुजराती, प्राकृत, पाली आदि भाषाओं का भी ज्ञान प्राप्त किया ।

नौकरी :-

अध्ययन के बाद महादेवी ने प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाध्यापिका का पद ग्रहण कर लिया और वहाँ के हज़ारों लड़कियों की पढ़ाई और जीवन का भार बड़े उत्साह के साथ संभालने लगी । विद्यापीठ में रहकर वे साहित्य सृजन करने लगीं । "चाँद" और "साहित्यकार" का संपादन इसी बीच में हुआ । उत्तर प्रदेश विधान-परिषद् की सदस्या के रूप में वे मनोनीत हुई । साहित्य अकादमी की संस्थापक-सदस्या भी रही । प्राचार्या के समान प्रशासिका के रूप में भी व सफल निकली । सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में, भी उनका योगदान उल्लेखनीय है ।

विवाह :

प्रचलित प्रथा के अनुसार उनका विवाह नौ वर्ष की आयु में ही श्री स्वरूपनारायण वर्मा से हुआ । विरक्ति की भावना उनमें प्रारंभ से थी और बाद में किसी भी स्थिति में वे विवाह को स्वीकार नहीं कर सकी ।

अन्य महापुरुषों और साहित्यकारों से संबंध और प्रभाव :

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधीजी, जवाहरलाल नेहरू, राजेन्द्र प्रसाद जैसे महापुरुषों के जीवन से महादेवी प्रभावित थीं । गाँधीजी को ये भारत का आदर्श पुरुष मानती थीं । गाँधीजी के अहिंसा सिद्धांत से वे बहुत अधिक

प्रभावित हुई । रबीन्द्रनाथ ठाकुर के महान् व्यक्तित्व के प्रति महादेवी के मन में आदर था । उनके मानव-संदेश का प्रभाव लेखिका पर पड़ा । महान् बुद्ध के प्रति वे बडी श्रद्धा रखती थीं और उनके सिद्धांतों को उन्होंने ग्रहण किया । प्रेमचन्द, प्रसाद, निराला, पन्त, मैथिलीशरण गुप्त, सियाराम शरण गुप्त और सुभद्राकुमारी चौहान आदि साहित्यकारों से उनका निकट संपर्क था । प्रेमचन्द से उनका बहुत वर्षों से परिचय रहा । प्रसाद के प्रति उनके मन में आदर का भाव होता था । निराला जी के साथ इनका संबंध बहुत अधिक रहा । वे समय समय पर कई बातों में उनकी सहायता करती थीं । पन्त जी की कोमल प्रकृति से वे आकृष्ट हुई थीं । मैथिलीशरण गुप्त और सियारामशरण गुप्त के प्रति उनके मन में विशेष प्रेम और आदर का भाव था । सुभद्राकुमारी चौहान से उनका घनिष्ठ संपर्क था । श्री विश्वंभर "मानव", श्री अमृतराय, श्रीमती सावित्रीदेवी वर्मा, श्री शिवचन्द्र नागर, श्री देवेन्द्र सत्यार्थी जैसे आलोचकों से आप का घनिष्ठ परिचय रहा । इन समसामयिक साहित्यकारों से वे मिलती थीं और ज्ञान का आदान-प्रदान हुआ करता था । इनके अतिरिक्त प्रतिदिन आप से मिलने के लिए अनेक आलोचक आया करते थे । पत्र-पत्रिकाओं के संपादक, विद्यार्थी तथा अध्यापक आया करते थे । उनसे बडे प्रेम से वे मिलती थीं । उपर्युक्त साहित्यकारों का उनसे इतनी आत्मीयता थी कि वे महादेवी को बहिन और माता कहकर पुकारते थे ।

महादेवी का व्यक्तित्व :

मूलतः साहित्य आत्माभिव्यक्ति है । सृजन-प्रक्रिया में सर्जक के व्यक्तित्व का प्रक्षेपण होता है । व्यक्तित्व में व्यक्ति के जन्मजात

आन्तरिक-बाह्य गुण और प्रवृत्तियाँ निहित हैं । व्यक्तित्व व्यक्ति के जीवन के अन्य परिस्थिति जन्य प्रभावों के अनुकूल रूपायित होता है । व्यक्तित्व का विकास पारिवारिक स्थिति, शैक्षणिक उपलब्धि और सामाजिक संपर्कों तथा युग के तत्कालीन परिवेश के समन्वित प्रभाव के कारण होता है । सामाजिकता संस्कार के रूप में विद्यमान रहती है ।

महादेवी के व्यक्तित्व के विकास में वंश-परंपरा और वातावरण का प्रभाव स्पष्ट है । उनका व्यक्तित्व अत्यन्त अनोखा और प्रभावशाली है । माता की भावुकता और पिता की दार्शनिक ज्ञान उन्हें संस्कार रूप में प्राप्त था । स्वाभिमान, कर्मण्यता, बौद्धिकता और कलात्मक अभिरुचि उनसे ही प्राप्त थी । महादेवी का घरेलू वातावरण निर्मल, तरल और सौंदर्यमय था । अत्यन्त संपन्न और सुसंस्कृत परिवार में जन्म लेने से, उनके जीवन में कदाचित् किसी प्रकार का बाह्य द्वन्द्व नहीं था । स्नेहशील, सहानुभूतिपूर्ण, व्यक्तित्व के रूपायन में यह पारिवारिक-परिस्थिति सहायक सिद्ध हुई । उच्च विचार, नैतिकता और आदर्श से उनके व्यक्तित्व का परिष्कार हुआ । शैशव काल से ही उनमें करुणा की प्रवृत्ति रही है, इसलिए उन्होंने बौद्धभिक्षुणी बनने के बारे में भी सोचा था । करुणाशील होने के नाते मानव-प्रेम की भावना से उनका चरित्र मंडित था । यही कारण है कि छोटे-बड़े, शिक्षित-अशिक्षित, धनी-गरीब, सब उनसे प्रेम करते हैं । कोई इन्हें गुरुजी के नाम से पुकारता है तो कोई दीदी, जीजी और माँ के नाम से । उनका त्याग और दानशीलता जीवन के व्यापक क्षेत्र से जुड़े हैं ।

प्रकृति के प्रति बचपन से ही उनके मन में अपार प्रेम था । वे मनुष्य के समान पशु-पक्षी और वनस्पति सब को एक परिवार के सदस्य मानती थीं । अहंकार उनमें बिलकुल नहीं था । नगर में रहते हुए भी गाँववालों के बारे में खूब जानती थीं । वे बड़े सीधे-सादे स्वभाव की थीं । उनका स्नेह शहरवालों की तरह बनावटी और दिखावटी नहीं अपितु शुद्ध और पवित्र रहा । यही कारण है कि उनके रेखाचित्रों के अधिकांश पात्र ग्रामीण है । उनके व्यक्तित्व में भावुकता एवं बौद्धिकता का अद्भुत मेल है । डॉ. नगेन्द्र के अनुसार "उनके व्यक्तित्व के तीन रूप है, एक ममतामयी भारतीय महिला, दूसरा राष्ट्र की जाग्रत मेधावी नारी और तीसरा रहस्य कल्पनाओं को भावप्रवण कवयित्री । पहला पारिवारिक, दूसरा सामाजिक तथा तीसरा काव्य की मधुर साधना में लीन ऐकान्तिक रूप ।"[1]

पन्त जी की राय में उनका जीवन "सुख दुःख की आँख मिचौनी खेलता"[2] नज़र आता है । दुःख उनके लिए मानों अभिशाप की अपेक्षा शक्ति बन जाता है । उनका व्यक्तित्व सृजनात्मकता का प्रतीक है । वे अपने सबल व्यक्तित्व द्वारा अपनी परिस्थितियों को चुनौती देती हैं और अपने मनोनुकूल पथ का चुनाव करती है । किसी भी परिस्थिति में वे आत्मविश्वास को नहीं खोती थीं ।

---

1. महादेवी संस्मरण ग्रंथ - संपादक सुमित्रानन्दन पंत - पृ. 55
2. वही - पृ. 218

महादेवी के व्यक्तित्व में निजी गुण एवं क्षमताएँ हैं । धन-वैभव के सामने वे झुकती नहीं थीं । दया, ममता और त्याग सशक्त मानवता के द्योतक हैं । उनके व्यक्तित्व के बारे में श्री इलाचन्द्र जोशी ने कहा है कि उनकी प्रत्येक बात में एक सहज अधिकार का भाव स्पष्ट हो उठता था । "मैं ने देखी - एक ऐसी नारी, जो स्वतंत्र चेता थी, जो पाश्चात्य संस्कृति से परिचित होने पर भी भारतीय संस्कृति की परंपरा को पूर्णतः आत्मसात् कर चुकी थी ।"[1]

महादेवी वर्मा का व्यक्तित्व न्यारा है । इसको पूरी तरह से पहचानना कठिन है । क्योंकि एक ओर उन्हें दुःख प्रिय है तो दूसरी ओर वे सदा हँसती ही रहती है । श्री गंगाप्रसाद पाण्डेय ने उनके व्यक्तित्व की चर्चा करते हुए लिखा है "महादेवी जी का व्यक्तित्व आध्यात्मिक है, इसमें सन्देह नहीं । उनके व्यक्तित्व से तुलना करने के लिए हिमालय ही सब से अधिक उपयुक्त भी जान पड़ता है । उनके व्यक्तित्व का वही उन्नत और दिव्य रूप, वही विराट् और विशाल प्रसार, वही अमल-धवल तथा अचल- अटल, धीरता - गंभीरता, वही करुणा एवं तरलता और सब से बढ़कर वही सुखकर शुभ्र हास । यही तो महादेवी है ।"[2] महादेवी के व्यक्तित्व में भाव, विचार एवं कर्म का अद्भुत सामंजस्य पाया जाता है । काव्य की विरहिणी गायिका का स्वर गद्य के क्षेत्र में आकर विद्रोहिणी

---

1. महादेवी वर्मा - इलाचन्द्र जोशी - धर्मयुग
2. आजकल - जुलाई - 1951

के स्वर में गूँज उठता है । इस प्रकार पद्य और गद्य में महादेवी जी के दो रूप दृष्टव्य है । प्रथम में उनका हृदय-पक्ष प्रधान है तो दूसरे में बुद्धि पक्ष । उनके व्यक्तित्व के संबंध में नरेन्द्र शर्मा ने यों कहा है "उनकी शक्ति और स्नेह सुरुचि और संस्कार के प्रतीक है ।"[1]

महादेवी का जीवन-दर्शन :

महादेवी का व्यक्तित्व, जीवन एवं उनका काव्य उनकी दार्शनिक मान्यताओं पर आधारित है । आप जीवन में सुख-दुःख का समान रूप से स्वागत करती है । महादेवी ने रूढ़िग्रस्त दार्शनिक सिद्धान्तों को ज्यों का त्यों ग्रहण नहीं किया । उन्होंने बौद्ध-दर्शन और अद्वैत-दर्शन का समन्वित रूप ग्रहण किया है । बुद्ध के चिन्तन की सब से बड़ी उपलब्धि दुःख-वाद है । बुद्ध के अनुसार इस संसार में जन्म लेना दुःख है, जीवन का पालन-पोषण और संरक्षण दुःख है और अन्त में मृत्यु दुःख है । अर्थात् जीवन दुःखदायी है, प्रिय का वियोग दुःखदायी है और कोई उत्कट इच्छा जिसकी पूर्ति न हो सके वह भी दुःखदायी है । महादेवी जी की जीवन और जगत् संबंधी धारणा मूलतः बौद्ध दर्शन के अनुकूल है । बौद्ध दर्शन के प्रभाव से ही उनके मन में दुःखवादी दृष्टिकोण को इतना महत्त्व मिला ।

---

1. महादेवी संस्मरण ग्रंथ - सुमित्रानन्दन पंत - पृ. 91

महादेवी पर बौद्ध-दर्शन का प्रभाव उनके मस्तिष्क तक सीमित है, उनका हृदय तो अद्वैत-दर्शन से प्रभावित है । उनके काव्य में अद्वैत की अनुभूति अधिक प्रकट है । कवयित्री आत्मा - परमात्मा के मिलन को अधिक महत्व देते हुए उसे साधन के रूप में स्वीकार करती हैं । वे अध्यात्म की साधिका हैं । उस साधना में साधक को - वासनाओं, तृष्णाओं एवं कामनाओं पर विजय प्राप्त करना और "अहं" को विसर्जित करके लोक-सेवा में अर्पित कर देना है । साधक को दूसरों के दुःख को बाँट कर अपनी आत्मा का विस्तार करना है । अपने महान लक्ष्य की साधना एवं अलौकिक प्रभु की प्रतीक्षा में उसे दीप की भाँति जलते जलते मिट जाना है । महादेवी के इस जीवन दर्शन में करुणा और वेदना का औदात्य है । महादेवी अपनी रचनाओं में परंपरा और नूतनता, प्राचीनता और आधुनिकता, अद्वैत दर्शन और बौद्ध दर्शन का समन्वयात्मक स्वरूप प्रस्तुत करते हुए अपने स्वतंत्र चिन्तन का परिचय देती है । मौलिक विचार, सूक्ष्म निरीक्षण दृष्टि, प्रभावोत्पादकता - ये उनके चिन्तन के स्वाभाविक गुण हैं ।

महादेवी की प्रतिभा के बहुमुखी आयाम

छायावादी कवयित्री के रूप में महादेवी विख्यात है किन्तु वे भावुक कवयित्री ही नहीं उच्चकोटि की गद्य-लेखिका भी है । उन्होंने सफल रेखाचित्र, संस्मरण, निबंध, आलोचना आदि अन्य साहित्यक विधाओं तथा अनुवाद में भी सफलता पूर्वक अपनी तूलिका चलायी है । वे समर्थ अध्यापिका, कुशल चित्रकत्री और वक्ता भी थीं ।

कवयित्री महादेवी वर्मा

स्कूल के दिनों में महादेवी के मन में काव्यात्मक प्रवृत्ति के संकेत मिलते हैं । वे उस समय कवि-सम्मेलनों में भाग लिया करती थीं । एकान्त में बैठकर कविता लिखना उनका एकमात्र मनोरंजन था । पहले वे व्रजभाषा में अनेक पदों की रचना करती थीं, प्रौढ़ होने पर उन्होंने खड़ी बोली में लिखना शुरू किया । बाद में अपनी साहित्य-साधना से वे छायावाद के महान कवयित्री के रूप में प्रख्यात हुई । हिन्दी साहित्य जगत् में महादेवीजी का आगमन ऐतिहासिक महत्व रखता है । छायावादी काव्य-धारा में उनके काव्य का विशिष्ट स्थान है । प्रकृति के विराट सौन्दर्य में उनका प्रणय अज्ञात प्रियतम के प्रति है । इस भावात्मक प्रेम की दिशा में वे इतनी बढ़ जाती है कि उनकी भावना रहस्यवाद का परिधान पहन लेती है । उनकी कविता का मूल स्वर वेदना है । प्रणयानुभूति के रूप में यह वेदना प्रकट होती है । विषय की दृष्टि से वैविध्य न होने पर भी उनके गीतों में भावात्मक सघनता है । उनकी कविताओं में दुःख का दार्शनिक रूप द्रष्टव्य है । छायावादी काव्यधारा में अन्य किसी भी रचनाकार में उनकी जैसी वेदनाजन्य विह्वलता उपलब्ध नहीं है । इस वेदना पर बौद्ध दर्शन के दुःखवाद का प्रभाव है । वे कहती हैं कि "करुणा बहुल होने के कारण बुद्ध संबंधी साहित्य मुझे अधिक प्रिय रहा है ।"[1]

भारतीय संस्कृति से अभिभूत नारी संकल्प प्रकट करते हुए कवयित्री की आत्मा परम प्रिय से मिलने के लिए आतुर है । अनुभूति की

---

1. आधुनिक कवि-महादेवी वर्मा - भूमिका से

तीव्रता और कलात्मक अभिव्यक्ति की उत्कृष्टता की दृष्टि से उनके काव्य उच्चकोटि के हैं । लोक-परिवेश और लोक-भाषा से दूर सीमित आत्मानुभूति की परिधि में विचरण करनेवाले, भाषा की अभिजात छवि से मण्डित उनके गीत शब्द-चयन पर सन्तुलन, प्रांजलता, कोमलता और स्वर लय में बहुत विशिष्ट है ।

महादेवी के कुल आठ कविता संग्रह प्रकाशित है । "नीहार, रश्मि, नीरजा, सान्ध्यगीत, दीपशिखा, यामा, आधुनिक कवि और संधिनी । 'हिमालय और सप्तपर्णा अनुवाद है । महादेवी की मौलिक, अनूदित एवं संकलित काव्य-रचनाएँ हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है ।

"नीहार" महादेवी की प्रथम काव्य कृति है । सन् 1930 में 'नीहार' का प्रकाशन हुआ । इसमें भावुकता की प्रधानता है । प्रकृति के सौंदर्यमय दृश्यों में मधुर व्यक्तित्व का आभास पाकर वे उस रहस्य के प्रति प्रणयानुभूति व्यक्त करती हैं । इसमें विस्मय और जिज्ञासा प्रबल है । आत्म-समर्पण की भावना, रहस्य सत्ता के प्रति विरह और मिलन की आकांक्षा यहीं से प्रारंभ होती है । यह अनुभूति दार्शनिक सिद्धांत का आधार लेकर बाद में प्रकट होती है । सन् 1932 में "रश्मि" का प्रकाशन हुआ । "रश्मि" में कवयित्री का आह्लाद और जिज्ञासा वृत्ति का विकास हुआ है । अनुभूति एवं चिन्तन भी अधिक स्पष्ट है । कवयित्री का मन प्रकृति के

विराट सौंदर्य में अत्यधिक मुग्ध हो जाता है । इसमें वे जीवन, मृत्यु और संसार की विषमताओं पर अधिक गंभीरता से विचार प्रकट करती हैं ।

सन् 1934 में "नीरजा" का प्रकाशन हुआ । यह अनुभूति की सघनता और अभिव्यक्ति की सुन्दरता की दृष्टि से उत्कृष्ट कृति है । "नीरजा" में विरह और व्यथा के दर्शन होते हैं । इसमें भारतीय संस्कृति से अभिभूत कवयित्री के नारी-संकल्प का आभास मिलता है । भारतीय-नारी अपना संपूर्ण जीवन पति या प्रियतम की भलाई के लिए अर्पित कर देती है । यहाँ कवयित्री की आत्मा परम-प्रिय से मिलने के लिए आतुर है ।

"सांध्यगीत" सन् 1934 में प्रकाशित काव्यसंग्रह है । "नीहार", "रश्मि", "नीरजा" की सभी विशेषताएँ सांध्यगीत में पायी जाती है । इसमें उनकी आस्था दर्शन का रूप ग्रहण करती है । "सांध्यगीत" की मानसिक अवस्था संध्या के समान शान्त और गंभीर है । इसमें कवयित्री की आत्मनिष्ठ भावना अत्यन्त प्रखर और आध्यात्मिक स्तर तक उठती है । अब उन्हें भावों की तीव्रता की अपेक्षा दार्शनिकता अधिक प्रिय है ।

"दीपशिखा" महादेवी का पाँचवाँ काव्य संकलन है । सन् 1942 में इसका प्रकाशन हुआ । "दीपशिखा" महादेवी के काव्य जीवन की

चरम उपलब्धि है । इसमें उनकी आस्था और भी दृढ़ हो जाती है । दीप उनके अन्दर की विविध भावनाओं से समायोजित होकर सारी कविता में आकर्षण का केन्द्र बन जाता है । दीपक कवयित्री की मानसिक दृढ़ता और आत्मसमर्पण की भावना को सूचित करता है । दीप जितना जलता है उतनी उज्वलता प्राप्त कर लता है । साधिका का लक्ष्य भी वही है ।

"यामा" में "नीहार", "रश्मि", "नीरजा" एवं "सांध्यगीत" को चार यामों के रूप में चित्रों सहित प्रस्तुत करता है । "आधुनिक कवि" और "संधिनी" में आप की रुचि के अनुकूल कुछ कविताएँ संग्रहित है । "सप्तपर्णा" संस्कृत कवियों की प्रतिनिधि रचनाओं का अनुवाद है । "बंगदर्शन" और "हिमालय" दो संकलित काव्य रचनाएँ हैं , जिनमें कवयित्री का सामाजिक एवं राष्ट्रीय रूप निखर उठता है । रहस्यवाद और वेदना-भाव महादेवी के काव्य के मूल स्वर हैं । उनमें काव्यकला, चित्रकला और संगीतकला का सुन्दर समावेश पाया जाता है ।

गद्यकार महादेवी वर्मा

"दीपशिखा" के रचनाकाल से ही महादेवी गद्य की ओर उन्मुख हो गयी । उनके गद्य में विचार की प्रौढ़ता, व्यवस्था तथा गांभीर्य है । महादेवी ने स्वयं स्वीकार किया है "विचारों के क्षणों में मुझे गद्य लिखना ही

अच्छा लगता रहा है, क्योंकि उसमें अपनी अनुभूति ही नहीं बाह्य परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए भी पर्याप्त अवकाश रहता है ।'[1]

महादेवी के गद्य में दीन-दुखियों के प्रति सहानुभूति व्यक्त होती है और उसमें समाज के शोषण और पीडन के प्रति विद्रोह भी है । उनका गद्य समाज-केन्द्रित है । गद्य में वे सदा दूसरों के लिए ही सोचने में व्यस्त रहती हैं और अपने सहानुभूति-पूर्ण हृदय से इस धरा के दुःखी व्यक्तियों के आँसू पोंछती दिखाई देती हैं । गद्यकार के रूप में महादेवी को प्रतिष्ठित करने का श्रेय उनके संस्मरण समन्वित रेखाचित्रों को है ।

महादेवी की गद्य कृतियाँ है "अतीत के चलचित्र", "श्रृंखला की कडियाँ", "स्मृति की रेखाएँ", "पथ के साथी", क्षणदा, "साहित्यकार की आस्था" तथा अन्य निबंध, "संकल्पिता", "स्मारिका", "मेरा परिवार", "संभाषण", "संचयन" और "दृष्टिबोध" ।

अतीत के चलचित्र :

यह महादेवी की प्रथम गद्य कृति है । इसका प्रकाशन 1942

---

1. श्रृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा - अपनी बात

में हुआ । इसमें ग्यारह रेखाचित्र है । इनमें वर्णित घटनाएँ महादेवी के करुणार्द्र नेत्रों द्वारा देखी हुई है । इनमें दीन, हीन, पीड़ित मानवों की मार्मिक कथायें है जो पाठकों के हृदय को करुणा से प्लावित कर देती हैं ।

शृंखला की कड़ियाँ :

इसका प्रकाशन सन् 1942 ई. में हुआ । इसके अधिकांश निबन्ध नारी समस्याओं से संबंधित है । यह पुस्तक "जन्म से अभिशप्त, जीवन से सन्तप्त किन्तु अक्षय वात्सल्य वरदानमयी भारतीय नारी को भेंट हैं"। भारतीय नारी की वेदना का आभास पाकर पाठक अश्रुसिक्त हो उठते हैं ।

स्मृति की रेखाएँ :

यह महादेवी का तीसरा गद्य संग्रह है जिसका प्रकाशन सन् 1943 ई. में हुआ । "अतीत के चलचित्र" की तरह इसमें भी लेखिका के संस्मरणात्मक रेखाचित्र अंकित है । ये हमारे हृदय में चिर स्मृति छोड देने में सफल हुए है । इन में महादेवी जिन पात्रों का परिचित्रांकन करती है वे भारतीय समाज के कुरूप चिह्न हैं । दलित और पिछड़ा हुआ मानकर जिन व्यक्तियों की उपेक्षा हम करते हैं, महादेवी अपनी सहानुभूति के सहारे उनका अन्तरंग अध्ययन कर "स्मृति की रेखाओं" में समेट लेती हैं ।

पथ के साथी

इसका प्रकाशन सन् 1956 ई. में हुआ । इसमें सात साहित्यकारों से संबंधित संस्मरणात्मक रेखाचित्र है । स्मरण के आधार पर महादेवी उनकी आकृति, विशेषता, वेशभूषा, आचार-विचार तथा साहित्यिक दृष्टि का विश्लेषण करती है ।

क्षणदा

"क्षणदा" महादेवी के आलोचनात्मक निबंधों का संग्रह है । इसका प्रकाशन सन् 1956 ई. में हुआ । "क्षणदा" के संबंध में महादेवी लिखती है "क्षणदा" में मेरे कुछ चिन्तन का क्षण एकत्र है । इनमें न तर्क की प्रक्रिया है और न किसी जटिल समस्या को सुलझाने के निमित्त प्रस्तुत समाधान ।"[1]

साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध

इसका प्रकाशन सन् 1962 ई. में हुआ । इसमें कुल मिलाकर आठ निबंध है । 'साहित्यकार की आस्था' को छोडकर शेष निबंध इसके पूर्व ही "महादेवी का विवेचनात्मक गद्य" में प्रकाशित हो चुके थें । इन निबंधों में महादेवी जी के आलोचक रूप की झांकी मिलती है ।

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - अपनी बात

संकल्पिता

"संकल्पिता" का प्रकाशन सन् 1965 ई. में हुआ । इसके सारे निबंध महादेवी के गहन-चिन्तन - मनन का परिणाम है । पूर्ववर्ती कृतियों की तुलना में इसमें भावुकता के स्थान पर वैचारिकता की प्रमुखता है । लेखिका कहती है "संकल्पिता में मेरे कुछ चिन्तन के क्षण संकलित है ।"[1]

स्मारिका

इसका प्रकाशन सन् 1971 ई. में हुआ । इसके अन्तर्गत महादेवी चार महापुरुषों का जीवन्त स्मृति-चित्र अंकित करके उनके व्यक्तित्व का उज्वल वर्णन करती हैं । यह लेखिका के भाव प्रवरण और कुशल गद्य-शिल्प का सुन्दर उदाहरण है ।

मेरा परिवार

यह पशु-पक्षियों से संबंधित रचना है । इसका प्रकाशन सन् 1972 ई. में हुआ । लेखिका कहती है "स्मृति यात्रा में पशु-पक्षी ही मेरे प्रथम संगी रहे हैं ।"[2] लेखिका "मेरा परिवार" में पशुपक्षियों की साधारण क्रियाओं को साहित्यिक रूप प्रदान करती हैं ।

---

1. संकल्पिता - महादेवी वर्मा - दो शब्द
2. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - भूमिका से

संभाषण

यह महादेवी जी के भाषणों का संकलन है । इसका प्रकाशन सन् 1975 ई. में हुआ । इस कृति में चौदह निबंध है जिनमें कुछ पूर्ववर्ती गद्य रचनाओं में प्रकाशित हो चुके थे । इन निबंधों में लेखिका का मौलिक चिन्तन स्पष्ट है ।

संचयन

इसका प्रकाशन सन् 1976 ई. में हुआ । इनमें अधिकांश निबंध पूर्व के संकलनों के हैं ।

दृष्टिबोध

इसका प्रकाशन सन् 1980 ई. में हुआ । इसमें विभिन्न काव्य संग्रहों की भूमिकायें और प्रस्तावनायें संकलित है । इन भूमिकाओं में वे साहित्यिक विषयों के संबंध में अपने गंभीर विचार प्रस्तुत करती हैं ।

चित्रकर्त्री

बचपन से ही महादेवी की चित्रकला में विशेष अभिरुचि थी । उन्होंने अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति चित्र के माध्यम से भी स्पष्ट किया है । उनकी प्रतिभा में काव्य और चित्रकला का अपूर्व समन्वय पाया जाता है । यह उनके काव्य संग्रहों में प्रमाणित होता है ।

कुशल वक्ता

महादेवी कवयित्री, गद्य लेखिका और चित्रकर्त्री के अतिरिक्त कुशल वक्ता भी हैं । उनके भाषण ओजस्वी कलात्मक और अत्यन्त प्रभावी है । उनमें अद्भुत प्रवाह है । अपने विद्यार्थी-जीवन में भाषण और वादविवाद की प्रतियोगिता में भाग लेकरवेअपने भाषण-कला से दूसरों को मंत्रमुग्ध करा लेती थीं । विविध समारोहों और विशिष्ट अन्य अवसरों पर साहित्य, संस्कृति, शिक्षा, राष्ट्र, नारी आदि विषयों पर उनके उज्ज्वल भाषण, आदर्श वक्ता को प्रमाणित करने वाले हैं ।

पुरस्कार और सम्मान

महादेवी जी प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधान अध्यापिका के रूप में काम करती थी । सन् 1934 ई. में आपको "नीरजा" पर सेकसरिया पारितोषिक मिला था । सन् 1943 ई. में द्विवेदी पदक "स्मृति की रेखाएँ" पर दिया गया । सन् 1944 ई. में 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' द्वारा आपको मंगला प्रसाद पारितोषिक "यामा" पर प्रदान किया गया । सन् 1956 ई. में भारत सरकार ने आपको "पद्मभूषण" की उपाधि से भी सम्मानित किया है । 'भारती परिषद् प्रयाग' की ओर से कविवर पन्त द्वारा निवास पर "बृहद् अभिनन्दन ग्रंथ" सन् 1964 ई. में प्रकाशित हुआ । उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा एक लाख रुपये के सर्वोच्च पुरस्कार भारत भारती से सम्मानित सन् 1982 में हु सन् 1983 ई. में व "ज्ञान पीठ पुरस्कार" से विभूषित हुई । सन् 1987 सितंबर 11 को आप का स्वर्गवास हुआ ।

दूसरा अध्याय

महादेवी के संस्मरण और रेखाचित्र

महादेवी के संस्मरण और रेखाचित्र

बीसवीं शताब्दी में जीवन के अन्य सभी क्षेत्रों के समान साहित्यिक क्षेत्र में भी बहुविध विकास हुआ । भावुक कलाकार अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए नई साहित्य विधाओं, प्रणालियों और प्रसंगों की खोज करता रहा । अंग्रेज़ी भाषा और साहित्य के प्रभाव से हिन्दी साहित्य जगत् में अनेक नूतन प्रवृत्तियों का विकास हुआ । कई नई साहित्यिक विधायें प्रकाश में आयीं । इनमें रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, आत्मकथा आदि उल्लेखनीय है । इन सब का स्वरूप मिलता-जुलता है और आपस में इतना निकट है कि गहराई में पहुँचे बिना इनका अन्तर स्पष्ट नहीं किया जा सकता ।

रेखाचित्र

जिस प्रकार चित्रकार रेखाओं और रंगों के द्वारा अपने अभिप्रेत भावों की अभिव्यक्ति सरलता से कर देता है उसी प्रकार रेखाचित्रकार भी कुछ चुने हुए शब्दों या रेखाओं द्वारा अपनी भावना की वस्तु, व्यक्ति, पदार्थ या जीव के चित्र प्रस्तुत कर देता है । शब्दों से बनाये हुए ऐसे सुगठित चित्र को शब्द-चित्र भी कहते हैं । अंग्रेज़ी में इसे स्केच कहते हैं । "यह स्केच किसी घटना, स्थिति अथवा चरित्र का वर्णनात्मक विवरण है ।"[1] कहानी,

---

1. Sketch : Literary sketches may be narrative (short-shotts) but are more often brief discriptions of an incident a situation of a character.
A Hand Book of literary Terms. Comp.H.L.Yellav, Angus and Robertson London 1955. P.138

नाटक, निबंध जैसी अन्य गद्य विधाओं की तुलना में अल्प विकसित विधा है "रेखाचित्र", परन्तु उसमें इन सभी विधाओं की यत्किंचित् विशेषताएँ पायी जाती है जिसमें किसी व्यक्ति के दिलचस्प चरित्र को उभारा जाता है ।

रेखाचित्र आकार में लघु होने पर भी अपनी विशिष्टताओं के कारण उसमें किसी व्यक्ति, घटना को अत्यधिक मर्मस्पर्शी ढंग से चित्रण हो सकता है । यह चित्रकला और साहित्य के सुन्दर समन्वय से उद्भूत एक अभिनव कला रूप है ।

चित्रात्मकता रेखाचित्र की प्रमुख विशेषता है जिससे किसी का संपूर्ण चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है । रेखाचित्र में किसी वस्तु, मनुष्य या स्थान के बाह्य रूप के साथ उसकी आन्तरिक सुन्दरता, कुरूपता, संपन्नता, विषमता का स्पष्ट आकलन होता है ।

रेखाचित्र में जीवन की वास्तविकता का चित्रण होता है । वैयक्तिकता रेखाचित्र का एक प्रमुख तत्व है । रेखाचित्र संवेदनशील कलाकार के मनःपटल पर अंकित विषयों का प्रभावी चित्र प्रस्तुत करता है । रेखाचित्र का विषय लेखक के जीवन से संबंधित होता है । यथार्थता रेखाचित्र में अवश्य होती है । यथार्थ की ठोस भूमि पर आधारित होने के कारण रेखाचित्र को साहित्य में खास महत्व है । भाव को जगानेवाला वर्णन या चित्रण

रेखाचित्र में होना आवश्यक है । रेखाचित्र के चित्र ऐसे हों जो पाठक के हृदय में भाव उत्पन्न करने में सफल हो । एक सच्चे संवेदनशील लेखक ही तीव्र भावना को उत्पन्न करने में सफल होगा । रेखाचित्र में लेखक की सहानुभूति और स्नेह भाव विशेष पात्रों के प्रति होता है । सामान्यत: रेखाचित्र व्यक्ति विशेष को लेकर ही लिखा जाता है ।

रेखाचित्र में भाषा और शैली का विशेष स्थान है । रेखा-चित्रकार चुने हुए शब्दों में कलात्मक ढंग से व्यक्ति का पूरा चित्र पाठकों के मन:पटल पर अंकित कर सकता है । इसलिए रेखाचित्रकार को उसकी भाषा और शैली की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए । उसकी भाषा परिनिष्ठित, सुसंस्कृत एवं परिमार्जित होती है । शैली भाषा के अनुकूल, कभी वर्णनात्मक, कभी चित्रात्मक और कभी भावात्मक होना आवश्यक है । वस्तुत: रेखाचित्र की महत्ता रेखांकन में है इतिवृत्त में नहीं है ।

संस्मरण

संस्मरण की सब से प्रमुख विशेषता स्मृति है । स्मृति करने के कार्य के फल को संस्मरण कहते हैं । संस्मरण स्मृति पर आधारित आत्मकथा का रूप है । यह अंग्रेज़ी "मेमायर्स" का समानार्थक शब्द है ।[1]

---

1. "The term 'memoir' is used some what losely in modern English as synonymous with both biography and auto-biograp Strictly speaking, it should be applied to works which ar a record of the author's memories" - European Encyclopaedi Vol.I P.845

संस्मरण में लेखक स्मृति के बल पर अपने जीवन से संबंधित या अपनी जान-पहचान की किसी अन्य व्यक्ति के जीवन का रोचक वर्णन करते हैं । संस्मरण कोई महान या सामान्य किसी भी मानव के बारे में हो सकता है जो लेखक के स्मरण योग्य प्राप्त है । उस व्यक्ति के साथ लेखक के निजी हृदय की भावनाओं और अनुभूतियों का भी चित्रण होता है । "अनुभूति को कलात्मक अभिव्यक्ति कला के माध्यम से संस्मरण होता है । संस्मरण यथार्थ होता है । इसमें संस्मरणकार के वे क्षण होते हैं, जो उसने स्वयं जिये हैं ।"[1] संस्मरण में स्मृति, अनुभूति और संस्मरणकार के व्यक्तित्व की प्रधानता होती है । वह व्यक्ति के समूचे व्यक्तित्व को भी प्रभावित करता है ।

इस प्रकार संस्मरण का अर्थ यह है कि आपबीती या अनुभूत बातों का वर्णन । किसी व्यक्ति के संबंध में रमणीय घटनाएँ तथा उनका उल्लेख तथ्यात्मक पद्धति में किया जाता है । व्यक्तिगत संपर्क के आधार पर किसी चिर परिचित व्यक्ति की चारित्रिक, विशिष्टताओं का मार्मिक तरीके से शब्द-बद्ध कर देना ही संस्मरण है । अतः संस्मरण यथार्थ जीवन से संबद्ध शिक्षित, रोचक, चित्रात्मक, भावुकतापूर्ण लेखक के व्यक्तित्व से युक्त, प्रभावपूर्ण ढंग से लिखित एक स्वतंत्र विधा है ।

रेखाचित्र और संस्मरण में साम्य-वैषम्य

अन्य साहित्यिक विधाओं की अपेक्षा संस्मरण और रेखाचित्र

---

१. साहित्य सन्देश - अगस्त 1966 - पृ. 26

में साम्य अधिक है । रेखाचित्र और संस्मरण में संवेदना, कल्पना, लेखक की अनुभूति व्यक्ति का चित्रण और आत्मनिष्ठता में साम्य है । दोनों में वैषम्य इसमें है कि रेखाचित्र में चित्रात्मकता होती है । संस्मरण में संस्मरण्य के रूपाकार, भावभंगिमा, वेशभूषा आदि को प्रस्तुत किया जाता है लेकिन उसका उद्देश्य संस्मरण्य की महत्ता को उजागर करना होता है । रेखाचित्र में रेखाचित्रकार का ध्येय चुने हुए शब्दों द्वारा बाह्य रूप-रेखा का शब्दांकन मात्र होता है । लेकिन उस रूपांकन से ही चित्रित व्यक्ति, वस्तु की आन्तरिक झाँकी उद्घाटित होती है ।

संस्मरण में भावना अधिक होती है । संस्मरण में रेखाचित्र की अपेक्षा देश काल का वर्णन अधिक मात्रा में होता है । संस्मरण अधिक आत्मनिष्ठ होता है । तटस्थता रेखाचित्र में होती है । संस्मरण में संस्मरणकार का जीवन दर्शन प्रतिफलित होता है । जब रेखाचित्र की शैली चित्रात्मक होती है तब संस्मरण की शैली प्रसंगानुकूल कोई भी हो सकती है । रेखाचित्र में लेखक के शब्दाधिकार की प्रधानता होती है । संस्मरण में विवरण की प्रधानता है । रेखाचित्र और संस्मरण में किसी व्यक्ति, वस्तु, घटना आदि का मानसिक प्रत्यक्षीकरण होता है जो कुछ विशेष रेखाओं से संभव होता है । किन्तु संस्मरण अतीत का ही हो सकता है और रेखाचित्र वर्तमान से भी संबद्ध हो सकता है ।

महादेवी के संस्मरणात्मक रेखाचित्र

महादेवी के गद्य-साहित्य में संस्मरण और रेखाचित्र को महत्वपूर्ण स्थान है । इन साहित्य-विधाओं के बारे में "अतीत के चलचित्र" की भूमिका में वे अपने विचार व्यक्त करती हैं कि "संस्मरण तथा रेखाचित्र दोनों में व्यक्त समानता और अव्यक्त अन्तर रहता है ।"[1] दोनों में रेखाओं द्वारा अनुभूति की अभिव्यक्ति होती है । उनके संस्मरणों में रेखाचित्र भी सम्मिश्रित होते हैं । इसका मुख्य कारण लेखिका का चित्रकर्त्री होना है । उनको रेखांकन का विशेष प्रेम है । उनकी राय में प्रत्यक्ष या काल्पनिक किसी वस्तु या व्यक्ति को कुछ रेखाओं में अंकित करना उनके लिए स्वाभाविक हो जाता है । "स्मृति की रेखाएँ " में ऐसा रेखांकन हुआ है । "अतीत के चलचित्र" और "स्मृति की रेखाएँ" दोनों के स्मृति चित्र समय की दूरी से धूमिल नहीं हो सके । वे स्वीकार करती हैं "संस्मरण और रेखाचित्रों में विभाजक रेखा इतनी सूक्ष्म रहती है कि एक का दूसरे में समाहित हो जाना स्वाभाविक हो जाता है ।"[2] इनमें अंकित जीवनानुभवों को वे कल्पना का परिधान नहीं पहनाती । वे केवल पाठकों के मनोरंजन के लिए इन अनुभवों की सृष्टि नहीं करतीं । उनके अनुसार "यदि इन अधूरी रेखाओं और धुँधले रंगों की समष्टि में किसी को अपनी छाया की रेखा भी मिल सके तो यह सफल है ।"[3] इनमें लेखिका स्मृति की अमिट रेखाओं को अंकन करने का प्रयत्न करती हैं । पात्रों को उसके गुणों - अवगुणों के साथ अवतरित करके लेखिका अपने व्यक्तित्व

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - अपनी बात - पृ. 5
2. वही - पृ. 5
3. वही - पृ. 5

की ओर भी इशारा करती हैं । "इन चित्रों में मेरा जीवन भी आ गया है । यह स्वाभाविक भी था । अंधेरे की वस्तुओं को हम अपने प्रकाश की धुँधली या उजली परिधि में लाकर ही देख पाते हैं, उसके बाहर तो वे अनन्त अंधकार के अंश है । मेरे जीवन की परिधि के भीतर खड़े होकर चरित्र जैसा परिचय दे पाते हैं वह बाहर रूपान्तरित हो जायेगा ।"[1]

"पथ के साथी" में लेखिका कहती है "मैं ने साहस तो किया है, पर ऐसे संस्मरण के लिए आवश्यक निर्लिप्तता या असंगता मेरे लिए संभव नहीं ।"[2] पथ के इन साथियों के साथ वे अपने व्यक्तित्व को भी जोडती है और कह देती है , "अपने अग्रजों और सहयोगियों के संबंध में अपने आप को दूर रखकर कुछ कहना नहीं होता ।"[3]

महादेवी की रचनाओं में वे अपने संपर्क में आये साधारण लोगों के वास्तविक जीवन और महान व्यक्तियों की पवित्र स्मृति का संवेदनात्मक चित्रण करती हैं । "शैशव की स्मृतियों में एक विचित्रता है । जब हमारी भाव-प्रवणता गंभीर और प्रशान्त होती है, तब अतीत की रेखायें कुहरे में से स्पष्ट होती हुई वस्तुओं के समान अनायास ही स्पष्ट से स्पष्टतर होने लगती है ।"[4] उसके संस्मरण और रेखाचित्रों के सभी पात्र लेखिका के

---

1. अतीत के चलचित्र - अपनी बात
2. पथ के साथी - दो शब्द
3. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - दो शब्द
4. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - अपनी बात - पृ. 9

जीवन के अभिन्न अंग है । उनमें देशकाल का वर्णन भी अधिक मात्रा में उपलब्ध है । बीच में लेखिका के अपने जीवन की कथा भी जुडती है । इस प्रकार वे चित्रात्मक हैं और विवरणात्मक भी । कहीं अलंकरण और गांभीर्य है तो कहीं मनोरंजक वैयक्तिक विशेषताएँ भी । उनके सभी चित्र अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण लेखनी से चित्रित हुए हैं । वास्तविकता से पूर्ण है । "स्मृति की रेखाएँ" में लेखिका का निरीक्षण इतना सूक्ष्म और संवेदना का रंग इतना गहरा और उज्ज्वल है कि स्मृति में वैसी रेखाएँ मात्र नहीं थी, कागज़ पर उतरकर उनसे करुणा और व्यंग्य-हास्य की छाया-प्रकाश में हँसते-खेलते हैं । उच्चतम मानवीय तत्वों से अनुप्राणित स्पन्दनशील चित्र बन गया है ।

महादेवी के इन संस्मरणों और रेखाचित्रों की महत्त्वपूर्ण विशेषता मानव के भावों को जागृत करने में है । उसकी वर्णन शैली इतनी मार्मिक होती है कि पढ़ते ही पाठक का हृदय उस भाव से भर जाता है जिसे लेखिका व्यक्त करती हैं । ये वे चित्र है जो भुलाया नहीं भूलते और जो उसकी मानसिक चेतना के अभिन्न अंग बन चुके हैं ।

महादेवी के संस्मरणों और रेखाचित्रों की उपर्युक्त विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उन्हें संस्मरणात्मक रेखाचित्र मानना अधिक उचित है । इस प्रकार महादेवी के रेखाचित्र पूर्णतः रेखाचित्र नहीं क्योंकि इनकी आधार भूमि संस्मरणात्मक है । इन्हें पूर्णतः संस्मरण भी नहीं कहा जा सकता

क्योंकि इन में रेखांकन भी है । अतः ये रेखाचित्र है और संस्मरण भी । इस कोटि में महादेवी वर्मा की पाँच रचनाएँ हैं "अतीत के चलचित्र", "स्मृति की रेखाएँ", "पथ के साथी", "मेरा परिवार" और "स्मारिका" ।

महादेवी के संस्मरणात्मक रेखाचित्रों को प्रतिपाद्य विषय के आधार पर चार कोटियों में रख सकते हैं ।

1. नारी संबंधी
2. पुरुष संबंधी
3. युग के महापुरुष और प्रतिष्ठित साहित्यकार संबंधी ।
4. पशु-पक्षी संबंधी ।

नारी संबंधी

नारी जीवन के विभिन्न पहलुओं को केन्द्रित करके प्राचीन काल से ही काफी रचनायें हुई हैं । पौराणिक कृतियों में नारी, देवी या शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित थी । लेकिन आधुनिक काल में नारी विषयक दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ । आज नारी के मानवीय महत्व की ओर साहित्यकार अधिक उन्मुख लक्षित होता है ।

महादेवी नारी को सारी प्राचीन रूढ़ियों और दुविधाओं के बन्धनों को तोडकर बाहर लाना चाहती हैं । मानव मन की वेदना और

गहराइयों तक पहुँचने और अपनी संवेदनशीलता अभिव्यक्त करने की उनकी अपूर्व क्षमता है । उनके अनुसार नारी मानवी है और उसका अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व है । इसी की स्थापना करना उनका मुख्य उद्देश्य है ।

"अतीत के चलचित्र" और "स्मृति की रेखाएँ" में महादेवी युग-युग से समाज द्वारा पीडित, तिरस्कृत और उपेक्षित नारी-जीवन को प्रस्तुत करती हैं । भारतीय नारी सामाजिक वैषम्य से अपमानित, प्रताडित, अधिकारों से वंचित और व्यक्तित्व हीन प्राणी है । नारी के बेटी, बहन, पत्नी, बाल विधवा, माँ - विमाता जैसे विभिन्न रूपों से साक्षात्कार इन रचनाओं में होता है । इनमें से किसी भी रूप में हो, वे नारी को सुखी नहीं देखती हैं । समाज की उसी अर्द्धांगिनी की दयनीय दशा का यथा तथ्य चित्रण उनके रेखाचित्रों में उपलब्ध है । परित्यक्ता सबिया, पुनर्विवाहिता बिट्टो, अविवाहित माँ, वेश्यापुत्री, बाल विधवा मारवाडिन, कुम्हार की पत्नी रधिया, प्रपीडित नारी, तथा पहाडिन लछमा इसके उत्तम उदाहरण हैं । ये सभी नारियाँ महादेवी के जीवन के अभिन्न अंग हैं । उनका लेखिका के जीवन से सीधा संबंध था और उनके दुःख दारिद्र्यतथा अन्य कठिनाइयों और समस्याओं से लेखिका खूब परिचित थी । अतः उनकी जीवन कथा का यथातथ्य चित्रांकन करके तत्संबंधी सामाजिक समस्याओं पर वे प्रकाश डालती हैं ।

सेठ की पुत्रवधु

"अतीत के चलचित्र"की सेठ की पुत्रवधु, भाभी, बिट्टो, बाल विधवायें हैं । सेठ की पुत्रवधु असमय में विधवा हुई अठारह वर्षीय

पुकारती है । उसके जीवन की विडम्बनाओं का वर्णन "अतीत के चलचित्र" के दूसरे रेखाचित्र में हुआ है । वह परिवार के अत्याचार और उपेक्षापूर्ण वातावरण में बिना बोले ही घुट-घुटकर अपना जीवन बिताती है । उसकी आँखों में अपने जीवन का तमाम दुःख घनीभूत हुआ है । वह एक किशोरी बालिका है जो बिना संगी-साथी, बिना किसी प्रकार के आमोद-प्रमोद के मानों निरन्तर वृद्धा होने की साधना में लीन है । घर का सारा काम-काज वह स्वयं करती है । जैसे "ससुर के लिए पानी खींचना, घर के ढेर सारे कपड़ों को धोना, बर्तन साफ करना" आदि ।

शादी के बाद एक ही साल के अन्तर वह विधवा बन जाती है । तब से दूसरों से मिलने-जुलने के निषेध से वह उसी घर में बन्द रहती है । उस नादान लड़की की वेदना और करुणापूर्ण कहानी के वर्णन के दौरान लेखिका उसका रेखाचित्र खींचती है । "घर के सब उजले मैले, सहज कठिन कामों के कारण, मलिन रेखाजाल से गुँथी और अपनी रोष लाली को कहीं छिपा रखने का प्रयत्न करती हुई कहीं कोमल, कहीं कठोर हथेलियाँ, काली रेखाओं में जड़े कान्तिहीन नखों से कुछ भारी जान पड़नेवाली पतली उँगलियाँ, हाथों का बोझ संभालने में भी असमर्थ सी दुर्बल, रूखी और गौर बाँहें और मारवाड़ी लहंगे के भारी घेर से थकित से एक सहज-सुकुमारता का आभास देते हुए, कुछ लंबी उँगलियों वाले दो छोटे छोटे पैर, जिनकी एड़ियों में आँगन की मिट्टी की रेखा मटमैले महावर-सी लगती थी, भुलए भी कैसे जा सकते हैं ।"[1]

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 24

विधवा होने के कारण बेचारी को दिन में एक ही बार भोजन मिलता है । क्योंकि दूसरी बार भोजन करने का अर्थ इस समाज में यह होता है कि विधवा का आत्मसंयम ठीक नहीं है । प्राय: निराहार और निरंतर मिताहार से वह दुर्बल होती जाती है । रंगीन कपडा पहनना उसे वर्जित है । लेकिन एक दिन लेखिका अपने बालपन के साथ उस पर रंगीन ओढनी डाल देती है तो वह सब कुछ भूलकर खिल खिलाकर हँस पडी । इस अनुचित व्यवहार के कारण घरवालों से उसे इतनी मार खानी पडती है कि वह बेसुध हो जाती है । परन्तु बहुत दिनों के बाद जब लेखिका का उससे मिलन होता है तब "उन बचपन भरी आँखों में विषाद का गाढ़ा रंग चढ चुका था और वे ओंठ जिन पर किसी दिन छिपी सी जान पडती थी । ऐसा काँपते थे मानों भीतर का क्रन्दन रोकने के प्रयास से थक गई हो । उस घटना से बालिका प्रौढ़ हो गई थी और युवती वृद्धा ।"[1]

अपने बाल्य सहज चंचलता को, चाहों को, दबाकर अपने घर में एक वृद्धा की भाँति जीवन बितानेवाली बाल विधवा का यह कारुणिक शब्दचित्र है ।

भाभी

"अतीत के चलचित्र" की दूसरी बालविधवा ग्यारह वर्ष की आयु में वैधव्य का भार झेलते हुए जीनेवाली है । मातृविहीन यह अभागी

---

1. "अतीत के चलचित्र"- महादेवी वर्मा - पृ.31

बालिका अकेली अपने दादा के पास रहती थी । उसे किसी स्वार्थी पुरुष ने फँसा लिया और उसका एक बेटा पैदा हुआ । माँ के अतिरिक्त सब उस बालक से घृणा करते हैं । घर के उस वातावरण से मुक्ति पाने के लिए वह नौकरी की खोज में महादेवी के पास पहुँचती है ।

उस बाल विधवा का चित्र महादेवी यों खींचते हुए कहती है कि ऐसी करुण दशा इसके पहले उन्होंने नहीं देखी है । "खाट पर बिछी मैली दरी, सहस्रों सिकुडन भरी मलिन चादर और तेल के कई धब्बेवाले तकिये के साथ मैं ने जिस दयनीय मूर्ति से साक्षात् किया, उसका ठीक चित्र दे सकना संभव नहीं है । ..... सूखे ओंठवाले, साँवले पर रक्तहीनता से पीले मुख में आँखें ऐसे जल रही थीं जैसे तेलहीन दीपक की बत्ती ।"[1]

अपने बच्चे से पल भर के लिए भी अलग रहना उसे असह्य था । लेकिन समाज की दृष्टि में वह अनाथ है, पतित है उसे जीने का अधिकार तक नहीं है । स्त्री अपने बच्चे को हृदय से लगाकर निर्भर रहती है, आश्वासन पाती है । वह अपनी संतान की रक्षा के समय उग्र चण्डी का रूप भी ग्रहण करती है । "इसी से कदाचित् लोलुप संसार उसे अपने चक्रव्यूह में घेरकर बाणों से चलनी करने के लिए पहले इसी कवच को छीनने का विधान कर देता है ।"[2] लेखिका की राय में यदि ये माताएँ अपने शिशु को गोद में

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 60
2. वही - पृ. 61

लेकर साहस से यह कह सके कि "बर्बरो, तुमने हमारा नारीत्व, पत्नीत्व सब ले लिया, पर हम अपना मातृत्व किसी प्रकार न देंगी ।" तो इनकी समस्याएँ तुरन्त सुलझ जायेंगी । नारी में वीरता है, साहस है, उसका त्याग भरा मातृत्व सब से श्रेष्ठ है । समाज को नारी के इन गुणों को स्वीकार करना है । "युगों से पुरुष स्त्री को उसकी शक्ति के लिए नहीं, सहन शक्ति के लिए ही दण्ड देता आ रहा है ।"[1]

लेखिका के पैरों पडकर वह अभागिन माँगती है दिन में बस एक बार दो रूखी-सूखी रोटियाँ दे दे । कपडे वह लेखिका के उतारे ही पहन लेगी और कुछ नहीं देना है । फिर बच्चा जब बडा हो जायेगा, तब लेखिका के बतायें काम करके वह जीवन बितायेगी । पुरुष के अत्याचारों से नारी को कितनी यातनायें सहनी पडती है इसके लिए उत्तम उदाहरण है प्रस्तुत बाल-विधवा का जीवन ।

(बिट्टो)

पाँचवाँ रेखाचित्र बाल विधवा बिट्टो का कारुणिक चित्र है । तीन भाईयों की अकेली बहन बिट्टो का बचपन सुखमय वातावरण में बीता था । उसकी शादी छोटी आयु में ही हुई थी । लेकिन विधाता ने उसका भाग्य छीन लिया । वह विधवा बन गयी । ससुराल वाले इसके लिए

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 62

उस अभागी को दोषी समझकर उसका तिरस्कार करते हैं । लेकिन माँ-बाप की दुलारी बेटी होने के कारण उसे अपने घर में किसी प्रकार की कमी महसूस नहीं होती । मगर माँ-बाप के चल बसने पर घर में उस बेचारी का अस्तित्व केवल एक नौकरानी का सा हो जाता है । घर का वातावरण बदलने पर शारीरिक और मानसिक स्थिति शिथिल हो जाती है । घरवालों को वह बोझ बन जाती है । वे किसी न किसी प्रकार उसे अलग रखना चाहते हैं । एक दिन उसकी भाभी ने अपने पति से कहा - "अब तो विधवा विवाह होने लगे हैं । बेचारी बिट्टो का भी विवाह कर दिया जाय तो कैसा हो ।"[1] भाई ने बहिन की इच्छा पर सन्देह प्रकट किया तो भाभी ने बताया कि "ऐसी इच्छा तो कोई निर्लज्ज लडकी भी नहीं प्रकट करती ।" वस्तुत: वह दूसरे वैवाहिक जीवन की कल्पना तक नहीं कर सकती थी । अत: उसका खुला विरोध करती है । लेकिन उसकी वेदना को समझनेवाला कोई नहीं । ज़बरदस्ती से उसकी शादी 54 वर्ष के बाबा के साथ कराते हैं । इस सामाजिक विडंबना पर महादेवी व्यंग्य करके कहती है "जिस समाज में 64 वर्ष के व्यक्ति भी 14 वर्ष की पत्नी चाहता है, वहाँ 32 वर्ष की बिट्टो के पुनर्विवाह की समस्या सुलझा लेना टेढ़ी खीर थी । उसके भाग्य से ही 150 वर्ष की पूर्णायु वाला कोई पुरुष न मिला और उसके जन्म-जन्मान्तर के अखण्ड-पुण्य फल से हमारे 54 वर्ष के बाबा ने उसके उद्धार का बीडा उठाया ।"[2]

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 53
2. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 53

चार वर्ष तक बिट्टो उस बाबा के साथ जीवन व्यतीत करती है । बूढा अन्तिम यात्रा की तैयारी में है । उनकी संपत्ति पर उसके दोनों बेटे अपना अधिकार जमा लेते हैं । बिट्टो के बारे में किसी की कोई चिन्ता नहीं । लेकिन वह अपना संयम नहीं छोडती, धीरज के साथ परिस्थिति का सामना करने के लिए उद्यत होती है । उसके सामने अब एकमात्र आश्रय उसका अपना उजडा घर है । लेकिन "वहाँ उसके आगमन से अपना असहयोग प्रदर्शित करने के लिए एक प्राणी भी नहीं स्वागतार्थ उपस्थित न था ।" पुरुषों के व्यवहारों पर महादेवी रूट हो जाती है । वह उन पर आक्रोश प्रकट करती हैं "पुरुष बेचारे की उग्र तपस्या और अखण्ड साधना स्त्री के द्वारा प्रायः भंग होती रही है, इसी से उसने इस मायाविनी जाति के स्वभाव की व्याख्या करने के लिए पाथेय रच डाले हैं ।"[1]

स्त्री-पुरुष के स्वभाव का विश्लेषण करके उनका विचार है "स्त्री जब किसी साधना को अपना स्वभाव और किसी सत्य को अपनी आत्मा बना लेती है, तब पुरुष उसके लिए न महत्त्व का विषय रह जाता है, न भय का कारण, इस सत्य को सत्य मान लेना पुरुष के लिए कभी संभव नहीं हो सका ।"[2]

इस प्रकार इन संस्मरण समन्वित रेखाचित्रों में लेखिका समाज में प्रचलित विधवा विवाह, वृद्ध विवाह, बाल विवाह का सही

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 53
2. वही

चित्रण करते हुए अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करती है ।

महादेवी के संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में कुछ ग्रामीण, अशिक्षित एवं जीवन से संघर्ष करनेवाली नारियाँ हैं, वे हैं - बिन्दा, सबिया, लछमा, भक्तिन, बिबिया और गुँगिया ।

बिन्दा :

"अतीत के चलचित्र" में तीसरा चित्र एक अबोध बालिका बिन्दा का है । माता के प्यार से वंचित बिन्दा विमाता के दुर्व्यवहार तथा अत्याचारों से अत्यन्त संत्रस्त है । नौकरानी से बढकर उसका घर में कोई स्थान नहीं । घर का सारा काम करने पर भी पूरी निन्दा और डाँट-फटकार से उसका दिन कटता रहता है ।

बिन्दा का स्वरूप वर्णन करते हुए लेखिका कहती है बिन्दा लेखिका से कुछ बडी ही रही होगी । "परन्तु उसका नाटापन देखकर ऐसा लगता था, मानों किसी ने ऊपर से दबाकर उसे कुछ छोटा कर दिया हो । दो पैसों में आनेवाली खँजडी के ऊपर चढी हुई, झिल्ली के समान पतले चर्म से मढे और भीतर की हरी-हरी नसों की झलक देनेवाले उसके दुबले हाथ पैर न जाने किस अज्ञात भय से अवसन्न रहते थे ।"[1]

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 36

बिन्दा की कहानी करुणा से भीगी हुई है । वह अपनी माँ को खुली पालकी में लेटकर जाते और नई अम्मा को बन्द पालकी में बैठकर आते देख चुकी थी । वह अपनी माँ को आकाश के तारों में खोजती रहती थी । उसका विश्वास था कि जिस अम्मा को ईश्वर बुला लेता है, वह तारा बनकर ऊपर से बच्चों को देखती है । इसलिए तारों भरी रात में ऊपर देखते हुए वह अपने दिल को दिलासा पहुँचाती है ।

बिन्दा की नई अम्मा का चित्र लेखिका खींचती है "वे अपनी गोरी, मोटी देह को रंगीन साड़ी से सजे कसे, चारपाई पर बैठकर फूले गाल और चिपटी सी नाक के दोनों ओर नीले काँच के बटन-सी चमकती हुई आँखों से युक्त मोहन को तेल मलती रहती थी । उनकी विशेष कारीगरी में सँवारी पाटियों के बीच में लाल स्याही की मोटी लकीर सा सिन्दूर उनींदी-सी आँखों में काले डोरे के समान लगनेवाला काजल, चमकीले कर्णफूल, गले की माला, नगदार रंग बिरंगी चूड़ियाँ और पुँधरूदार बिछुवा मुझे बहुत भाते थे, क्योंकि यह सब अलंकार उन्हें गुड़िया की समानता दे देते थे ।"[1]

बिन्दा की सौतेली माँ इतनी क्रूर है कि वह बिन्दा को अपराध का ही नहीं अपराध के अभाव का भी दण्ड देती है । एक दिन की बात है - चूल्हे पर दूध उफना जा रहा था । बिन्दा के नन्हें-नन्हें हाथों

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 34

उबलता दूध उतर लेगी पर वह गर्म बर्तन उसके हाथ से गिर गयी और सारा दूध ज़मीन पर बिखर गया । बेचारी के हाथ पाँव भी जल गये । पर पंडिताइन चाची उस बेचारी को डाँट-फटकार सुनाती । क्योंकि "उसके न्याय-विधान में न क्षमा का स्थान था, न अपील का अधिकार ।" इस प्रकार अत्याचार से पीड़ित, छोटी अवस्था में ही ममता और प्यार से वंचित बिन्दा एक दिन अपनी आकाशवासी अम्मा के पास चली गयी । विमाता के दुर्व्यवहार से व्यथित बिन्दा की रेखाओं से लेखिका की हृदयगत भावनायें मुखरित होती हैं ।

सबिया

अतीत के चलचित्र का चौथा चित्र अशिक्षित और पीड़ित मेहतरानी सबिया का है । सबिया पौराणिक नारीत्व का प्रतिनिधित्व करती है । वह अशिक्षित होने पर भी ज्ञात चारित्रिक गुणों से सम्पन्न है । सबिया का पति उसे और अपने दो बच्चों को छोड़कर अपने जाति-भाई की पत्नी के साथ भाग निकलता है । सबिया अपनी बच्ची को साथ लिये काम की खोज में लेखिका के पास पहुँचती है । लेखिका उसका बाह्य रूप इस प्रकार अंकित करती हैं - "उसका मुख चिकनी काली मिट्टी से गढ़ा जान पड़ता था, परन्तु प्रत्येक रेखा में साँचे की वैसी ही सुडौलता थी, जैसी पेरिस प्लास्टर की मूर्तियों में देखी जाती है । आँखों की गढ़न लम्बी न होकर गोल-मोल होने के कारण उनमें मेले में खोये बच्चे जैसी समय चकित दृष्टि थी । हाथ पैर में मोटे-मोटे चमक हीन गिलट के कड़े उसे कैदी की स्थिति में डाल देते थे ।

कुछ कम चौड़े ललाट पर जुड़ी भौंहों के ऊपर लगी पीली काँच की टिकुली में जो श्रृंगार था वह भटकटैया के फूल से घूरे के श्रृंगार का स्मरण दिलाता था । कभी लाल, पर अब पुराने घड़े के रंगवाली धोती में लिपटी सबिया ऐसी लगी, मानों किसी अपटु शिल्पी की सयत्न गढ़ी मिट्टी की मूर्ति हो, जिसके सब कच्चे रंग धुल गये हैं और जहाँ तहाँ से केवल सुडौल रेखाओं में बँधी मिट्टी झाँकने लगी है ।"[1]

सबिया में काम करने की इतनी धुन है कि और किसी प्रकार की धुन प्रकट नहीं होती । सबिया को छोडकर उसका पति नई वधू को लेकर चला जाता है । इसके दो बच्चे और अन्धी माँ का भार सबिया के कन्धों पर पडता । ऐसे पुरुषों के प्रति आक्रोश प्रकट करती हुई लेखिका कहती हैं - "पुरुष भी विचित्र है । वह अपने छोटे से छोटे सुख के लिए निश्चिन्त होकर स्त्री को बडा से बडा दुख दे डालता है और ऐसी निश्चिन्तता से मानो वह स्त्री को उसका प्राप्य ही दे रहा है ।"[2]

एक दिन सबिया के पति भैंकू पत्नी गेंदा के साथ लौट आया । बेचारी सबिया खुशी से उसके पास पहुँचती है । गेंदा को भी साथ रहने की अनुमति देने के लिए भैंकू सबिया से खुशामद करता है । सबिया को इस बात पर दुःख न हुआ कि गेंदा को साथ लाया, पर दुःख सिर्फ इस बात का था कि भैंकू ने कभी सबिया का सुख-दुःख न पूछा और बच्चों की ओर

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 41
2. वही - पृ. 44

न देखा । इस कारण से उनका मन टूट जाता है । फिर भी वह अपने पति और सपत्नी को भोजन देती है । ऐसे स्नेहहीन निकृष्ट पति के प्रति भी सबिया के मन में प्रेम जारी रहता है । सबिया स्नेहशील और उदार है । सबिया उन महिलाओं का प्रतिनिधित्व करती है जो अपने बच्चों को, पति को प्राणों से भी प्यार करती है । लेकिन ऐसी स्त्री की हृदय विशालता पर कोई ध्यान न देता है । स्त्री को अपने छोटे से सुख के लिए भी भारी कष्ट भोगना पडता है । लेखिका यहाँ उस पुरुष के स्वभाव का पर्दाफाश करती है जो अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए अपनी स्नेहमयी पत्नी का त्याग करता है ।

सबला

"अतीत के चलचित्र" में एक बेचारी अनाथ नारी का चित्रण है । अपने रोगग्रस्त पति की इलाज के लिए उसके पास "माड़े भर प्रेम के उपहार के अतिरिक्त कुछ नहीं ।" वह विवश होकर काम की खोज में निकलती है । पतिता कही जानेवाली माँ की पुत्री होने के कारण उससे ससुरालवाले भी रूष्ट हैं । लेकिन उसके लिए पति की प्रतिष्ठा और आत्म सम्मान ही सब कुछ है । महादेवी उसके आकार का बडी सूक्ष्मता से रेखांकन करती है - "आँखों के आसपास लटकती हुई दो-तीन छोटी छोटी लटों के छोरों में हिलती हुई पानी की बून्दें पारे-सी जान पडती थी । सफेद साडी के कुछ धबीले बैजनी किनारे से घिरा मुख सुडौल गोरा, पर बहुत मुरझाया हुआ सा लगा । नाक के अग्रभाग की लाली हाल ही में पोछे गये आँसुओं की सूचना दे रही थी - पलकों की कोरे भी शायद् रोने से ही कुछ-कुछ गल आयी थी,

जिससे उनकी मर्मस्पर्शी व्यथा और भी गहरी से उठी थी । ओंठ इतने सूख रहे थे कि उन्हें आर्द्र करने का प्रत्येक प्रयास अपनी एकरसता में भी एक नयी थकान का आभास देता जाता था ।"[1] यह उसका सहानुभूतिपूर्ण चित्रण है ।

बेचारी नारी काम की तलाश में महादेवी के पास पहुँचती है । उसके लायक कोई निश्चित काम नहीं था, फिर भी लेखिका उसकी उपेक्षा नहीं कर सकती । उसके पति की बीमारी बढ जाती है तो अपने बेटे के अन्तिम दर्शन करने के लिए उसके ससुर आता है । पर उन्होंने एक बार भी उस अभागिन की ओर देखा तक नहीं । उस अभागिन स्त्री की इतनी एकान्त साधना भी उसके पति को न बचा सकी । अन्तिम संस्कार के लिए पति का मृतदेह ले जाने लगा तो वह सुधबुध खो बैठी लेकिन बेचारे की ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया । ससुर ने भी उसे उस घर से निकाला ।

वह रूठ नहीं हुई । जिस घर की वह बहू थी वहाँ की नौकरानी बनकर ससुर की सेवा करने की भीख माँगी । लेकिन इस अभागिन को विधाता-क्रम की शरण लेनी पडी । इस प्रकार के अन्यायपूर्ण व्यवहार पर महादेवी कहती हैं - समाज द्वारा मिले भलाई बुराई के प्रमाण पत्र विश्वास के योग्य नहीं । समाज का आभिजात्य हमेशा गर्व करने योग्य नहीं है । लेकिन आभिजात कुल की आड़ में जो कुछ भी हो रहा है वह समाज के लिए मान्य है । इस में आभिजात कुल वालों पर व्यंग्य की भावना प्रकट होती है ।

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 76

लछमा

"अतीत के चलचित्र" का अन्तिम चित्रण एक कर्मठ, पहाडी महिला लक्ष्मी का है जो अपने शोक संतप्त हृदय को झूठी हँसी में छिपाने का प्रयत्न करती है । लछमा के घर में माता पिता के अलावा और भी कई हैं । उन सब को संभालने का भार उनके कन्धों पर है । लछमा का विवाह एक अच्छे खोते-पीते परिवार में हुआ लेकिन उसके पति के मस्तिष्क का विकास एक बच्चे के से अधिक न हो पाया था । बाहर से मैली-कुचैली पर भीतर से साफ लछमा का परिचय महादेवी यों देती है "धुल धुल कर धूमिल हो जानेवाले पुराने काले लहंगे को एक विचित्र प्रकार से खोंसे पटी मट मैली ओढ़नी को कई पेंट देकर कमर से लपेटे और दाहिने हाथ में एक बडा-सा हँसिया संभाले लछमा, नीचे पडी घास पत्तियों के ढेर पर कूदकर खिल-खिला उठी । कुछ पहाडी और कुछ हिन्दी की खिचडी में उसने कहा - हमारे लिए क्या डरते हो । हम क्या तुम्हारे जैसे आदमी है ।"[1]

परिवार के मनुष्य-विरोधी परिवेश से वह बेचैन हो जाती है । ससुरालवालों को लछमा एक समस्या बन जाती है । वे लोग उसकी संपत्ति छीनने का प्रयत्न करते हैं लेकिन वह निराश न हो कर सारी मुसीबतों का सामना करती है । ससुरालवाले उसे बेहोश होने तक मारते हैं और उस बेहोश को मृत समझकर खड्डे में फेंक देते हैं । पर वह मरी नहीं, उसमें तो प्राण अभी है । वह उस खड्डे में से निकल कर किसी तरह लडखडाते हुए कदमों से अपने गाँव आ पहुँचती है ।

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 105

लछमा की एकमात्र संपत्ति एक भैंस है । इससे वह अपने परिवार को संभालती है । ससुरालवालों को यह खबर मिली कि लछमा जीवित रहती है तो वे अबोध पति को उसे सौंप देते हैं । लछमा में कष्ट सहने और बडे बडे अपराध को भी क्षमा करने की अपूर्व क्षमता है । लेखिका लछमा के जीवन संघर्ष का रेखांकन करती हैं ।

भक्तिन

"स्मृति की रेखाएँ" का पहला चित्रण भक्तिन का है । महादेवी जी अपनी परिचारिका के जीवन की कतिपय महत्वपूर्ण घटनाओं का चित्रण इसमें अंकित करती है । नौकरी की खोज में वह भी लेखिका के पास पहुँचती है ।

अहीर - सुरभा की इकलौती बेटी भक्तिन को ईर्ष्यालु विमाता से जीवन में दुःख झेलना पडता है । पाँच वर्ष की अवस्था में उसका विवाह हुआ था । उनकी उनतीस वर्ष में पति का देह वियोग हुआ । उनकी बडी लडकी भी विवाह के कुछ दिनों बाद विधवा हो गयी । न चाहते हुए भी परिस्थितियों से विवश होकर भक्तिन को उसकी दूसरी शादी करानी पडी । पारिवारिक द्वेष, खेतीबारी का झुलसना, निर्दय ज़मीन्दार से उत्पीडन और अपमान आदि असह्य होने के कारण वह अपना गाँव छोडकर शहर पहुँचती ।

भक्तिन ममतामयी लेखिका के एकान्त जीवन की अनन्य साथिन रही । वह सेवक धर्म में हनुमान जी से स्पर्धा करनेवाली है । लेखिका के शब्दों में भक्तिन का बाह्य चित्र इस प्रकार है । "छोटे कद और दुबले शरीरवाली भक्तिन अपने पतले ओठों के कोनों में दृढ़ संकल्प और छोटी आँखों में एक विचित्र समझदारी लेकर जिस दिन पहले पहल मेरे पास आ उपस्थित हुई थी ।"[1] लेखिका उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं का अंकन करती है । उसके स्वभाव की एक ऐसी विशेषता है कि वह जैसी हो वैसी रहती । वह दूसरों को भी अपने मन के अनुसार बना लेना चाहती है । लेखिका कहती है "इसीसे आज मैं अधिक देहाती हूँ, पर उसे शहर की हवा न लग पाई ।"[2]

भक्तिन के चरित्र चित्रण के साथ महादेवी के जीवन की झाँकी भी मिलती है । उनकी दिनचर्या किस प्रकार है, और उनके जीवन का परिचय पाठकों को मिल जाता है । हिन्दु समाज की कुप्रथाओं और उसके कुफल, विमाता का स्वरूप, सम्मिलित परिवार के कटु अनुभव, समाज के ठेकेदारों के विकृत स्वरूप आदि का चित्रण भी इसमें लेखिका करती है ।

अपनी शरण में आये लोगों के प्रति महादेवी के मन में अपार स्नेह और सहानुभूति है । परिचारक, ग्वाला, धोबी, ताँगेवाला सभी दीर्घकाल तक उनके पास रहते थे, मृत्यु ही उनकी सेवा समाप्त कर देती थी ।

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 3
2. वही - पृ. 10

इस प्रकार के अनेक लोग उनकी स्मृति में समय के बीत जाने पर भी जीवित हैं, उनमें बिबिया और उसकी माँ के स्मृति चित्र की रेखाएँ, फीकी क्यों न हो पर उनमें भरा हुआ विषाद का रंग धूमिल न हो सका ।

बिबिया

गेहुए रंग, सुडौल मुखवाली धोबिन बिबिया हँसमुख स्वभाव से बहुत आकर्षक है । उसे दूसरों की सहायता करने से भी आनन्द का अनुभव होता है । लेखिका उसके आकर्षक रूप का वर्णन यों करती है - "छोटे-छोटे सफेद दाँतों की बत्तीसी निकली ही रहती थी । बडी आँखों की पुतलियाँ मानों संसार का कोना-कोना देख आने के लिए चंचल रहती थी । सुडौल गठीले शरीरवाली बिबिया को धोबिन समझना कठिन था, पर थी वह धोबिनों में भी सब से अभागी धोबिन ।"[1]

मद्यप और झगडालू पति के अत्याचार से बिबिया की माता ने अपनी जिन्दगी खतम कर दी । माँ-बाप के बिना बिबिया का जीवन अनिश्चित सा हुआ । पाँचवें वर्ष में उसका विवाह हुआ था । परन्तु गौने से पहले ही वर की मृत्यु हो गयी थी । फिर उसका दूसरा विवाह रमई से हुआ जो पक्का शराबी और जुआरी है । नशे में वह ऐसी घृणास्पद बातें करके उसे अपमानित करता था । जुए में उसे दाँव पर रखने की मर्मान्तक बात

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 105

तक आयी तब वह अपने को संभाल न सकी । उसने चिमटा उठाकर धमकाया । फलस्वरूप बिबिया को घर से निकाला गया । निस्सहाय बिबिया फिर अपने घर में दासी की भाँति सुबह से शाम तक सारा काम कर जीवन बिताने लगी । वह कभी भी अच्छे कपडे न पहनती, न गहने, न किसी नाच, रंग में शामिल होती । कुछ महीने बाद एक दिन मैले कुचैले कपडे पहने हुए बिबिया लेखिका के सामने आयी । "उसके मुख पर झाई आ गई थी और शरीर दुर्बल जान पडता था । पर न आँखों में विषाद के आँसू थे न ओंठों पर सुख की हँसी । न उसकी भाव भंगिमा में अपराध की स्वीकृति थी और न निरपराधी की न्याय-याचना । एक निर्विकार उपेक्षा ही उसके अंग अंग से प्रकट हो रही थी ।"[1]

बाद में बिबिया का ब्याह पाँच बच्चों का बाप झनकू के साथ हुआ । झनकू को अपने लिए कोई संगिनी की नहीं पर बच्चों की देखरेख के लिए एक गृहस्थी ही आवश्यक थी । झनकू का सौतेला पुत्र भीखन जब घर में आया तब से गडबड हुआ । उसके अनुचित व्यवहार से विमाता को जलती लाठी खींचनी पडी । भीखन बिबिया को फँसाने की बात सोच रहा था । लोग बिबिया और भीखन के बारे में कुछ कहने लगे । यह बात झनकू के कानों तक पहुँची और अपमान के असह्य होने पर एक दिन असहाय बिबिया गाँव से गायब हो गई । दूसरों की दुर्बलता के प्रति मनुष्य का एक सहज आकर्षण है । उसी पर सारा दोष थोप लिया जाता है । घरवालों ने उसे अकारण अपमानित किया । संघर्ष के लिए उसके सभी अस्त्र टूट चुके तो वह एकाकिनी यमुना की लहरों में विलीन हो गयी ।

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 108

गुँगिया

प्रति दिन गाँव के अनेक लोग अपने पुत्र, बहू या अन्य किसी संबंधी को अपनी स्मृति दिलाने, शुभकामनायें भेजने, खुश खबर सुनाने, आदि विविध विषयों पर पत्र लिखवाने के लिए महादेवी के पास आया करते थे। ऐसे पत्र प्रेषकों में एक गुँगिया भी थी जिसकी याद लेखिका करती है।

गुँगिया "स्मृति की रेखाएँ" का एक मर्मस्पर्शी रेखाचित्र है। उसका असली नाम धनपतिया है। उसके गूँगेपन के कारण ही गुँगिया नाम पडा। वह रग्घू तेली की पुत्री थी। रग्घू संपन्न था और ईमानदार भी। लेकिन ओपरेशन से डरता था। इसलिए धनपतिया गूँगी होकर रह गई।

जब विवाह का समय आ गया तो रग्घू ने संबंधियों से कहे बिना गुँगिया का विवाह करा दिया। लेकिन ससुरालवाले ने यह धोखा समझा। उसके सब गहने कपडे लेकर उसे घर भेज दिया गया। उसी घर में दूसरी बेटी रुकिया का विवाह करके अन्याय प्रतिकार के रूप में रग्घू शान्त हुआ। गुँगिया माँ-बाप की मूक सेवा में लगी रही।

रुकिया ने दो बच्चों को जन्म दिया। लेकिन दोनों तीन वर्ष से अधिक न जीवित रहे। तीसरे बच्चे को जन्म देते हुए वह स्वर्गवासी हुई।

बच्चा गूँगिया को सौंप दिया गया । उसके पालन पोषण के लिए वह क्या क्या न करती - गाँववालों ने यह देखकर दान्तों तले उँगली दबाई । गूँगिया ने इस बच्चे के लिए सब प्रकार की सुख सुविधाएँ जुटाई । कुछ दिनों के बाद गूँगिया के माता पिता की मृत्यु हो गई । हुलसी के पालन पोषण का भार उस पर आया ।

बडा होने पर हुलसी को माँ के मौन पर पहले विस्मय और बाद में लज्जा होती है । गाँव के बच्चे हुलसी को "गूँगी का बेटा" कहकर चिढाने लगे । हुलसी को बडा होने पर अपने जीवन वृत्त के संबंध में कुछ सच और कुछ झूठ खबरें मिलने लगी । गूँगिया के पवित्र स्नेह की गहराई उसकी पहुँच के बाहर थी । एक दिन वह गूँगिया से कहता है कि "अपने पिता से उसे क्यों छीन लाई । यह सुनकर गूँगिया को ऐसा लगा मानो हृदय में विषैला बाण चुभ गया हो । वह उसे अपने पिता के पास पहुँचाने का प्रबंध करती है । लेकिन पिता का अपार वात्सल्य विमाता की कठोर दृष्टि में विलीन हो गया ।

इसी बीच उस गाँव में एक वैरागी बाबा आ गया तो हुलसी उसके पास रहने लगा । कुछ दिनों के बाद वह उस बाबा के साथ चला गया । हुलसी के वियोग से गूँगिया बहुत रोयी लेकिन फल न हुआ । किसी ने गूँगिया को समझाया कि हुलसी कलकत्ते के किसी ज़मीन्दार के यहाँ काम करता है । गूँगिया उसको पत्र लिखवाने के लिए लेखिका के पास आती है ।

लेखिका कहती है कि उसको पत्र लिखना आसान नहीं क्योंकि वह जो कहना चाहती, कह नहीं पाती थी । हुलसी का पता भी नहीं था । यह सुनकर गुँगिया अत्यधिक दुखी हो गयी, उसका ज्वर चढ गया । गुँगिया की हालत जानकर लेखिका हर भजन नामक एक नौकर से पत्र भिजवाती । गुँगिया के संबंध में सब जानकर हर भजन को दुःख हुआ । उसकी माँ नहीं है, वह गुँगिया को अपनी "माँ" कहकर सुख का अनुभव करता था । एक सप्ताह बाद हर भजन अपनी नई माँ को एक पत्र और दस रुपये भी भेजता है । गुँगिया ने उस मैले फटे पत्र को अस्थिशेष उँगलियों में दबाकर हृदय पर रखकर अपनी आँखें मूँद ली ।

गुँगिया वात्सल्य की प्रतिमा थी । लेखिका के शब्दों में "वह वात्सल्य की आवाक् पर चिर स्पन्दनशील प्रतिमा क्या मेरी स्मृति में अकेली रहेगी ।"[1] गुँगिया के जीवन का बहुत ही मार्मिक चित्र इस रेखाचित्र में मिलता है ।

निष्कर्ष

"अतीत के चलचित्र" और "स्मृति की रेखाएँ" में महादेवी ने भारतीय नारी की विषम परिस्थितियों को अनेक दृष्टि बिन्दुओं से देखने का प्रयास किया है । महादेवी के अन्तर में व्याप्त ममता, वात्सल्य, निश्छलता आदि गुण ही इन पात्रों के माध्यम से स्पष्ट हो जाते हैं । उन्होंने अत्यन्त

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 153

गंभीर और शान्त मन से निम्न वर्गीय ग्रामीण नारी समस्या के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है ।

उपर्युक्त रेखाचित्रों में प्रताड़ित, निरीह बालिकाओं तथा बाल विधवाओं के जीवन का करुण चित्रण हुआ है । हृदय हीन स्वार्थी समाज के अत्याचारों की चक्की में पिसते तिल-तिल कर जीवन को समाप्त कर देने वाले पात्रों की ये मूक गाथाएँ हैं । इनमें उनकी निर्धनता, विवशता और दारिद्र का स्वर गूँज उठता है । उपेक्षिता सबिया की कर्मठता और उत्सर्ग भावना, बिट्टो की विवशता, लछमा का आत्म-संतोष, पाठकों का ध्यान आकृष्ट करने योग्य है । इनमें मातृत्व की ममता, बहन के पवित्र स्नेह तथा नारीत्व की कोमल अनुभूतियों की अभिव्यक्ति हुई है । स्त्री जीवन की सफलता मातृत्व में है । माता के रूप में उसे समस्त अधिकार प्राप्त होता है । पिता दुराचारी है तो बच्चों का भोजन जुटाना, वस्त्र का प्रबंध करना, उनके वर्तमान और भविष्य की चिन्ता करना ये सब स्त्री का कर्तव्य हो जाता है । इसलिए महादेवी कहती है कि "स्त्री में माँ का रूप ही सत्य, वात्सल्य ही शिव और ममता ही सुन्दर है ।"[1] इन विशेषताओं के साथ वह पुरुष के जीवन में प्रतिष्ठित होती है अतः उसके अभाव की पूर्ति करना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है । लेकिन ऐसी माताएँ है जो अपनी इस कर्तव्य पूर्ति में अनेक कारणों से असफल हो जाती है । मलिन, दुःखी व्यथा भरी माताओं और पत्नियों से महादेवी का निकट संपर्क था । नारी के प्रति होनेवाले अत्याचार से वे

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 103

व्याकुल हो उठती है । वे बडे सहानुभूति-पूर्ण ढंग से वेश्या के मसले हुए जीवन पर विचार करती हैं । उनकी दृष्टि पैनी है । उनकी सहानुभूति व्यक्तियों के स्वरूप को चित्र की भाँति शब्दों में बाँधने को आकुल दीख पड़ती है । स्त्री को केवल सामाजिक उत्पीड़न का ही सामना नहीं करना पडता था, वरन् पारिवारिक जीवन से भी न तो स्त्रियों का कोई अधिकार, न अत्याचार से बचाव के साधन । इस प्रकार महादेवी के स्मृतिचित्रों में नारी के जीवन के प्रति उनके दृष्टिकोण का परिचय मिलता है ।

2. पुरुष संबंधी

"अतीत के चलचित्र" और "स्मृति की रेखाएँ" में कुछ उपेक्षित पुरुष पात्र हैं जो ग्रामीण, एवं समाज के पिछड़े वर्ग के हैं । वे सब मानवीय गुणों से संपन्न और साधारण तथा पाठकों की अक्षय ममता एवं असीम स्नेह के पात्र हैं । लेखिका का इन से रागात्मक संबंध हो गया है । वे पूरी तन्मयता से सशक्त लेखनी द्वारा इनका जीवन्त चित्र अंकित करती हैं ।

रामा

"अतीत के चलचित्र" का पहला चित्र महादेवी के भृत्य रामा का है । वह श्रमजीवी, ग्रामीण नौकर है । अपनी विमाता के अत्याचार से असह्य बेचारा अपना घर छोडता है और लेखिका की माता जी की शरण में आ पहुँचता है । उसका रूप- जीवन झाँकी, उसका चरित्र उभर कर

लेखिका के सामने आता है । वह सीधा-सादा नौकर है । नाटा, काला, गठा शरीर बड़े मुख और लंबी शिखावाला रामा कुरूप है । आगे लेखिका उसका परिचय यों देती है - "रामा के संकीर्ण माथे पर की खूब घनी भौंहें और छोटी-छोटी स्नेह तरल आँखें कभी कभी स्मृति पर अंकित हो जाती है और कभी कभी धुँधली होते होते एकदम खो जाती है । किसी थके झुँझलाए शिल्पी की अन्तिम भूल जैसी अनगढ़ मोटी नाक, साँस के प्रवाह से फैले हुए से नथुने, मुक्ता हँसी से भरकर फूले हुए से ओंठ तथा काले पत्थर की प्याली में दही की याद दिलानेवाली सघन और सफेद दन्त पंक्ति के संबंध में भी यही सत्य है ।"[1] लेकिन रामा को अपनी कुरूपता का पता नहीं । वह एक भिजाई और घुटनों तक ऊँची धोती पहनकर अपनी कुडौलता की प्रदर्शिनी करता रहता है । रामा अपने भोलेपन और सीधेपन से महादेवी का स्नेह पात्र बन जाता है । रामा के स्नेहपूर्ण व्यवहार से बच्चे भी उससे आकृष्ट होते हैं । रामा बचपन से लेखिका का सर्वस्व बन जाता है । वह लेखिका के घर में इतना घुल-मिल गया था कि प्रौढ़ावस्था तक घर का एक सदस्य बनकर रहता है । उसकी कर्म कुशलता, बच्चों से संबंध आदि सराहनीय अवश्य है । रामा के जीवन की भूमिका में लेखिका के बाल्यकाल जीवन की झाँकी भी निहित है । वह उसके आन्तरिक सौंदर्य पर मुग्ध है । बीच बीच में बचपन की अनेक घटनाओं का अंकन वे करती हैं । उसकी कर्मकुशलता भी उल्लेखनीय है । वह महादेवी के परिवार के बच्चों को दूध, फल और खाना खिलाने के लिए कैसे कैसे नाटक रचता है लेखिका इसका वर्णन करती है । तीनों बच्चों को एक पंक्ति में बिठाता है मानो तीन मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं । वे एक दूसरे से अपने को श्रेष्ठ मानते बैठते हैं । रामा छोटे-बड़े चम्मच, दूध का प्याला, फलों की तश्तरी

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 10

आदि लेकर ऐसे विचित्र देवताओं की अर्चना के लिए सामने आ बैठता । पर वह था बड़ा घाघ पुजारी । न जाने किस साधना के बल से देवताओं को आँख मूँदकर कौव्वे द्वारा पुजापा पाने को उत्सुक कर देता । जैसे ही हम आँखें मूँदते वैसे ही किसी के मुँह में अंगूर, किसी के दाँतों में बिस्कुट और किसी के ओठों में दूध का चम्मच जा पहुँचता ।[1]

वह बच्चों को नहाते समय आँख को साबुन-फेन से बचाने में विशेष ध्यान देता है । उन्हें कपडा पहनाने में, खिलाने में भी एक निश्चित व्यवस्था का पालन करता है । खेलते समय स्वयं हाथी, घोडा, बनकर बच्चों को अपने ऊपर उठाता है । वह तरह तरह की कथायें सुनाकर बच्चों को स्वप्न लोक तक ले जाता है । इतना ही नहीं निरक्षर रामा के संपर्क से जीवन की सादगी और सरलता संबंधी बहुमूल्य जानकारी परिवार के बच्चे प्राप्त कर सके । वे रामा की असीम ममता कभी भूल नहीं सकतीं, बच्चों का अत्याचार भी उसे सहना पडता है । रामा के साथ अपने नटखटपन का स्मरण करके लेखिका एक घटना का वर्णन यों करती है । एक दिन दशहरे का मेला देखने लेखिका और घर के बच्चे रामा के साथ चले जाते । खिलौने खरीदने के लिए जब वह एक को कंधे पर बिठाता और दूसरे को गोद में लेता तब लेखिका उसे उँगली पकडने को बार बार कहता है । लेकिन वे उँगली छोडकर मेला देखने चली जाती है । वहाँ कुछ देर भटकते ही उन्हें भूख लगती हैं । तब रामा की प्रतीक्षा में एक मिठाई की दूकान पर खडी रहती ।

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 14

मिठाई वाले से प्रश्न किया कि क्या तुम ने रामा को देखा है ? वह खो गया है । मिठाई वाले ने बड़े वात्सल्य से पूछा "कैसा है तुम्हारा रामा ?" महादेवी ने उत्तर दिया "बहुत अच्छा है ।" बहुत ढूँढते ढूँढते रामा परेशान हो गया और संध्या-समय दूकान के सामने पहुँचा तो लेखिका ने बड़े गर्व से पूछा "तुम इतने बड़े होकर भी खो जाते हो रामा" । रामा के आनन्द की सीमा नहीं थी । घर पहुँचकर बच्चों के अपराधों के लिए डाँट-फटकार उसे मिली । हमेशा बच्चों के दुर्व्यवहार के लिए सजा उसे मिलता था लेकिन वह बच्चों को कुछ मनोवैज्ञानिक उपदेश देता था । फिर भी उसके मन में किसी के प्रति द्वेष नहीं ।

लेखिका कहती है कि आज वे इतनी बड़ी हो गई हैं कि "राजा भइया" कहलाने का हठ स्वप्न सा लगता है । बचपन की कथा कहानियाँ कल्पना जैसी जान पड़ती है । खिलौने के संसार का सौंदर्य भ्रान्ति हो गया है । लेकिन रामा आज भी सत्य है, सुन्दर है, स्मरणीय है ।" रामा संबंधी ऐसी अनेक घटनायें और क्षण उन्हें याद आते हैं जो लेखिका ने स्वयं जिये हैं । लेखिका के बाल्यकालीन जीवन में रामा का महत्वपूर्ण स्थान है । बच्चों को अपनी इच्छा के अनुसार खेलने छोड़ता है । खेलकूद में बाधा डालते आनेवाले को, पंडितजी ही क्यों न हो, रामा नहीं चाहता है । आखिर अपनी पत्नी को अकेले छोड़ देने के अपराध पर जब उसे नौकरी से निकाल दिया जाता है । उस निःस्वार्थ सेवक का करुण चित्र पाठक के मन पटल पर हमेशा के लिए अंकित हो जाता है ।

घीसा

घीसा दूसरा अशिक्षित, पीडित लेकिन कर्मनिष्ठ सीधा सादा नन्हा सा लडका है जिसकी भूली हुई प्रभावात्मक करूण कथा लेखिका अंकित करती है । उसने उनके हृदय को करूणार्द्र बना दिया था ।

अवकाश के समय महादेवी भगीरथी नदी तट पर जाया करती थी, वहाँ बच्चों को सिखाती थीं । एक दिन लेखिका संध्या के समय घर लौटते एक मलिन वेष धारी स्त्री से मिली । उसकी आँखें व्यथा से आर्द्र थीं । वह एक विधवा थी । अपने इकलौते बेटे को दूसरे बच्चों के साथ बिठाकर कुछ सिखाना चाहती थी । लडके का नाम घीसा है । घीसा का पिता नहीं है, माँ है जो घर-घर जाकर लीपने-पोतने का काम करती है । घीसा कुरूप है । दूसरे लडके उससे खिंचे खिंचे रहते हैं । घीसा का रेखाचित्र इस प्रकार है "पक्का रंग, पर गठन में विशेष सुडौल, मलिन मुख जिसमें दो पीली, पर सचेत आँखें जडी-सी जान पडती थी । कस कर बंद किये हुए पतले होंठों की दृढता और सिर पर खडे हुए छोटे-छोटे रूखे बालों की उग्रता, उसके मुख की संकोच भरी कोमलता में विद्रोह कर रही थी । उभरी हड्डियों वाली गर्दन को सँभाले हुए झुके कन्धों से, रक्तहीन मटमैली हथेलियों और टेढे-मेढे कटे हुए नाखूनों युक्त पतली बाहें ऐसी झूलती थी, जैसे ड्रामा में विष्णु बननेवाले की दो नकली भुजाएँ । निरन्तर दौडते रहने के कारण उस लचीले शरीर में दुबले पैर ही विशेष पुष्ट जान पडते थे ।"[1]

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 66

घीसा की उत्सुकतापूर्ण निरन्तर घडी की तरह खुली आँखें लेखिका के मुख पर टिकी ही रहती है मानों अपने गुरू की सारी विद्या बुद्धि को सीख लेना ही उनका ध्येय है । अबोध घीसा कर्मठ एवं कर्तव्यनिष्ठ आज्ञापालक लडका है । एक बार गुरूजी की सफाई संबंधी भाषण सुनकर वह स्वयं कपडे धोने लगता है । वह गीला अंगोछा लपटे और आधा भीगा कुरता पहनकर अपराधी के समान लेखिका के सामने खडा होता तब लेखिका को लगा कि अपना रोम रोम गीला हो गया हो । उसकी गुरुभक्ति और कर्तव्य परायणता का सम्यक आकलन लेखिका करती है । पीपल की छाया को, जहाँ लेखिका पढाती है, गोबर मिट्टी से चिकनापन दे आना उसका काम है । वह रोज़ गुरू साहब की प्रतीक्षा में पीपल की छाया में खडा रहता है । एक बार गर्म के दिनों में घीसा के मन में अपने गुरू साहब के लिए तरबूजा माँगने की इच्छा होती है लेकिन उसके पास पैसा नहीं । खेतवाले की नज़र उसके नये कुरते पर पडते देखता है । वह कुरता बेचकर तरबूजा खरीदता है । वह सोचता है कुरता देने पर गुरू साहब को चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि गर्मी में वह कुरता पहनता ही नहीं और जाने-आने के लिए पुराना ठीक रहेगा ।

भगवान से बढ़कर गुरू को प्यार करनेवाला वह निरीह ग्रामीण बालक बाहर से कुरूप है जो उसकी गरीबी का चिह्न है और अन्तर से इतना पवित्र जो सिर्फ लेखिका ही देख सकी । लेखिका के प्रति उसकी भक्ति से ऐसा लगता है मानों वह एकलव्य सरीखा गुरू भक्त शिष्य है । उसकी अकाल मृत्यु महादेवी के हृदय पर हमेशा के लिए गहरी चोट पहुँचा देती है ।

अलोपी

"अतीत के चलचित्र" का नवाँ चित्र अलोपीदीन के दुःख गीत का है । आलोपीदीन 23 वर्ष का एक अन्धा युवक है । उसका पिता नहीं है, केवल माँ है जो तरकारियाँ बेचती है ।

अन्धा होने पर भी पिता की मृत्यु के बाद वह माता के ऊपर अपना भार छोडना पसन्द नहीं करता है । इसलिए लेखिका की कृपा से छात्रावास के लिए रोज़ तरकारियाँ लाने लगता है । लेखिका के प्रति वह अपने को आभार समझता है । इतना प्रेम उनके प्रति लगा कि लेखिका के घर के सामने नमस्कार करके ही वह रोज़ जाया करता है । ये घटनायें लेखिका कभी भूल नहीं सकती । अलोपीदीप अपने कर्तव्य परायणता से थोडे ही दिनों में घरवालों की ममता का पात्र बन जाता है ।

अंधा होने की कमी स्पर्श ज्ञान से दूर हो सकती है । सब्जी हाथ में लेकर ही अनुमान से उसका ठीक तोल बता देता । धीरे धीरे वह स्कूल की बालिकाओं के लिए अमरूद और बेर भी लाने लगता है । स्कूल के फलवाले को यह पसन्द नहीं होता । क्योंकि इससे उनके व्यापार की क्षति होती है । लेकिन अलोपी से इस संबंध में पूछताछ होती है तो वह कहता है "मेरी एक आठ-नौ वर्ष की चचेरी बहिन थी जो अब मर चुकी है और इन लडकियों में से कुछ की आवाज़ ठीक मेरी चचेरी बहिन जैसी है । उनकी आवाज़ सुनने पर एक प्रकार का आन्तरिक सन्तोष मिलता है । इसी संतोष की पूर्ति के लिए मैं कभी कभी ये फल ले आता हूँ ।"[1]

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 87

लेखिका के प्रति अलोपीदीन के मन में बडा स्नेह और सम्मान है । जब उसको मालूम होता है कि मालकिन बीमार है तो जल्दी उनके निकट पहुँचकर अलोपी देवी की विभूति देता है । उसका विश्वास है कि उससे बीमारी दूर हो जाएगी ।

अपने चचेरे भाई रग्घु से मिलकर तरकारी का व्यापार करके वह बहुत पैसा इकट्टा करता है । आलोपी शादी करके अपना अलग घर बसा लेता है । उसकी पत्नी का वह तीसरा पति है ।

अलोपीदीन की पत्नी का चित्रण इस प्रकार है "मझोले कद की सुगठित शरीरवाली प्रौढ़ा थी । देखने में साधारण सी लगह ; कुछ विशेष चमकदार आँखों में चालाकी के साथ साथ ऐसी कठोरता झलक जाती थी, जो उस पर विश्वास करना असंभव नहीं, तो कठिन अवश्य कर देती थी । अलोपी उसे कण्ठ स्वर से ही जानता था ।"[1]

शादी के छह महीने के बाद वह पति की सारी संपत्ति लेकर उसे मायापाश से सदा के लिए मुक्ति दे गयी । यह घटना अलोपीदीन को भारी दुःख पहुँचाती । वह न अपनी पत्नी की खोज करता है न अपनी स्त्री की हुलिया लिखवाकर पुलिस से पकड मँगाने का नीच काम करता । उस विश्वासाघात से उसका सारा उत्साह, आत्मविश्वास नष्ट हो जाता है । उसके चारों ओर दुःख का जो अँधेरा छा गया था वह लेखिका को चिन्तित कर देता है ।

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 91

एक दिन तरकारियाँ देने के बाद बहुत समय तक वह मालकिन के यहाँ बैठता है और उसको नमस्कार करके वह लौट जाता है फिर कभी नहीं वापस आया । तीन दिन बाद, रग्धू से यह समाचार मिला कि उसे अकेला छोडकर उसका अंधा दादा किसी अज्ञात लोक को चला गया । अलोपी के शेष स्मारक पर विस्मृति की यवनिका पड जाती है लेकिन लेखिका को ऐसा लगता है देहली पर उसकी छाया मूर्ति खडी हो ।

उसका मुख स्पष्ट होने पर उसकी निष्प्रभ आँखें और गालों पर सूखे आँसुओं की रेखा का आभास पाती है । उनका विश्वास है कि नियति के व्यंग्य से जीवन और संसार के छल से मृत अलोपी का प्रेत उनकी ममता के लिए वहाँ घूमता रहेगा ।

बदलू

"अतीत के चलचित्र" का दसवाँ चित्रण दीन-हीन बदलू कुम्हार का है । दारिद्र दुःख से पीडित पति-पत्नी की करुण कथा इसमें है । वे मानते हैं भाग्यदोष से ही इतना कष्ट उठाना पडता है । फिर भी वे निराश नहीं । कठिनाइयों को सामना करके वे आगे बढ़ते हैं । बदलू का चित्रण करते हुए लेखिका लिखती है "उसकी मुखाकृति साँवली और सौम्य थी ; पर पिचके गालों से विद्रोह करके नाक के दोनों ओर उभरी हुई हड्डियों उसे कंकाल-सहोदर बनाए बिना नहीं रहतीं । लम्बा इकहरा शरीर भी कभी सुडौल रहा होगा, पर निश्चित आकाश वृत्ति के कारण असमय वृद्धावस्था के भार से झुक आया था । उजली छोटी आँखें स्त्री की आँखों के समान सलज्ज थी ; पर एक रस उत्साह हीनता से भरी होने के कारण चिकनी काली

मिट्टी से गढ़ी मूर्ति में कौडियाँ से बनी आँखों का स्मरण दिलाती रहती थी । काँपते ओठों में से निकलती हुई गले की खरखराहट सुननेवाले को वैसे ही चौंका देती थी, जैसे बाँसुरी में से निकलता हुआ शंख का स्वर ।"[1]

बदलू एक ओर मिट्टी के कच्चे पक्के और टूटे बर्तनों तो दूसरी ओर मैले-कुचैले, नंगे, दुबले बच्चों के बीच दिखाई देता है । मिट्टी के बर्तन कुछ सूखने, कुछ पकाने और कुछ उठाने रखने में टूटते रहते थे, उसी प्रकार उसके बच्चे भी पैदा होता कुछ वर्षों बाद चल बसते भी थे । लेकिन बदलू इससे विचलित न रहा । उसका ऐसा विचित्र स्वभाव था कि आगे महादेवी कहती है "बदलू का चित्र खींच देना किसी भी चित्रकार के लिए सहज नहीं , क्योंकि वह ऐसी परस्पर विरोधी रेखाओं में बाँधा था कि एक को स्पष्ट करने में दूसरी लुप्त होने लगती थी ।"[2]

बदलू मित भाषी है वह शहरी सभ्यता से अपरिचित है । लेखिका बदलू को समझाती है कि वह बेडौल मटकों के स्थान पर सुन्दर नक्काशीदार सुराहियाँ बनाने का प्रयत्न करें क्योंकि ऐसी चीज़ों की बिक्री शहर में भी हो सकती है तो बदलू कहता है कि वह ग्रामीण कुम्हार है, उससे शहराती बर्तन कैसे बनेंगे । जब बच्चों के साथ बैठकर पौराणिक पात्रों के चित्र देखता है, उनका अर्थ सुनता है तो बदलू उनसे एकदम आकृष्ट होता है और अपने लिए चित्र माँगता है । सरस्वती के चित्र को देखकर बदलू के हृदय में कलाकार बनने की इच्छा साकार हो उठी । कई दिनों से लेखिका से उसका मिलन न होता था ।

---

1. अतीत का चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 95
2. वही

दीवाली के दिन वह सरस्वती की मूर्ति बनाकर लेखिका को देता है तब से वह बहुत सुन्दर चित्र और मूर्तियाँ बनाना शुरू कर देता है । पति को बड़े कलाकार के रूप में देखने का अवसर उनकी पत्नी रधिया को नहीं मिला । इधर बदलू सुन्दर चित्र बनाने शुरू करता है और उधर रधिया किसी अज्ञात लोक में चली जाती है मानों पति को कलाकार बनाने के लिए ही वह जीवित रही । उसके अभाव से जीवन और भी करूणापूर्ण हो गया ।

हर साल लेखिका को उससे नयी मूर्ति उपहार में मिलती रही । उनके घर में प्रतिष्ठित बदलू से निर्मित मूर्तियाँ मानों यह बताती है कि "कला पैतृक संपत्ति नहीं और कल्पना किसी की क्रीतदासी नहीं ।" बदलू के चित्रण के द्वारा लेखिका यह बताना चाहती है कि समाज की निम्न श्रेणी में जीवन बितानेवाले अनेक कलाकार हैं । लेकिन ऐसे सच्चे कलाकार की क्षमता नष्ट-भ्रष्ट होती है । उन्हें प्रेरणा और प्रोत्साहन देना आवश्यक है ।

चीनी फेरीवाला

"स्मृति की रेखाएँ" का दूसरा चित्र जन्म से दुखियारा, मातृपितृ विहीन बहिन से बिछड़े चीनी फेरीवाले का है । महादेवी के यहाँ कपड़ों का गट्ठर लादकर हाथ में गज हिलाते हुए "सिस्तर के वास्ते" कहते हुए वह दिखाता है । विदेशी चीज़ों के प्रति अवज्ञा प्रकट करने पर उसे जो चोट लगी वह उसके स्वर में प्रकट होती है । वह चीनी विदेशी है । खद्दरधारी होते हुए भी विवश होकर लेखिका को विदेशी रेशम खरीदना पड़ा । महादेवी उसकी करुण कथा - विमाता के अत्याचार, मातृहीन बच्चों की यातना, और पिता की मृत्यु, भोजन का अभाव आदि सुनती है । चीनी, बर्मी, अंग्रेज़ी की,

हिन्दुस्तानी की मिश्रित भाषा की वह कथा शब्दहीन रहकर भी बोलने में समर्थ है । वह अपनी परिस्थितियों से समझौता लेता है । उसकी बहिन को अपने भाई को खिलाने में काम करना पड़ता था । बहिन के बड़ी हो जाने पर विमाता उसे सजाकर कहीं ले जाया करती थी । अबोध बालक अपने बहन की अधखुली आँखों के और ठिठुरती हुई कंपित उँगलियों में अपना हाथ रखकर, उसके मलिन कपड़ों में मुख छिपा लेकर आश्वासन पाता था ।

एक दिन विमाता बहन के सूखे ओठों पर लाली फेर कर फीके गालों पर गुलाबी रंग भर कर रूखेबालों को संवारकर, नये रंगीन वस्त्रों से सजाकर ले गयी । तब से उसे भोजन कपड़े मिलने लगे । आधीरात बीतने पर लौटनेवाली बहन से विमाता बटुये छीन लेती थी । लेकिन उसे मालूम नहीं था कि बहिन को कहाँ ले जाती है और क्या करती है । एक दिन सबेरे होने पर भी बहिन लौटी नहीं ।

उसी दिन से अपने अभागी बहिन की खोज में वह गली-गली फिरता । अन्त में किसी गिरहकटों के दल में फँस गया । किसी न किसी प्रकार वहाँ से मुक्त होकर अपने पिताजी के दोस्त से मिला और उनसे कपड़े के व्यापार के संबंध में उसने कुछ सीखा । इस प्रकार कपड़े के व्यापारी के रूप में चीनी लेखिका के पास पहुँचता है ।

चीनियों को एक दूसरे से पहचानना कठिन है । चीनी फेरीवाला के बाह्य स्वरूप लेखिका के आँखों के सामने यों है - "कुछ समतल मुख एक ही साँचे में ढले-से जान पड़ते है और उनकी एकरसता दूर करनेवाली,

चपटे पर पड़ी हुई सिकुड़न जैसी नाक की गठन में भी विशेष अन्तर नहीं दिखाई देता । कुछ तिरछी, अधखुली और विरल भूरी बरूनियों वाली आँखों की तरल रेखाकृति देखकर भ्रान्ति होती है कि वे सब एक नाप के अनुसार किसी तेज़ धार से चीर कर बनाई गई है । स्वाभाविक पीत वर्ण धूप के चरण चिह्नों पर पड़े हुए धूल के आवरण कुछ ललछौंहे सूखे पत्ते की समानता पा लेता है । आकार-प्रकार, वेशभूषा सब मिलकर इन दूर-देशियों को यन्त्रचालित पुतलों की भूमिका दे देती हैं ।[1] इसी से अनेक बार देखने पर भी एक को दूसरे से पहचानना कठिन है ।

बचपन में महादेवी को लोग चीनी कहकर चिढ़ाया करते थे । लेखिका को लगता उसके पीछे यथार्थ कुछ अवश्य होगा । अन्यथा आज यह सलभूप की चीनी, सारे इलाहाबाद को छोड़कर लेखिका से संबंध क्यों जोड़ने आता । जो भी हो, उस दिन से चीनी उनके यहाँ आने लगा । चीनी चित्रकला में दक्ष है । उनके रंगीन वस्त्रों से उस कला की जानकारी का परिचय मिलता है ।

एक दिन चीन से बुलावा आने पर वह लेखिका से मिलने आता है । उसके जाने का प्रबंध भी करती है । कई वर्ष बीत चुके । उस भाई बहन का कोई पता नहीं । फिर भी वे उनके स्मृतिपटल से हटते नहीं ।

पर्वत पुत्र

"स्मृति की रेखाएँ" का तीसरा चित्र जगबहादुर और घनिया का है । पर्वत पुत्र दोनों भाई बदरीनाथ, केदारनाथ जैसे तीर्थस्थानों में कुली

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महोदवी वर्मा - पृ. 19

का काम करते हैं । बदरीनाथ और केदारनाथ में यात्रा करते समय महादेवी इन दो भाईयों से परिचित हुई ।

भार उठानेवाले कुलियों का जीवन बडा अनोखा है । केदारनाथ होते हुए बद्रीनाथ जाते समय जंगबहादुर सिंह और उसका भाई धनसिंह लेखिका के सामान उठाकर चले गये । एक रूपया प्रतिदिन प्रत्येक की मज़दूरी है जिसमें से एक आना प्रति रूपया केदार का कमीशन है । यात्री लोग पैसा बचाने के लिए विश्राम और भोजन का समय घटाते, कुलियों को दौडने के लिए विवश करते हैं । इन कुलियों की स्थिति अत्यन्त शोचनीय होती है । लेखिका हमेशा शोषितों के वश में रहकर शोषकों का विरोध करती है । गाडी में बैठे बिना पैदल चलनेवाली लेखिका के ये कुली साथी बन सके और उनकी स्मृति को वे पुण्य फल मानती है ।

लेखिका की कुली धनिया का रूप इस प्रकार है "विरल भूरी भौंहें की सरल रेखा और छोटी नाक की कुछ नुकीली नोक उसकी सरलता का भी परिचय देती थी और तेजस्विता का भी । ओठों का दाहिना कोना कुछ ऊपर की ओर खिंचा सा रहता था जिससे उसके मुख पर मुस्कुराने का भाव स्थायी हो गया था । रंग की स्वच्छता और त्वचा की चिकनाहट से प्रकट होता था कि कुली जीवन की सारी कठोरता उसने अभी नहीं झेली है । टाट के पुराने पैजामे और जीन के फटे फोट ने उस पराजित सिपाही की भूमिका दे डाली थी जो उसके मुख के भाव के साथ विरोधाभास उत्पन्न करती थी ।"[1]

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 34

जंगबहादुर सिंह और धनसिंह दोनों कुलियों के प्रति लेखिका के मन में ममता उत्पन्न हुई । यात्रा के बीच धनिया बीमार पड गया । उसके बदले दूसरा कुली मिल सकता था । लेकिन लेखिका धनिया स्वस्थ होने के बाद अपनी यात्रा शुरू करती ।

इन कुलियों की अपनी जीवन गाथा है । नेपाल के छोटे गाँव में रहनेवाला जंगिया जीविका चलाने के लिए गर्मियों के प्रारंभ होते ही इतने दूर तक आता है । वह ऐसा कुली है जो जीवन में कभी सुखपूर्ण पारिवारिक जीवन की कल्पना तक नहीं कर सकता । ये कुलियाँ निर्धनता की मूर्ति है । "पर्वतीय पथ और पत्थरों की चोट से टूटे हुए नाखून और चुटीली उँगलियों के बीच में ढाल बनी हुई मूँज की चप्पल मानों मनुष्य का पशु बनाकर भी खुर न देनेवाले परमात्मा का उपहास कर रही थी । पाँव से दो बालिश्त ऊँचा और ऊनी, सूती पैबन्दों से बना हुआ पैजामा मनुष्य की लज्जाशीलता की विडम्बना जैसा लगता था । किसी से कभी मिले हुए पुराने कोट में, नीचे के मटमैले अस्तर की झाँकी देती हुई ऊपरी तह तार-तार फटकर झालदार हो उठी थी और अब अपने पहनने वाले को एक झबरे वस्तु की भूमिका में उपस्थित करती थी । अस्पष्ट रंग और अनिश्चित रूप वाली दोपलिया टोपी के छेदों से रूखे बाल जहाँ तहाँ झाँककर मैले पानी और उसके बीच बीच में झाँकते हुए सितारों की स्मृति करा देते थे ।"[1]

इन पर्वत पुत्रों के लिए लेखिका माँ है । इसके पहले भी कई उन्हें माँ कहते थे । परन्तु इन पर्वत पुत्रों के माँ सम्बोधन में एक विशेष प्रकार

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 33

का स्नेह, कोमल स्पर्श, और ममता की सहज स्वीकृति रहती थी । बिदा लेते समय दोनों भाई खोये से खडे रहे । जंगवीर आँसू रोकने का प्रयास करता रहा तो धनिया आँसुओं की भाषा में बिदा ले रहा था ।

इन कुलियों का हृदय वहाँ के हिमकण के समान स्वच्छ है । तिल भर सहानुभूति दिखाने पर वे सब कुछ न्योछावर करने के लिए तैयार रहते हैं । इस प्रकार पर्वत पुत्रों का सजीव चित्र इस में मिलता है । समाज में मानवता का अभाव है । मानव के पशुतुल्य जीवन की एक झलक भी इसमें मिल जाती है ।

ठकुरीबाबा

"स्मृति की रेखाएँ" का पाँचवाँ चित्रण ठकुरी बाबा का है । लेखिका और भक्तिन जब कल्पवास के लिए निकलीं तब वहाँ ठकुरीबाबा से उनका परिचय हुआ । महादेवी जी कल्पावास में पर्णकुटी बनाकर भक्तिन के साथ व्रतानुष्ठान कर रही थी । शांति भंग करते हुए उस समय वहाँ एक वृद्ध के नेतृत्व में कुछ ग्रामीणों ने लेखिका के बरामदे में अधिकार जमा लिया था, लेखिका कहती है कि "फटी और अनिश्चित रंगवाली दरी और मटमैली दुसूती का बिछौना लिपटा हुआ धरा था । उसके पास ही रखी हुई एक मैले फटे कपड़े की गठरी उसका एकाकीपन दूर कर रही थी । लाल चिलम का मुकुट पहने, नारियल का काला हक्का बाँस के खम्भे में टिका हुआ था । तूल की गोटवाला काला सुस्ती का बटुआ दीवार से लटक रहा था । खम्भे और दीवार से बंधी डोरी अरगनी पर एक धोती और रूई भरी काली मिरजाई स्वामी के गौरव की घोषणा कर रही थी । निरन्तर तैल स्नान से स्निग्ध लाठी का गाँठगाँठीलापन भी चिकना जान पडता था ।"[1]

रात के समय उस बाबा के नेतृत्व में कुछ ग्रामीण पर्णकुटी के सामने आये । ये गीत गाने लगे । उनका गीत लेखिका को आकृष्ट करता है । एक महीने तक उनके साथ रहने का अवसर उसको मिला । उनका परिचय धीरे धीरे स्नेह में बदल गया ।

यह ठकुरीबाबा भाट वंश-जात है । कविता करने की रुचि उसमें थी । उसकी शादी हुई थी लेकिन पत्नी एक बेटी को देती हुई एक ही वर्ष में चल बसी । उसने अपनी पुत्री का विवाह भी करा दिया । लेकिन कुछ वर्ष बाद जामाता चेतक निकलने से अन्धा हो गया । उनकी उदारता, सहज सौहार्द्र, सरल भावुकता आदि गुण लेखिका को आकृष्ट करती है ।

लेखिका उस बाबा में एक विशेष आकर्षण देखती है । इसलिए कहती है "ठकुरीबाबा अपने समाज के प्रतिनिधि है, उनकी सहृदयता वैयक्तिक विचित्रता से न होकर ग्रामीण जीवन में व्याप्त सहृदयता व्यक्त करती है ।"[1]

उस कल्पवास की पुनरावृत्ति न हो सकी ।

निष्कर्ष

भारतीय समाज के निम्नवर्ग से आये सरल भोले-भाले ग्रामीण दीन-हीन पुरुष पात्रों का जो रेखाचित्र महादेवी प्रस्तुत करती हैं उन में बालक, जवान और बूढ़े भी आते हैं । कुछ उनके अपने नौकर रहे हैं, अन्य मज़दूर, व्यापारी और शिष्य हैं । घरेलू नौकर है जो घर का कार्य भार पूर्णत:

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 91

संभालता है । बच्चों की देखरेख और स्वामी की सेवा बडी तन्मयता से निभाता है । उस पर महादेवी का पूरा विश्वास है । यदि अपनी ओर से गलती होती है तो उसका मन पश्चात्ताप से भर जाता है । मज़दूर रोटी के लिए कठोर यातनाएँ सहकर परिश्रम करनेवाले हैं । बडी ईमानदारी और आत्मीयता पूर्ण व्यवहार करनेवाला व्यापारी, आज्ञाकारी और कर्तव्य परायण शिष्य ये सभी उनके पुरुष पात्र है । इन सब के प्रति महादेवी के मन में अपार प्रेम है । इन सीधे-सादे अभागे लोगों के जीवन में व्याप्त अभावों से लेखिका का मन व्यथित होता है । वे भी अपनी बहिन, या माँ या मालकिन महादेवी को देखना चाहते हैं कि उनका वियोग सहना अत्यन्त कठिन हो जाता है । व्यथा भरे उनके स्मृति चिह्नों को अपनी तूलिका से वे रेखांकित करती हैं कि उनका सूक्ष्म और यथार्थ चित्रण इन रेखाचित्रों में साकार हो उठता है ।

3. युग के महापुरुष और प्रतिष्ठित साहित्यकार संबंधी

"पथ के साथी" और "स्मारिका" में महादेवी साहित्य पथ के अपने साथियों का-जिनसे उनका आत्मीय संबंध था - संस्मरणात्मक चित्रण करती हैं । इसमें वे रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, निराला, प्रसाद, पन्त तथा सियारामशरण गुप्त के व्यक्तित्व और जीवन परिचय के अतिरिक्त उनकी साहित्यिक प्रतिभा पर प्रकाश डालती है ।

"स्मारिका" के अन्तर्गत महादेवी अपने युग के चार महापुरुषों - राष्ट्रपिता महात्मागाँधी, जवाहर भाई, राजेन्द्र बाबू और संत राजर्षि के जीवन स्मृति - चित्र अंकित करती हैं । आधुनिक युग के इन

महापुरुषों के जीवन-चरित्रों के अवलोकन से युग की सामाजिक, सांस्कृतिक तथा अन्य विषयक जानकारी भी प्राप्त होती है । इन महान् व्यक्तियों से लेखिका का व्यक्तिगत संबंध था । अपने जीवन की अनेक घटनाओं और संदर्भों के सहारे अपने साहित्य पथ के सहयात्रियों का संस्मरण पूर्ण सहानुभूति और संवेदना से महादेवी प्रस्तुत करती हैं ।

पथ के साथी

प्रणाम

कवीन्द्र रवीन्द्र

"पथ के साथी" में महादेवी अपने प्रणाम के साथ रवीन्द्रनाथ ठाकुर का रेखांकन करती हैं । वे उनके प्रति अपार श्रद्धा व्यक्त करती हैं । महान साहित्यकार को कृति से अलग करके नहीं देखा जा सकता है । कवीन्द्र रवीन्द्र भी उन विरले साहित्यकारों में थे जिनके व्यक्तित्व और साहित्य में अद्भुत साम्य पाया जाता है ।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर युग के सन्देशवाहक थे । महादेवी को बचपन में गीतांजलि के मधुर गीतों से कवीन्द्र रवीन्द्र की जीवन कथा और उनका दीप्तिमान मुख का काल्पनिक परिचय प्राप्त था । इस कल्पना के अनुमानात्मक परिचय की पृष्ठभूमि में उनके दर्शन किया करती थी । वे लिखती हैं कि प्रत्यक्ष दर्शन में वह कल्पना अधिक उज्ज्वल हो उठी । "मुख की सौम्यता को घेरे हुए वह रजत आलोक मंडल जैसा केश-कल्प । प्रशान्त माथे पर की रेखायें मानों लक्ष्य के संकेत हो ।..... चेतना के बन्धन के समान, मुख पर

बिखरी रेखाओं के बीच में उठी हुई सुडौल नासिका मानों मनुष्य होने के गर्व का प्रमाण पत्र थी । न अहंकार का, न स्पर्धा का न ईर्ष्या का ।'

महादेवी रवीन्द्रनाथ ठाकुर से अपने परिचय का स्मरण करते हुए उनके विभिन्न परिवेषों से उत्पन्न अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करती हैं । महादेवी को हिमालय के प्रति विशेष आसक्ति थी । एक बार पर्वतीय अंचलों में रामगढ़ की कई एकड़ भूमि के साथ कवीन्द्र के छोटे बंगले में जाने का सौभाग्य उन्हें मिला । वहाँ वे अपनी रोगिनी पुत्री के साथ रहते थे । उस रुग्ण पुत्री की चिर बिदा के उपरान्त राम गढ़ भी उनकी व्यथा भरी स्मृतियों का संगी बन गया । वह सारा परिवेश कल्पना-बिहारी महान कवि के आवास-स्थान की स्पष्ट सूचना देनेवाला था । उस कवि-कथा में आसपास रहनेवाले ग्रामीणों ने अपनी स्मृतियों से मानकी रंग भर दिया । किसी वृद्ध ने कहा कि उनकी सहानुभूति के बिना उनके बीमार बेटे की चिकित्सा असंभव थी । और दूसरे ग्वाली के अनुसार उनकी दवा के अभाव में उसकी गाय का जीवन कठिन था । किसी अछूत शिल्पकार ने जलती हुई झोंपडी की रक्षा के लिए कवीन्द्र रवीन्द्र के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की । इस प्रकार लेखिका के संकल्प के कवि रूप में उनके सहृदय पडोसी और वात्सल्य भरे पिता की प्रतिष्ठा भी हुई । बाद में रवीन्द्र के प्रत्यक्ष दर्शन ने लेखिका की कल्पना-प्रतिभा को अधिक दीप्त सजीवता प्रदान की । दूसरी बार जब शान्ति निकेतन देखने का सुयोग प्राप्त हुआ तब वे अपनी मिट्टी की कुटी श्यामली में दिखाई पडे जहाँ वे अपने रचनात्मक कर्म में निरत थे । वे साहित्य के अद्भुत शिल्पी अवश्य थे ।

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 3

तीसरी बार उनसे मिलन जीवन की सन्ध्यावेला में हुआ । उस समय वे शान्तिनिकेतन के अर्थ संग्रह में प्रयत्नशील रहे थे । लेखिका को इस बार उनके प्रति कुतूहलता या प्रसन्नता के स्थान पर गंभीर विषाद की अनुभूति हुई ।

कवीन्द्र रवीन्द्र युग प्रवर्तक साहित्यकार थे । भारत के सभी साहित्यकार कवीन्द्र रवीन्द्र से प्रभावित हुए हैं । महादेवी की मान्यता है कि सुन्दर कल्पनाओं का वायवी संसार सुन्दरतम है । लेकिन जीवन में उसे वास्तविक रूप प्रदान करना बहुत कठिन है । क्योंकि सृजन का कार्य संघर्षपूर्ण है । परिष्कृत भावना, नूतन ज्ञान, नवीन लक्ष्य-युक्त कर्म ही युग-प्रवर्तक महान साहित्यकार की सृष्टि करते हैं । जो जीवन को समग्रता पूर्वक स्वीकार करता है वही उत्तम साहित्यकार हो सकता है । कवीन्द्र रवीन्द्र इस प्रकार के महान साहित्यकार है । जीवन की व्यापकता और उसका मार्मिक स्पर्श केवल साहित्य में ही संभव है । "अपनी कल्पना को जीवन के सब क्षेत्रों में अनन्त अवतार देने की क्षमता रवीन्द्र की ऐसी विशेषता है जो अन्य महान साहित्यकारों में भी विरल है ।"[1]

जीवन के प्रथम चरण में ही कवीन्द्र के सामने देश-विदेश का विस्तृत क्षितिज खुला पडा था, उसे विशाल, शिव और सुन्दर में परिवर्तित करके महान साहित्यकार बनने की क्षमता उनमें थी । वे मानवता के महान चैतालिक है । महादेवी के शब्दों में "जब विराट मानवता साहित्य में स्पन्दित हुई तब जीवन के मूल्यों की स्थापना के लिए तत्व सत्यमय, सत्य शिवमय और

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 8

शिव सौंदर्यमय होकर मुखर हो उठा । जब चिन्तन को उनका स्पर्श मिला तब दर्शन की भिन्न रेखायें तरल होकर समीप आ गई ।"[1]

कवीन्द्र रवीन्द्र महान् द्रष्टा साहित्यकार हैं । उन्होंने जो कुछ लिखा है वह अपने आप में बिलकुल नवीन है । उनके मानव धर्म का अमर सन्देश वर्तमान के अंधकार को भेदकर हमें उज्ज्वल भविष्य की ओर संकेत देता है ।

श्री मैथिलीशरण गुप्त

महादेवी जी गुप्तजी को कब से जानती हैं इसके बारे में कहती हैं कि जिस दिन से खडीबोली की तुकबन्दी से मेरा परिचय हुआ उसे मैं गुप्त जी का परिचय भी मानती हूँ ।

उसी समय "सरस्वती" पत्रिका में गुप्तजी की कविताएँ प्रकाशित हुआ करती थीं । महादेवीजी कहती है कि "गुप्तजी की रचनाओं से मेरा जितना दीर्घकालीन परिचय है उतना उनसे नहीं ।" उनके दाढीवाले चित्र को देखकर लेखिका को अपने उर्दू के मौलवी साहब का स्मरण हो जाता था । उनके बाह्य रूप का वर्णन इतनी सजीवता से हुआ है मानों वे हमारे सम्मुख उपस्थित हो । "साधारण मझोला कद, साधारण छरहरा गठन, साधारण गहरा गेहुँआ या हल्का साँवला रंग, साधारण पगडी, अँगरखा, धोती या उसका आधुनिक संस्करण, गाँधी टोपी, कुरता धोती और इस व्यापक भारतीयता से सीमित सांप्रदायिकता का गठबन्धन सा करती हुई तुलसी कंठी । अपने रूप

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 10

और वेष दोनों में वे इतने अधिक राष्ट्रीय है कि भीड में मिल जाने पर शीघ्र ही खोज नहीं निकाले जा सकते हैं ।"[1]

बाह्य दर्शन में वे साधारण से दिखाई पडते थे, स्वभाव से प्रसन्न और विनोदी । महादेवी उन की मुक्त हँसी और बन्धी दृष्टि के सतह के नीचे कवि के लिए अनिवार्य पैनी दृष्टि, गहरी सहानुभूति और तटस्थ विवेक को पहचानती हैं । वे स्वभाव से लोक संग्रह कवि हैं । उनके साहित्य में प्राचीन और नवीन का सामंजस्य पाया जाता है । प्राचीन संस्कार के होते हुए भी उन्होंने देश, समाज और साहित्य की नवीन प्रवृत्तियों को ग्रहण किया । उन्होंने जीवन को उसकी समग्रता में अपनाया । अपने साहित्य के लिए उन्होंने ऐसी कथाओं को ग्रहण किया जिनकी प्रतिष्ठा जन मानस में हो चुकी है और उन्हीं के द्वारा युगानुकूल पात्रों की सृष्टि की । मुख्यत: उन्होंने अतीत के ऐसे पौराणिक पात्रों को जो पौराणिक कथाओं में खोये हुए या भूले हुए है उन्हें खोजकर नये ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया । प्राचीन संस्कार में नया आलोक भर देने की उनकी शक्ति अक्षुण्ण है । "उनके साहित्य में जो नया है उसका मेरुदण्ड पुराना है और जो पुराना है उस पर रंग नया है ।"[2]

उनके व्यक्तित्व के बारे में महादेवी कहती है "यदि हम लोहे के एक सिरे को आग में रखकर दूसरे को पानी में डुबा दें, तो उष्णता और शीतलता अपनी अपनी सीमा बढाकर लोहे के मध्यभाग में एक सन्तुलित

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 20
2. वही - पृ. 26

सर्दी गर्मी उत्पन्न कर देगी, पर दोनों सिरों पर आग पानी अपने मूल रूपों में रहेंगे ही ।"[1]

अपने जीवन के तीस वसन्त पार करने के पहले ही गुप्तजी दो बार विधुर हो चुके थे । दस सन्तानोंमेंसे एक भी नहीं बचा । इस प्रकार जीवन में स्वजनों के विरह से उन्हें दुःख भोगना पडा । लेकिन व्यक्तिगत सुख दुःखों से वे विचलित नहीं हुए । उन्होंने अवैध उपायों से जीवन से बचे रहने का प्रयत्न नहीं किया । वे बडे वैष्णव भक्त थे । वस्तुतः भक्त और कवि की दृष्टि बिन्दु में अन्तर है । सही अर्थ में गुप्तजी सर्जक कवि और सृष्टिकर्ता के प्रति आत्म समर्पण करनेवाला भक्त दोनों हैं ।

गुप्तजी में न किसी प्रकार का अहंभाव है और न सम्मान पाने की इच्छा । अपने विशेष सम्मान के अवसर पर भी वे कह देते हैं - "अरे महाराज, हमारा तो कभी आपने अपमान नहीं किया, जो अब सम्मान की आवश्यकता हो । हमें बहुत सम्मान मिल चुका है, अब किसी नये का सम्मान होना चाहिए ।"[2] वे विनीत थे । आत्मीय जनों के अनुरोध की उपेक्षा नहीं करते थे । जीवन में उन्हें अर्थ संकट का सामना करना पडा था । लेकिन दूसरों के सामने अपने हाथ नहीं फैलाये, अर्थ दम्भी के प्रति उन्हें घृणा थी । वे किसी को चोट पहुँचाने के उद्देश्य से कुछ नहीं कहते थे । दूसरों के व्यंग्य उनकी हँसी में बुझ जाते थे । निर्दोष के प्रति होनेवाले अन्याय का वे विरोध करते थे ।

---

१. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 23

२. वही - पृ. 35

गुप्तजी को लोग वृद्धा कहकर पुकारते थे । उनका वृद्धा रूप वेदिका से अधिक व्यापक है । परिचित अपरिचित सभी प्रकार के अतिथि उनके अयोध्या के निकट के घर के बैठक खाने में बैठकर देवता बन जाते हैं । उनके जीवन की आलोचना करते हुए महादेवी कहती हैं "यदि अपनी परीक्षाओं में अविचलित रहना भक्त का वरदान है तो गुप्त जी पूर्णकाम है । यदि अपने अहं का समष्टि में मिला देना कवि की मुक्ति है, तो गुप्तजी मुक्त कवि है ।"[1]

सुभद्राकुमारी चौहान

अतीत की चित्रशाला में बहन सुभद्रा की सब रंग रेखाएँ लेखिका के सामने बडी सजीवता से स्पष्ट है । पाँचवीं कक्षा में पढ़ते समय उसका परिचय हुआ । उनका चित्र खींचना सहज नहीं था क्योंकि रेखाओं की समग्रता में उद्भासित उसे दृष्टि से अधिक हृदय ग्रहण करता था । वीर गीतों की कवयित्री सुभद्रा जी का व्यक्तित्व बिलकुल भारतीय नारी का जैसा ही था । "मझोले कद तथा उस समय की कृश देहयष्टि में ऐसा कुछ उग्र या रौद्र नहीं था जिसकी हम वीर गीतों की कवयित्री में कल्पना करते हैं ।"[2] उनका शब्द चित्र है "कुछ गोल मुख, चौडा माथा, सरल भृकुटियाँ, बडी और भावमाती आँखें, छोटी सुडौल नासिका, हँसी को जमा कर गढ़े हुए से ओठ और दृढ़ता सूचक ठुडढी..... सब कुछ मिलकर एक अत्यन्त निश्छल -कोमल उदार व्यक्तित्व वाली भारतीय नारी का ही पता देते थे ।"[3]

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 35
2. वही - पृ. 39
3. वही - पृ. 39

उनकी हँसी असाधारण थी । अपने निश्चित लक्ष्य पथ पर अविचल रहना और सब कुछ हँसते हँसते सहना उनका स्वभावगत गुण था । आठवीं कक्षा में पढ़ते समय ही सेनानी लक्ष्मणसिंह के साथ उनका विवाह हुआ । विवाहोपरान्त घर और कारागार के बीच उनका जीवन चलता रहा । वे किसी मानसिक हीन ग्रंथी से पीड़ित नहीं थी । वे अच्छी गृहणी थी । सामाजिक और राजनीतिक बातों में रुचि रखती थी और घर और बाहर हमेशा व्यस्त रहती थी ।

राजनीतिक जीवन में विद्रोहिणी होने के कारण सुभद्राजी पारिवारिक जीवन में भी विद्रोहिणी बन गयी । महादेवी जी कहती हैं "नारी के हृदय में जो गंभीर ममता सजल वीर भाव उत्पन्न होता है वह पुरुष के शुद्ध शौर्य से अधिक उदात्त और दिव्य रहता है । पुरुष अपने व्यक्तिगत या समूहगत रागद्वेष के लिए भी वीर धर्म अपना सकता है और अहंकार की तृप्ति मात्र के लिए भी । पर नारी अपने सृजन की बाधायें दूर करने के लिए या अपनी कल्याणी सृष्टि की रक्षा के लिए ही रुद्र बनती है । अतः उसकी वीरता के समक्ष रखने योग्य प्रेरणाएँ संसार के कोष में कम है ।"[1]

सुभद्रा जी जो महिमामयी माँ थी उसकी वीरता का उत्स वात्सल्य से कहा जा सकता है । जीवन के प्रति ममता भरा विश्वास ही उनके काव्य का प्राण है । उनमें विद्रोहिणी का स्वर मुखरित है । जीवन और समाज की अनेक समस्याओं पर उन्होंने विचार किया है । देश की स्वतंत्रता के लिए उनका जीवन अर्पित था । स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त

---

१. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ.43

चारों ओर लोगों ने अभाव और पीडा का अनुभव किया तो उन्होंने अन्याय के प्रति विद्रोह किया । कविता में उनका रूप चण्डी का है लेकिन व्यवहार में तरल और पवित्र हैं । जब समाज और परिवार की सत्ता के विरुद्ध कुछ कहना अधर्म माना जाता था तब वे कहती है "समाज और परिवार व्यक्ति को बन्धन में बाँधकर रखते हैं । ये बन्धन देश कालानुसार बदलते रहते हैं और उन्हें बदलते रहना चाहिए वरना ये व्यक्तित्व के विकास में सहायता करने के बदले बाधा पहुँचाने लगते हैं । बन्धन कितने ही अच्छे उद्देश्य से क्यों न नियत किये गए हो..... जहाँ बन्धन है वहाँ असन्तोष है तथा क्रान्ति ।"[1] जब स्त्री का व्यक्तित्व उसके पति से स्वतंत्र नहीं माना जाता था तब वे कहती है "मनुष्य की आत्मा स्वतंत्र है । फिर चाहे वह स्त्री शरीर के अन्दर निवास करती हो चाहे पुरुष शरीर के अन्दर । इसी से पुरुष और स्त्री का अपना अपना व्यक्तित्व अलग रहता है ।"[2]

मृत्यु के बारे में महादेवी और सुभद्रा जी चर्चा करते समय उन्होंने अपना विचार प्रकट करते हुए कहा "मेरे मन में तो मरने के बाद भी धरती छोडने की कल्पना नहीं है । मैं चाहती हूँ मेरी एक समाधि से जिसके चारों ओर नित्य मेला लगता रहे, बच्चे खेलते रहे, स्त्रियाँ गाती रहें और कोलाहल होता रहे ।"[3]

निराला

निराला संबंधी महादेवी की स्मृति की रेखाएँ व्यथा से

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 44
2. वही - पृ. 44
3. वही - पृ. 50

गीली हैं । एकाकी और व्यथित जीवन बितानेवाले निराला जी के साथ महादेवी का संबंध भाई का जैसा था । उनके अस्त-व्यस्त जीवन को व्यवस्थित करने की असफल प्रयास की याद करके वे कहती हैं कि मेरे ढाँचे में यदि वे समा जावे तो उनका अपना व्यक्तित्व कैसे रहेगा ? वे महान कवि थे । लौकिक दृष्टि से निर्धन होते हुए भी हृदय की निधियों में वे सब से समृद्ध भाई हैं । वे बड़े उदार और दानशील थे । पैसे जमाकर महादेवी को वे सौंप देते थे । व्यक्तिगत हिसाब रखना कठिन होते हुए भी महादेवी ने अपने भाई के लिए यह भार स्वीकार किया । एक दिन तीन सौ रूपये मिले और लेखिका को सौंप दिये गये । दूसरे ही दिन किसी विद्यार्थी की परीक्षा-शुल्क जमा करने के लिए पचास रूपये लिये । "सन्ध्या होते होते किसी साहित्यिक मित्र को साठ देने की आवश्यकता पड़ गयी । दूसरे दिन लखनऊ के किसी ताँगेवाले की माँ को चालीस मनीआर्डर करना पड़ा । दोपहर को किसी दिवंगत मित्र की भतीजी के विवाह के लिए सौ देना अनिवार्य हो गया । सारांश यह कि तीसरे दिन उनका जमा किया हुआ रूपया समाप्त हो गया ।"[1] बड़े कष्ट से बनवायी रज़ाई कोट जैसी अपनी नित्य व्यवहार की वस्तुएँ भी सहानुभूति वश दूसरों को दान देने की उनकी आदत थी । महादेवी का कहना है कि "इस निर्मम युग में एक महान कलाकार के पास ऐसा क्या छोड़ा हैं जिसे स्वयं, छोड़कर यह त्याग का आत्मतोष भी प्राप्त कर सके । आश्चर्य की बात है कि जिसकी निधियों से हिन्दी साहित्य का कोष संपन्न है उसने मधुकरी माँगकर जीवन निर्वाह किया है ।

निराला बड़े अतिथि सत्कार प्रिय थे । आलोक रहित सुख सुविधा शून्य अपने घर में वे बड़ी आत्मीयता के साथ अतिथियों का स्वागत

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 53

सत्कार करते थे । अतिथि को वे देवता मानते थे और भोजन बनाने से लेकर जूठे बर्तन माँजने तक का सारा काम स्वयं करते थे । उसमें आज के युग में भी अतिथि सत्कार के वही पुरातन संस्कार थे जो कि ग्रामीण किसानों में मिलते हैं ।

महादेवी उनकी चारित्रिक विशेषता पर प्रकाश डालती है । "उनकी दृष्टि में दर्प और विश्वास की धूप छाही द्राभा है ।"[1] उनका दर्प अहं का सस्ता प्रदर्शन नहीं बल्कि जीवन के निरन्तर संघर्ष और विरोध का सामना करने से उत्पन्न आत्मनिष्ठा है । यह गर्व जब व्यक्ति की सीमा का अतिक्रमण करके सामान्य हो जाता है तब साहित्यकार निराला का यह मान खो जाता है । किसी के प्रति उन्हें अविश्वास नहीं था । यही उनके अनुसार सत्य है जो व्यक्ति के व्यक्त परिचय से प्राप्त होता है । उनकी राय में सत्य का मार्ग ही सरल है तर्क और सन्देह के मार्ग से सत्य की सिद्धि नहीं होती । आगे महादेवी कहती है "किसी अन्याय के प्रतिकार केलिए हाथ लेखनी से पहले उठ सकता है अथवा लेखनी हाथ से अधिक कठोर प्रहार कर सकती है, पर उनकी आँखों की स्वच्छता किसी मलिन द्वेष में तरंगायित नहीं होती । ओठों की खिंची हुई सी रेखाओं में निश्चय की छाप है, पर उनमें क्रूरता की भंगिमा या घृणा की सिकुडन नहीं मिल सकती ।"[2] निराला जी अपने शरीर, जीवन और साहित्य सभी में असाधारण है । उनमें विरोधी तत्त्वों का सामंजस्य है । "वे विचार से क्रान्तदर्शी और आचरण से क्रान्तिकारी है ।"[3] उनके जीवन के विकास पथ में तरह तरह की बाधायें उपस्थित थी । व्यक्तिगत जीवन में उन्हें दुःख ही झेलना पडा । जीवन का वसन्त ही उनके लिए पत्नी-वियोग का

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 59
2. वही - पृ. 60
3. वही - पृ. 61

पतझड बन गया । आर्थिक कठिनाई उन्हें तंग करते रहे । पुत्री के अन्तिम क्षणों में वे निरूपाय दर्शक रहे । पुत्र को भी उचित शिक्षा न दे सकने के कारण उसकी उपेक्षा के पात्र बने । इस प्रकार प्रतिकूल परिस्थितियों में रहकर भी कभी वे हार न मानी । संघर्ष के वे आघात उनकी शक्ति के प्रमाण पत्र है । "जीवन की दृष्टि से निराला जी किसी दुर्लभ सीप में ढ़ले सुडौल मोती नहीं है, जिसे अपनी महार्घता के साथ देने के लिए स्वर्ण और सौंदर्य-प्रतिष्ठा के लिए अलंकार का रूप चाहिए । वे तो अनगढ़ पारस के भारी शिला-खण्ड हैं । न मुकुट में जड कर कोई उसकी गुरूता संभाल सकता है और न पदत्राण बनाकर कोई उसका भार उठा सकता है । वह जहाँ है, वहीं उसका स्पर्श सुलभ है । यदि स्पर्श करनेवाले में मानवता के लौह परमाणु हैं तो किसी ओर से भी स्पर्श करने पर वह स्वर्ण बन जायेगा । पारस की अमूल्यता दूसरों का मूल्य बढ़ाने में हैं । उसके मूल्य में न कोई कुछ जोड सकता है न घटा सकता है ।"[1]

निराला जी अपने युग की विशिष्ट प्रतिभा है । उन्होंने हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया । वे विद्रोही साहित्यकार हैं, वे सतत जागरूक और मानवता के कवि हैं । निराला के समान असाधारण प्रतिभावाले महान कलाकारों के यथार्थ चित्र व्याख्या बहुत ही होता है । "साहित्य के नवीन युग-पथ पर निराला जी की अंक-संस्कृति गहरी और स्पष्ट उज्ज्वल और लक्ष्य निष्ठ रहेगी । इस मार्ग के हर फूल पर उनके चरण का चिन्ह और हर शूल पर उनके रक्त का रंग है ।"[2] निराला जी कायर नहीं थे । किसी से डरते नहीं थे । वे ऐसे साहित्यकार हैं जो अपने पथ की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष बाधाओं को झेलते हुए लक्ष्य स्थान तक पहुँचा है ।

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ . 65
2. वही - पृ. 66

जयशंकर प्रसाद

महादेवी का केवल एक ही बार प्रसाद जी के दर्शन का सौभाग्य मिला था । वह मिलन परिचय कुछ घण्टों का था । उनका साहित्य और उनके संबंध में प्रचलित विचारों और कथाओं की पृष्ठभूमि में महादेवी उनकी स्मृति अंकित करती हैं । उनका रेखाचित्र है " उनका चित्र उन्हें अच्छा हृष्ट-पुष्ट स्थविर बना देता हैं, पर स्वयं न वे उतने हृष्ट जान पडे और न उतने पुष्ट ही । न अधिक ऊँचा न नाटा मझोला कद, न दुर्बल न स्थूल, छरहरा शरीर गौर वर्ण, माथा ऊँचा और प्रशस्त, बाल न बहुत घने न बिरल कुछ भूरापन लिये काले, चौडाई लिए मुख, मुख की तुलना में हल्की सुडौल नासिका, आँखों में उज्ज्वल दीप्ति, ओठों पर अनायास आनेवाली बहुत स्वच्छ हँसी, सफेद खादी का धोती कुरता । उनकी उपस्थिति में मुझे एक उज्ज्वल स्वच्छता की वैसी ही अनुभूति हुई जैसी उस कमरे में संभव है जो सफेद रंग से पुता और सफेद फूलों से सजा हो ।"[1]

काशी की गलियों में "सुँघनी साहू" की खोज करते प्रसाद जी के घर महादेवी पहुँची । प्रसाद जी ने स्वयं उनका स्वागत किया । उन दिनों वे कामायनी का दूसरा सर्ग लिख रहे थे । वैदिक साहित्य, भारतीय दर्शन आदि पर काफी चर्चा हुई, उनके ज्ञान की व्यापकता, कम शब्दों में अधिक कहने की उनकी क्षमता का सही परिचय इस समय लेखिका प्राप्त कर सकी । जब प्रसाद जी का स्मरण करती है तब महादेवी के सामने हिमालय के ढाल पर खडे ऊँचे देवदारु वृक्ष का चित्र अंकित होता था जो हिमपात, प्रखर-धूप, मूसलधार वर्षा और तेज़ आँधी के संघर्षों में भी निष्कम्प, निश्चल खडा रहा ।

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 69-70

प्रसादजी का जीवन संघर्षमय था । लेकिन महान प्रतिभाशाली की जीवन शक्ति को कठोर संघर्ष भी कम क्षीण करते हैं । अपने जीवन में संघर्षों के झेलते हुए आगे बढ़नेवाले कलाकारों में प्रसाद भी आते हैं । उनका जन्म एक संपन्न परन्तु ऋणग्रस्त प्रतिष्ठित परिवार में हुआ । भाई बहिनों में कनिष्ठ होने के कारण कुछ अधिक मात्रा में स्नेह-दुलार प्राप्त हो सका । किशोर अवस्था में वे एक ओर शारीरिक स्वास्थ्य के लिए बादाम खाते और कुश्ती लडते रहे और दूसरी ओर मानसिक विकास के लिए कई शिक्षकों से संस्कृत, फारसी, अंग्रेज़ी आदि का ज्ञान प्राप्त करते रहे । महादेवी के अनुसार प्रसादजी का व्यक्तिगत जीवन अकेलापन की अनुभूति से भरा था । "तरुणाई में ही वे माता-पिता, बडे भाई, दो पत्नियों और इकलौते पुत्र की वियोग व्यथा झेल चुके थे । सब प्रकार के अन्तरंग बहिरंग संघर्षों में मानसिक सन्तुलन बनाये रखने के प्रयास में ही उन्हें उस आनन्दवादी दर्शन की उपलब्धि हो गई हो ।"[1] उनको आनन्दवादी कहने के संबंध में महादेवी का विचार है "कोई महान कवि विशुद्ध आनन्दवादी दर्शन नहीं स्वीकार करता क्योंकि अधिक और अधिक सामजंस्य के पुकार ही उसके सृजन की प्रेरणा है और वह निरन्तर असंतोष का दूसरा नाम है ।"[2]

प्रसाद ने साहित्य के विविध क्षेत्रों को समृद्ध करके अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है । भारती भण्डार का जन्म, इन्दु, जागरण जैसी पत्रिकाओं का प्रकाशन भी उन्होंने किया । साहित्यिक प्रतिभा के साथ उनकी व्यवहार बुद्धि भी कुछ असाधारण थी । बुद्धि के आधिक्य से पीडित हमारे युग को प्रसाद का "कामायनी" अपने काव्य सौंदर्य और

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ . 73
2. वही - पृ. 77

समन्वयात्मक जीवन दर्शन के कारण सब से महत्वपूर्ण दान है ।

कई दिनों से वे रोगग्रस्त थे । किसी को ज्ञात नहीं था कि रोग क्या है ? इतने बडे कलाकार का अंतरंग मित्र ऐसा कोई नहीं था जो उनके जीवन मरण के द्वन्द्व के बीच उन्हें सहायता देता । प्रसाद जैसे मनस्वी और संकोची व्यक्ति के लिए किसी से स्नेह और सहानुभूति की याचना भी संभव नहीं थी । उन्होंने संघर्षों से लडा और अपने को बचाने का कोई प्रयत्न नहीं किया । उस विजयी देवदारु के जडों को जल की क्षुद्र धारा के प्रवाह ने तिल तिल काट कर उसे धरती पर गिरा दिया । उनके जीवन के बारे में महादेवी कहती है "प्रसाद का जीवन, बौद्ध विचारधारा की ओर उनका झुकाव, चरम त्याग बलिदान वाले करुण कोमल पात्रों की सृष्टि, उनके साहित्य में बार-बार अनुगुँजित करुणा का स्वर आदि प्रमाणित करेंगे कि उनके जीवन के तार इतने सधे और खिंचे हुए थे कि हल्की सी कम्पन भी उनमें अपनी प्रतिध्वनि पा लेती थी ।"[1]

जब "कामायनी" का प्रकाशन हो चुका तब उनके महाप्रयाण की वेला आ पहुँची थी ।

सुमित्रानन्दन पंत

सुमित्रानन्दन पंत का वास्तविक नाम गोपाल दत्त था । उनकी असाधारण बुद्धि ने श्रुति मधुर कवित्वमयी सुमित्रानन्दन नाम अपने लिये

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 75

खोज निकाला । श्री सुमित्रानन्दन पंत जी से महादेवी का प्रथम परिचय एक कवि सम्मेलन हुआ । सुभद्राजी के उपरान्त महादेवी के दूसरे परिचित कवि-व्यक्ति पन्त जी ही हैं । वेशभूषा, रहन सहन, सूक्ष्म भाव, चिन्तन सब कुछ उनके असाधारण हैं । उसका रेखाचित्र है "आकण्ठ, अवगुण्ठित करती हुई हल्की पीताभ सी चादर, कंधों पर लहराते हुए कुछ सुनहले से केश, तीखे नक्श और गौर वर्ण के समीप पहुँचा हुआ गेहुआ रंग, सरल दृष्टि की सीमा बनाने के लिए लिखी हुई सी भावें खिंचे हुए से ओंठ, कोमल पतली उँगलियों वाले सुकुमार हाथ ।"[1] व्यवहार में वे अत्यन्त शिष्ट मधुर भाषी और विनोदी हैं । वे इस बात पर विशेष ध्यान रखते थे कि उनकी कोई बात किसी को किसी तरह की चोट न पहुँचाए ।

पन्तजी हिमालय के पुत्र है । उनका जन्म स्थान कूर्मांचल (कौशनी) है । प्रकृति की उज्ज्वल सौंदर्य के लिए उनका जन्मस्थान कौशनी प्रसिद्ध है । उनके जन्म के साथ ही साथ उनकी माता का देह वियोग हुआ । मातृहीन और भाइयों से छोटा होने से उन्हें सब से प्यार दुलार पाने का अधिकार मिल गया । स्वभाव से वे संकोची और अन्तर्मुखी थे । वे प्रकृति के कवि हैं । उन्हें प्रकृति के "झरनों-नदियों में लास दिखाई दिया, पक्षियों, भ्रमरों में संगीत सुनाई दिया, फूलों कलियों में हँसी की अनुभूति हुई, प्रभात का सोना मिला, रात में रजतराशि प्राप्त हुई, पर कदाचित् हँसने-रोने वाला हृदय इस भुलभुलैयया भरी चित्रशाला में खोया रहा ।"[2] उनकी दृष्टि में प्रकृति के पास सौंदर्य है आँसू नहीं । सुमित्रानन्दन पंत जी को स्वभाव और शरीर में

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 81
2. वही - पृ. 84

असाधारण कोमलता मिली है । उनको जीवन में अनेक सम-विषम परिस्थितियों से संघर्ष करना पड़ा है । आर्थिक दृष्टि से संपन्न की ऊँची सीढ़ी से विपन्नता की अन्तिम सीढ़ी तक उन्होंने अनेक उतार चढ़ाव देखे हैं । शरीर को रंगों से जूझना पड़ा है । लेकिन उनके सुकुमार शरीर और कोमल प्रकृति ने सब अग्नि-परीक्षायें सामना कर ली है । महादेवी की राय में "जिस प्रकार आकाश की ऊँचाई से गिरनेवाला जल किशलयों और फूलों पर स्वच्छता के अतिरिक्त और कोई चिह्न नहीं छोडता उसी प्रकार संघर्षों ने उनके जीवन पर अपनी सूक्ष्मता और कठोरता का इतिहास नहीं लिखा है ।"[1] इसी बीच वे जीवन की कठोर वास्तविकता की ओर आकृष्ट हुए । फलतः साहित्य में भी यथार्थ भूमि की संभावनाओं को उतारने का प्रयत्न उन्होंने किया । इस प्रकार उनकी काव्य साधना का विकास होता रहा ।

श्री सियाराम शरणगुप्त

गाँधीवादी कवि सियाराम शरण गुप्त से महादेवी का संबंध कुछ ऐसा था कि उन्होंने उनकी जीजी के स्थान ग्रहण किया था । उनके छोटे आकार का वर्णन वे इस प्रकार करती हैं "कुछ नाटा कद, दुर्बल शरीर छोटे और कृश हाथ पैर, लम्बे उलझे रूखे-से बाल, लम्बाई लिये सूखे मुख, ओठ और विशेष तरल आँखों के साथ भाई सियाराम शरण ऐसे लगते हैं, मानों ठेठ भारतीय मिट्टी की बनी पकी कोई मूर्ति हो, जिसकी आँखों पर स्निग्धता का गाढ़ा रंग फेर कर शिल्पी, शेष अंगों पर फेरना भूल गया है ।"[2] शुद्ध खादी-धारी वे वस्त्र का वज़न कहीं दुर्बल शरीर से अधिक न हो जायें, इस

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 85
2. वही - पृ. 89

भय से सदा कम वस्त्र पहनते हैं । यद्यपि वेषविधान में वे साहित्यकार नहीं प्रमाणित होते फिर भी वे कुशाग्र बुद्धिवाले जिज्ञासु कवि हैं ।

भाई सियाराम पहले कवि है फिर उपन्यासकार तथा निबंधकार । उनका साहित्य उनके उज्ज्वल चरित्र का पवित्र परिचय है ।

परिवार में न सब से छोटा और न सब से बडा होने पर भी उन्हें सब का विश्वास और प्रेम प्राप्त हुआ । अन्य बच्चों के समान वे न विनोद प्रिय थे और न कलह प्रिय । किशोरावस्था में उनकी शादी हो गई । लेकिन असमय ही पत्नी ने विदा ली । अद्भुत संयम से उन्होंने वियोग व्यथा सह ली । श्वास रोग से उन्हें निरन्तर जूझना पडता था । फिर भी संपूर्ण बाधाओं से विजय प्राप्त की । अस्वस्थ और दुर्बल शरीर के कारण ही उनके आस-पडोस में आना-जाना और अधिक यात्राएँ करना संभव नहीं था । उनके व्यक्तित्व का मुख्य पहलू सरलता है ।

शिक्षा तो उन्हें अधिक न प्राप्त हुआ था । उनका साहित्य पढ़कर हमें ऐसा लगता है कि महात्मागाँधी एवं कवीन्द्र का प्रभाव उनपर ज़्यादा है । "ऐसे व्यक्तियों की संख्या कम रहे जिन्होंने महात्मा को जन-जन में बिखरी मानवता का, पुँजीभूत विराट मानकर अपने आप को मान के नाते उनके आत्मीय और अविच्छिन्न अंशों समझा ।"[1] उन्होंने जिसे ग्रहण करने लायक समझा उसे पूर्णत: अपने अस्तित्व समर्पण के साथ स्वीकार किया और जिसे अनुचित समझा उसकी उपेक्षा की ।

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 93

महादेवी के अनुसार "हमारे युग के इस महान कवि की कथा अपनी स्पष्टता में भर रहस्यमयी है । अपने विचार, साहित्य और साधना में उन्होंने किसी का अनुकरण नहीं किया । अतुलनीय संयम रखनेवाले गुप्तजी का चित्र अत्यन्त स्नेह से महादेवी ने अंकित किया है ।

स्मारिका

महात्मा गाँधी

युग की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए महापुरुषों का जन्म होता है । महात्मागाँधी का जन्म हमारे देश के लिए ही नहीं विश्व भर के लिए एक ऐतिहासिक घटना थी । गाँधीजी का समय ऐसा था कि विश्वभर में साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, पूँजीवाद आदि राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों से मानव जाति उच्च-नीच वर्गों में विभक्त थी । आर्थिक धरातल पर मानव-समानता का उद्घोष करनेवाले मार्क्स के सिद्धांतों को क्रान्तदृष्टा लेनिन ने क्रियात्मक रूप दे दिया । उन्होंने भौतिक वाद का प्रचार किया । दूसरी ओर अध्यात्म के प्रचार के लिए गाँधीजी जैसे महान व्यक्तित्व की आवश्यकता थी । महादेवी ने गाँधीजी के दर्शन किये हैं । उनकी आकृति और उनके वैशिष्ट्य के बारे में वे लिखती हैं-"कृश कृश, लम्बी और इस्पाती स्नायुजाल से किसी उज्ज्वल, श्यामवर्ण देह को देखकर लगता था मानों किसी साँचे में ढली लौह प्रतिमा को ज्वाला से धोकर स्वच्छ करा दिया हो । प्रलम्ब बाहुओं पर संभालती चौड़ी हथेलियों की लम्बी और दृढ़ गठित उँगलियों में एक विशेष कोमलता और विद्युत् का असामान्य संगम था ।..... क्षीण कटि

और कृश उदर के ऊपर उभरे चौड़े वक्ष की अथाह करुणा के समुद्र को ही नहीं बाँध रखा था, वह मनुष्य की क्रूरता के हर रूप को भी अपनी गहराई में डुबा देने की अमोघ शक्ति रखता था ।"[1] उनके व्यक्तित्व का प्रभाव अद्भुत था । "विभिन्न विचारों के केन्द्र सा बड़ा सिर, चिन्तन रेखाओं युक्त माथा, स्वाभिमान का पता देती हुई सीधी नासिका, दृढ़ निश्चय व्यक्त करती हुई चिबुक के सौंदर्य पर कोई दावा नहीं था, परन्तु एक बार उस मुख को देखकर भूलना कठिन ही नहीं दुष्कर था ।"[2] ऐसे महापुरुष गान्धीजी के सब लोग आराधक बन गए ।

गाँधीजी का कार्यक्षेत्र व्यापक था । विश्व भर के लोक हृदय ने उन्हें अपना माना । वे एक साथ समग्र जीवन का स्पर्श करते हैं । धर्म, राजनीति, दर्शन, समाज, साहित्य जीवन के सभी क्षेत्रों की विषमताओं के साथ उनकी विद्रोही स्थिति है । गाँधीजी ने देश को विदेशी-दासता से मुक्त करने और भारतीय जीवन की विषमता को दूर करने केलिए सारी शक्तियों का उपयोग किया । समाज, आचार, धर्म, भाषा, शिक्षा, साहित्य आदि जीवन के सभी क्षेत्रों में उनका महत्वपूर्ण योगदान है । वे मौलिक चिन्तक थे । परन्तु अतीत-युगों की किसी भी मूल्यवान उपलब्धि को न उन्होंने अस्वीकार किया और न अपने चिन्तन की तुलना में उसका मूल्य घटाया । उनका आत्मविश्वास दूसरों की महानता से शक्ति प्राप्त करता था । सत्य अहिंसा और प्रेम को उसके असीम विस्तार में अतल गहराई में स्वीकार करके गाँधीजी कर्म निरत रहे । गाँधीजी सर्वकालीन जीवनमूल्यों के प्रतीक है ।

---

1. महादेवी साहित्य - स्मारिका - पृ. 384
2. वही - पृ. 385

उनकी प्रसन्न सरल हँसी, आँखों की असामान्य आकर्षण-शक्ति अद्भुत थी । गाँधीजी जैसे सार्वभौम व्यक्तित्व का अभिनन्दन उनकी पार्थिव मूर्ति-प्रतिष्ठा में नहीं, मनुष्य के हृदय में सत्य-प्रतिष्ठा में है ।

जवाहर भाई

"मझोला कद, दीप्त गौर वर्ण, उज्ज्वल स्वच्छ, खादी के परिधान में वेष्टित दुबली पतली पर सशक्त देहयष्ठि, कुछ अस्तव्यस्त केशों के नीचे चौड़ा उज्ज्वल माथा, सीधी नासिका, लम्बोतरा मुख, दृढ़ ठड्ढी, हँसी से भरे ओठों में ईषित् दृश्य दन्त पंक्ति । काली पुतलियों से युक्त आँखें न बड़ी थीं न छोटी, किन्तु उनकी दृष्टि में एक स्वप्निल विशेषता थी । सामने खड़े व्यक्ति को ऐसा लगता था मानों वे आँखें उसके पार कुछ देख रही हैं ।"[1] महादेवी ने इन के दर्शन क्राइस्थवेट कोलेज में पढ़ते समय अपनी आचार्या के साथ आनन्दभवन में किये । अर्द्ध शति पूर्व की यह बात धूप-छाह सी अस्पष्ट है । उस धुँधली स्मृति के साथ इधर-उधर कुछ जोड़कर उनकी पूर्ण आकृति बनाई गयी । विभिन्न अवसरों पर कई बार नेहरूजी से उनका मिलन हुआ था । स्वतंत्रता संग्राम के सैनिक और राष्ट्र के नेता रहते समय भी उनसे मिलती थी । उनका स्नेह और विश्वासपूर्ण मानवीरूप स्थाई रहा । कमला और इन्दिरा के प्रति उनकी आत्मीयता और स्नेह, बापू के प्रति समर्पण की भावना ये सब देखने का सुअवसर महादेवी को मिला था । किसी भी स्थिति में उनके मानवीय रूप में कोई अन्तर नहीं देखा गया । नख से शिख तक उनका संपूर्ण शरीर तरुणाई और उत्साह से आपूरित था । प्रधानमंत्री होकर कार्य-व्यस्त रहने पर भी

---

1. महादेवी साहित्य - स्मारिका - पृ. 390

दूसरों की सुविधा की चिन्ता वे करते थे । प्रसंगवश महादेवी उनसे संबंधित अतीत की कई घटनाओं का स्मरण करती है । उनके बरामदे में उस समय भूलकर छोड़े गये बस्ते को सौंप देते हुए उन्होंने जो कुछ कहा था, सुदूर अतीत की वह डाँट स्नाने पर भी महादेवी ने उसमें आत्मीयता का स्वर सुना । कृष्ण हाथी सिंह और लेखिका सहपाठी थीं । अपनी अध्यापिका के आदेश पर कुछ पत्राचार होने का पता लगने पर उन्होंने आदेश दिया कि किसी कार्य का अर्थ बिना समझे वह न करे । नेहरूजी प्रयाग महिला विद्यापीठ के कुलपति थे । बाहर से हठी और असहिष्णु दिखाई पड़ने पर भी वे दूसरों के मत को महत्व देते थे । एक बार महादेवी प्रधानमंत्री से मिलने गयी । प्रधानमंत्री की व्यस्तता से दस दिनों से लोग मिलन की प्रतीक्षा में पड़े रहते थे । उनके सचिव से यह बात सुनकर महादेवी का मन विद्रोह कर उठा । अपने आने की सूचना उन तक पहुँचाने पर नेहरूजी स्वयं आकर महादेवी को अपने कमरे में ले जाकर हालचाल पूछने लगा । एक बार बुद्धा के साथ उनकी अतिथि बनने का अवसर भी महादेवी को मिला । उनके शिष्टाचार, विनोदी और स्नेही आतिथेय भी सब को विस्मित कर देते हैं । महादेवी की राय में "व्यक्तिगत संबंधों की स्वीकृति और निर्वाह में उनके साथ तुलना में ठहरने वाले व्यक्ति कम है ।"[1]

राजेन्द्र बाबू

महादेवी को पटना स्टेशन पर अपने भाई से मिलने जाते वक्त सर्वप्रथम राजेन्द्र बाबू के दर्शन का सुअवसर मिला । पहली दृष्टि में ही

---

1. महादेवी साहित्य - स्मारिका - पृ. 394

राजेन्द्र बाबू की आकृति अंकित हो चुकी थी । उसमें वर्षों के बाद भी न कोई रेखा जोड़ी न कोई नया रंग भरा है । उनका रेखाचित्र महादेवी यों खींचती हैं–"काले घने पर छोटे कटे हुए बाल, चौड़ा मुख, चौड़ा माथा, घनी भृकुटियों के नीचे बड़ी आँखें, मुख के अनुपात में कुछ भारी नाक, कुछ गोलाई लिये चौड़ी ठुड्डी, कुछ मोटे पर सुडौल ओंठ, श्यामल झाँई देता हुआ गेहुआ वर्ण, बड़ी बड़ी ग्रामीणों जैसी मूँछें जो ऊपर के ओंठ को ही नहीं ढँक लेती थीं । नीचे के ओंठ पर भी रोमिल आवरण डाले हुए थीं । हाथ, पैर, शरीर सब में लम्बाई की ऐसी विशेषता थी जो दृष्टि को अनायास आकर्षित कर लेती थी ।"[1]

राजेन्द्रबाबू की मुखाकृति और उनके शरीर के संपूर्ण गठन में वे एक सामान्य भारतीय ग्रामीण कृषक का प्रतिनिधित्व करते थे । वे अपने बच्चों को भी सीधा-सादा और संयमी रहने का उपदेश देते थे । महादेवी की राय में वे प्रतिभाशाली और बुद्धिमान थे । उनकी प्रतिभा, बुद्धि और गंभीर संवेदनशीलता उनकी सामान्यता को गरिमा प्रदान करती थी । महादेवी की राय में राजेन्द्रबाबू की सारी व्यवस्था अस्तव्यस्तता का पर्याय है ।

महिला विद्यापीठ महा विद्यालय का शिलान्यास करने वे प्रयाग आये । तब उनके निकट संपर्क में आने का अवसर महादेवी को मिला । उनकी पत्नी भी पुराने विचार रखनेवाली साध्वी, सरल और ममतामयी थी । राजेन्द्रबाबू एक कर्मनिष्ठ राष्ट्रपति रहे । महादेवी की मान्यता है "जीवन मूल्यों की परख करनेवाली दृष्टि के कारण उन्हें देशरत्न की उपाधि मिली और मन की सरल स्वच्छता ने उन्हें अजात शत्रु बना दिया ।"[2]

---

1. महादेवी साहित्य -भाग 2 - स्मारिका - पृ. 397-398
2. वही - पृ. 400

राजर्षि टण्डन

संत पुरुषोत्तम दास जी का व्यक्तित्व असाधारण था । वे सत्य के कुशल शिल्पी थे । और कर्मनिष्ठ साधक थे । उनका संपूर्ण जीवन मानव कल्याण के लिए समर्पित था । वे अतिसाधारण, चिर दरिद्र, भारतीय जन का प्रतिनिधि थे । आकार और वेष-विधान में वे संत विनोबा से मेल खाते थे । "कृश, दुर्बल, लम्बी देहयष्टि, कुछ लंबी मुखाकृति, नुकीली नासिका, नुकीली श्मश्रु, कुछ बडे केश, पीठ पर पैबन्द लगा खादी का कुर्ता, घिसे सूतवाली पुरानी धोती, चर्म रहित रबर के अस्त-व्यस्त सिले चप्पल आदि मिलकर..... । उनकी सहज हँसी की सरलता में एक रस जलनेवाले आँखों के दीपक, उनके मुख को एक कोमल कठिन छायालोक में उद्भासित कर देते हैं ।"[1] राजनीतिज्ञ होकर उनका लक्ष्य केवल राजनीतिक मुक्ति नहीं सांस्कृतिक, सामाजिक आध्यात्मिक मुक्ति भी था । उनका जीवन प्रारंभ से ही संघर्षमय था । लोक सेवा के लिए उनका जीवन समर्पित था । उनकी राजनीति जीवन-नीति से नियंत्रित थी । देश की मुक्ति के साधन के रूप में न होकर साध्य के रूप में जब राजनीति को अपनाया तब उन्हें उसके विरुद्ध संघर्ष करना अनिवार्य हो उठा । अतः महादेवी कहती हैं कि "टण्डन जी जैसे साधकों का, राजनीति की लक्ष्मण रेखा में बन्दी न रहना ही स्वाभाविक कहा जायेगा । जीवन सीमित है - उसमें प्रहर बनते मिटते हैं, उषकाल और संध्याबेला आते-जाते हैं, किन्तु साधना में न कोई प्रहर है न याम न उसमें प्रभात है न संध्या । वह तो कालातीत आलोक की अकूल अछोर तरंग है जो जीवन को स्पर्शोज्ज्वल कर देती है ।"[2]

---

1. महादेवी साहित्य भाग 2 - स्मारिका - पृ. 402
2. वही पृ. 403

निष्कर्ष

"पथ के साथी" और "स्मारिका" में महादेवी जी अपने युग के प्रतिभावान साहित्यकारों और राष्ट्रीय नेताओं का संस्मरण समन्वित रेखाचित्र प्रस्तुत करती हैं । इन महानुभावों ने साहित्य या राजनीति के नवीन युग पथ को उज्ज्वल बनाने का महत्वपूर्ण कार्य किया । इन सबों से महादेवी का किसी न किसी प्रकार का संबंध अवश्य था जिसके आधार पर अपनी कल्पना की परिधि में उनके रूप पहचानती थी । अतीत के ये स्मृति चित्र पुनर्जीवित होकर प्रकट हुए । कल्पना के उन मानसिक चित्रों में कहीं दीप्ति आयी, कहीं कुछ रेखायें जोड दी गयी और कहीं कुछ स्मृति-खण्ड जुड गए । साहित्यिक बन्धुओं की मुक्त, सरल, कुतूहल भरी हँसी को वे ही पहचान सकती हैं । उनके स्वभाव की सौम्यता, सरलता, दृढ़ता, आँखों की चमक, उज्ज्वलता और आकर्षणीयता से वे ही परिचित हैं । उनके व्यक्तित्व, आकृति, जीवन, साहित्य और देश को उनकी देन का परिचय विशिष्ट शब्दों, रेखाओं और रंगों में बाँधकर बडी तन्मयता से इन स्मृतिचित्रों में वे प्रस्तुत करती हैं । वे सब आर्थिक या पारिवारिक व्यथा से पीडित थे । निराला का संपूर्ण रेखाचित्र उनकी निर्धनता के चित्रों से भरा पड़ा है । प्रसाद और रवीन्द्र बाबू को छोड़कर अपने पथ के अन्य सभी साथियों से वे हमेशा मिलती जुलती रहती थी । निराला और पन्त से उनका संबंध भाई के समान था और सुभद्राजी उन्हें बहन के समान थी । मैथिलीशरण गुप्त जी और सियाराम शरण गुप्त जी उनके विशेष आदर के पात्र थे । कवीन्द्र रवीन्द्र और प्रसाद के प्रति उनकी श्रद्धा अपार थी । अपने इन प्रिय साथियों के महाप्रयाण पर लेखिका अपना हार्दिक दुःख व्यक्त करती हैं ।

4. पशु-पक्षी संबंधी

महादेवी के मन में दीन दुःखियों के प्रति विशेष ममता थी । वह स्नेह केवल मनुष्य तक सीमित नहीं था ; मानवेतर पशु-पक्षियों तक व्याप्त था । उनके घर के चिडिया-खाने में अनेक पशु-पक्षी पालित थे । अपने पढ़ने लिखने के कमरे में भी वे पिंजरा रखा करती थीं और इनके निरन्तर संपर्क में रहीं । इनके जीवन की निरीहता, कोमलता और सौंदर्य से वे अत्यधिक प्रभावित हुई थीं ।

"मेरा परिवार" में पशु-पक्षियों से संबंधित सात स्मृतिचित्र है । नीलकण्ठ, गिल्लू, सोना, दुर्मुख, गौरा, नीलू, निक्की, रोजी और रानी ये सभी पशु-पक्षी महादेवी के परिवार के सदस्य है । लेखिका कहती है "स्मृति - यात्रा में पशु-पक्षी ही मेरे प्रथम संगी रहे हैं ।"[1] इसमें महादेवीजी पशु-पक्षियों के सहज, सूक्ष्म, क्रियाकलापों का कलात्मक शब्द-चित्र प्रस्तुत करती हैं । इन गद्य चित्रों के पात्र साधारण मानव न होते हुए भी मानवीय संवेदना की सूक्ष्म अनुभूति से ओतप्रोत है । महादेवी के बाल्यकाल के जीवनानुभव इसमें स्पष्ट झलकते हैं । क्रास्थवेट कॉलेज की पश्चिमी सीमा पर आम, अमरूद, नीबू कटहल आदि का बगीचा था । महादेवी रोज़ वहाँ जाया करती थीं । मन धीरे धीरे उस प्रकृति की सुन्दरता पर इतनी मुग्ध हो गयी कि उसके अभाव की चिन्ता तक नहीं कर सकती थी । बाद में इन मानवेतर संगियों के परिचय चिह्नों को स्मरण करने और उन्हें शब्द-चित्रों में उतारने लगी । "अतीत में मिले खोए व्यक्तियों या पशु-पक्षियों का स्मरण करते समय कभी कभी मेरे इतने आँसू गिरे हैं कि लिखा हुआ कागज़ गीला हो जाने के कारण नष्ट हो गया है

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - आत्मिका - पृ. 13

और कभी कभी हँसी ने मुझे इतना अस्थिर कर दिया है कि लिखावट टेढ़ी-मेढ़ी हो गयी है । मेरे संस्मरणों में मेरे आँसू हँसी के ही नहीं, अनेक तीव्र आवेगों के गहरे चिन्ह अलग-अलग पहचाने जा सकते हैं ।"[1]

मेरा परिवार

कुक्कुट शावक

"मेरा परिवार" के सात स्मृतिचित्रों के अतिरिक्त "आत्मिका" में कुक्कुट शावक के प्रति महादेवी अपनी सहानुभूति व्यक्त करती हैं ।

पाँचवीं कक्षा में पढ़ते समय स्कूल के पास के बगीचे की बागवाली द्वारा पालित चितकबरी बकरी और एक पीली चोंचवाली सफेद मुर्गी से महादेवी की मित्रता हुई । वह रोज़ उन्हें कुछ खिलाती थी और उनके संपर्क में अत्यन्त सुख का अनुभव करती थी । एक दिन सफेद मुर्गी को अपने पाँच बच्चों के साथ देखा । वे "सेमल की रूई की गेंद" के समान दिखाई पडे थे । आश्चर्य और कुतूहल भरी दृष्टि से वे रोज़ उनकी गिनती लिया करती थीं । एक दिन उनमें से एक शावक गायब हो गया । पूछने पर मालूम हुआ कि उसे छात्रावास की नई मिस साहब के व्यंजन के लिए दिया गया है । लेखिका खाना पीना छोडकर उस शावक के लिए रोने लगी । उस शावक की प्राण रक्षा के लिए वह व्यथित हो उठी । उसके दुःख का कारण जानकर शावक वापस दिया गया । तब से यह निर्णय किया गया कि अपने मानवेतर संगियों की संख्या, परिचय चिन्ह आदि स्मरण नहीं रखेगी तो उन पर अपने संरक्षक के प्रमाण के रूप में कुछ साधन

---

1. महादेवी साहित्य - भाग 2 - अपनी बात - पृ. 10-11

सुरक्षित रखना है । इसी कारण लेखिका ने सब से पहले कुक्कुट शावक के परिचय चिन्हों को शब्दबद्ध किया । "रंग पीलापन लिये सफेद, आँखें गोल लाल रूबी के रंग की । चोंच गुलाबी जिसके किनारे पीली रेखाएँ हैं । पंजे गहरे लाल, नाखून सफेद, चलने में डगमगाता है । पंख कुछ-कुछ निकले हैं, उनकी नोक पर कत्थई बूँदें हैं । काकुन या टूटे-चावल खा सकता है । नाम रख- गया - मूँगा ।"[1] बचपन की शावक "मूँगा" के स्मृत्यंकन की परंपरा आगे विकसित हुई ।

नीलकण्ठ मोर

पहला स्मृतिचित्र नीलकण्ठ मोर का है । प्रयाग के नरवास-कोने से महादेवी ने दो मोर के बच्चे खरीद लिये । दोनों अत्यन्त थके दुबले पड़े थे कि मोर मान लेना कठिन था । कबूतर, खरगोश, तोते आदि के साथ इन्हें भी लेखिका के चिड़ियाघर में स्थान मिला । लेखिका के परिचरण से उनको नव जीवन मिल गया । धीरे धीरे दोनों मोर बच्चे बढ़ने लगे । नीली गर्दन होने के कारण एक का नामकरण "नीलकण्ठ" और दूसरे का जो छाया के समान उसके साथ रहने के कारण "राधा" हुआ । महादेवी उनके रूप और गति का सूक्ष्म वर्णन इस शब्द चित्र में करती हैं - "नीलकण्ठ का गर्दन ऊँचा कर देखना, विशेष भंगिमा के साथ उसे नीचा कर दाना चुगना, पानी पीना, टटीकट शब्द सुनना आदि क्रियाओं में जो सुकुमारता और सौंदर्य था, उसका अनुभव देखकर ही किया जा सकता है । गति का चित्र नहीं आँका जा सकता ।"[2] नीलकण्ठ में नेतृत्व, प्रेम, स्नेह सभी गुण विद्यमान हैं । राधा के बिना वह प्रसन्न नहीं रह

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - आत्मिका - पृ. 18
2. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - नीलकण्ठ मोर - पृ. 25

सकता । उसमें जातिगत विशेषताओं के अतिरिक्त मानवी गुण भी है । नीलकण्ठ की सहगामिनी भी सुन्दरी थी जिसकी लम्बी धूप-छाँही गर्दन, हवा में चंचल कलगी, पंखों की श्याम श्वेत पत्र लेखा, मंथर गति इत्यादि सुन्दर और आकर्षक दृश्य थीं ।

नीलकण्ठ ने अपने - आपको चिड़िया घर के निवासी जीव-जन्तुओं के सेनापति और संरक्षक नियुक्त कर लिया । वह सुबह दूसरे जन्तुओं को अपने साथ ले जाया करता है, उन्हें दाना दिया जाता है, सब की रखवाली करता रहता है, फैले पंख के नीचे सब को बिठाता है । उनके प्रति उसका विशेष प्रेम था । गड़बड़ करने पर कभी कभी चोंच से उचित दण्ड भी दिया करता था । एक बार साँप के मुँह में पड़े खरगोश के मन्द स्वर की व्यथा पहचान कर उसने उसकी रक्षा की । साँप को फन के पास उसने अपने पंजों से दबाया और फिर चोंच की मार से साँप को दो टुकड़े कर दिये और रात भर शिशु खरगोश को अपने पंखों के नीचे उष्णता देता रहा । वह हिंसक पक्षी ही नहीं, कार्तिकेय का वाहक है उसकी रूपगत और स्वभावगत कई विशेषतायें हैं । वह कलाप्रिय वीर पक्षी है । उसकी जातिगत विशेषतायें हैं । मेघों की साँवली छाया में वह इन्द्रधनुष जैसे पंख पसारकर लय ताल से नाचता है । उसके पंख की सतरंगी मंडलाकर फैलाकर होने वाली नृत्य-भंगिमा पर मुग्ध होकर लेखिका की अतिथि विदेशी महिला ने उसे "Perfect Gentle man" की उपाधि दी । नीलकण्ठ के समान राधा नाच नहीं सकती थी । नीलकण्ठ और राधा की सब से प्रिय ऋतु वर्षा ही है । मेघ के गर्जन के ताल पर दोनों तन्मय होकर नृत्य करते थे । मेघ जितना अधिक गरजता, बिजली जितनी अधिक चमकती, बूँदों की रिमझिमाहट जितनी तीव्र होती जाती नीलकण्ठ के नृत्य का वेग उतना ही बढ़ता जाता ।

एक बार नाखासकोने से जाते वक्त लेखिका को एक अधमरी मोरनी को भी अपने साथ घर लाना पडा । उन्होंने मरहम, पट्टी लगाकर उसकी शुश्रूषा की । महीने भर में वह अच्छी हो गयी । लेकिन वह डगमगाती चलती थी । उसका नाम कुब्जा रखा गया । नवागत कुब्जा मोरनी को नीलकण्ठ पर विशेष प्रेम था । वह उसके पास रहना चाहती थी । राधा से वह चिढ़ती थी । उसे चोंच मारकर नीलकण्ठ के पास से दूर भगाती थी । राधा ने जो अण्डे दिये कुब्जा ने उसे फोड डाला । पर नीलकण्ठ तो कुब्जे से अलग रहना ही चाहता था । यह जानकर जब कुब्जा को अलग रखा गया तो उसने दाना-पानी छोड दिया और जाली पर सिर पटककर घायल कर लिया । राधा के वियोग और कुब्जा के कलह से नीलकण्ठ बहुत दुःखी हो गया । दिनों तक वह दाना-पानी नहीं लेता था । तीन चार महीने बाद एक दिन सबेरे महादेवी जी ने उसको पंख फैलाये धरती पर बैठा देखा । उसके दुःख पूर्ण जीवन का अन्त हो गया था । उसकी मृत्यु का कारण अब भी अज्ञात है । राधा बेचारी नीलकण्ठ की प्रतीक्षा में बैठी रही । "आषाढ़ में जब आकाश मेघाच्छन्न हो जाता है, तब वह कभी ऊँचे झूले पर और कभी अशोक की डाल पर अपनी केका को तीव्र से तीव्रतर करके नीलकण्ठ को बुलाती रहती है ।"[1] उनकी राय में पक्षियों का विशेष परिचय प्राप्त करने में इनका जीवन अवश्य ही सहायक हुआ है ।

गिल्लू

दूसरा स्मृतिचित्र गिल्लू का है । सोनजुही की पीली कली को देखकर लेखिका को उस छोटे गिल्लू की याद आ जाती है जो उस लता की

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - नीलकण्ठ - पृ. 34

सघन हरितिमा में छिपकर बैठता था और लेखिका के निकट पहुँचते ही कंधे पर कूदकर उसे चौंका देता था । उस सोनजुही के पौधे के निकट उसने आज फिर विश्राम लिया है । महादेवी जी को लगता है "कौन जाने स्वर्णिम कली के बहाने वही मुझे चौंकाने ऊपर आ गया हो ।"[1]

एक दिन सबेरे लेखिका ने गमले और दीवार के बीच में एक छोटे जीव को देखा । दो कौए उसे अपनी चोंचों से मारते रहे । लेखिका ने निकट आकर देखा तो वह गिलहरी का एक छोटा बच्चा था । धीरे से उसे उठाकर कमरे में लाकर घाव को मरहम लगाया । कई घंटों के उपचार के उपरांत पानी भी पिलाया । तीन-चार महीने में वह शीघ्र ही स्वस्थ हो गया । उनका नाम "गिल्लू" रखा गया । उसके स्निग्ध रोएँ झब्बेदार पूँछ और चंचल चमकीली आँखें सब को विस्मित करनेवाली थी ।

महादेवी ने फूल की डालिया में रूई बिछाकर उसे खिडकी पर लटका दिया और वही दो वर्षों तक गिल्लू का घर रहा । महादेवी जब कभी लिखने बैठती तब गिल्लू उनका ध्यान आकृष्ट करने के लिए उनके पैर से सिर तक चढ़ जाता और फिर तेज़ी से उतर जाता था । जब तक उसे न पकडती तब तक यह खेल ज़ारी रहता । कभी कभी महादेवी जी उसे पकडकर उसके अगले दो पंजों और सिर के अतिरिक्त सारा शरीर लिफाफे के अन्दर बन्द रखा करती थी । तब वह चुपचाप अपने कमनीय नेत्रों से उनका कार्य कलाप देखा करता था । भूख लगने पर चिक्-चिक् करके सूचना भी देता था ।

---

१. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - गिल्लू - पृ. 35

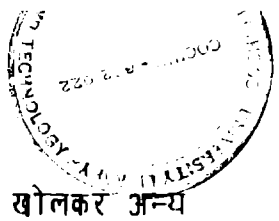

गिल्लू को लेखिका खिडकी की जाली खोलकर अन्य गिलहरियों के साथ खेलने छोड देती तो दिन भर वह उनका नेता बना रहता । उस घर के कुत्तें, बिल्लियों का उससे बचाना मुश्किल था । लेखिका के बाहर जाने पर कमरा बन्द रहता, चार बजे जब वह कॉलिज से लौट आती तब जाली के द्वार से कमरे के भीतर आता और सिर से पैर और पैर से सिर तक दौडकर अपना स्नेह प्रकट करता रहता है । कभी कभी वह महादेवी को चौकाने के लिए फूलदान के फूलों में, पर्दे की चुन्नट या सोनजुही में छिप जाता है । सोनजुही पर उसका खेल होना था, उस पर वह अभय पाता था ।

गिल्लू की एकमात्र जीव है जो महादेवी जी के साथ बैठकर उनकी थाली से खाना खाया करता था । पहले जब वह खाना खाने बैठती तो थाली में बैठता था । लेकिन कई दिनों के प्रशिक्षण से उसने थाली के समीप बैठना और चुन-चुन कर चावल उठाकर बडी सफाई से खाना सीखा । खाने के समय जब महादेवी घर आती तो वह आँगन की दीवाल बरामदा पार कर खाने की मेज़ तक अवश्य पहूँच जाता । मोटर दुर्घटना में आहत होकर कई दिन अस्पताल में बिताकर महादेवी जब घर लौटी तो उन्होंने देखा कि अपने वियोग से गिल्लू बहुत कम खाता था । महादेवी के अस्वस्थ हो जाने पर वह उसके सिरहाने बैठकर और अपने कोमल पंजों से उनके सिर और बालों को सहलाता भी था । गरमी के दिनों में गरमी से बचने के लिए वह कभी कभी सुराही पर लेट जाता था ।

गिलहरियों के जीवन की अवधि दो वर्षों की है । जब गिल्लू के जीवन का अन्तिम दिन आ गया तब उस दिन उसने कुछ नहीं खाया और न बाहर गया । उसकी जीवन-यात्रा के अन्तिम दिनों की याद कर लेखिका की

आँखें गीली हो जाती है - "वह मरणासन्न स्थिति में उनकी उँगली को ठण्डे पंजों से पकडकर चिपक गया, जिस स्थिति में उसे पहले पकडा गया था और वह प्रभात की प्रथम किरण के स्पर्श के साथ सो गया ।"[1] सोनजुही उसे सबसे प्रिय था । इसलिए उसके नीचे उसकी समाधि है । महादेवी को लगता है कि वासन्ती दिन-पीताभ फूल के रूप में खिलकर मानों वही उन्हें सन्तोष प्रदान करता है ।

सोना हिरनी

एक दिन एक बालिका एक अनाथ शावक को मुमूर्ष अवस्था में लेखिका के पास ले आई । वस्तुतः वे हिरन को पालना नहीं चाहती थीं और उस हिरन के तो बच जाने की आशा भी नहीं थी । फिर भी सहानुभूति वश उसे स्वीकार करना पडा । तीसरा स्मृतिचित्र उस मृग शिशु सोना का है । उसके हिरण्य सुनहरे रंग के कारण "सोना" नाम दिया गया । सब उसके सरल शिशु रूप से प्रभावित हुए । लेखिका उसका शब्द चित्र खींचते हुए कहती है "सुनहरे रंग के रेशमी लच्छों की गाँठ के समान उसका कोमल लघु शरीर था । छोटा सा मुँह और बडी बडी पानीदार आँखें । देखती थी तो लगता था कि अभी छलक पडेंगी । उनमें प्रसुप्त गति की बिजली की लहर आँखों में कौंध जाती थी ।"[2]

महादेवी हिरणों के झुंड की अद्भुत गतिशीलता की कल्पना करती है और उस पर मुग्ध हो जाती है । लेकिन उसी समय पशु-पक्षी के प्रति

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - गिल्लू - पृ.41
2. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - सोना हिरनी - पृ.42

मनुष्य की निष्ठुरता पर वे दुःखी हो जाती है । छोटे बच्चों को सोना अधिक प्रिय लगता था और उन्हीं के साथ खेलते वक्त वह सब कुछ भुला बैठती थी । कोई भी बच्चा सोना पुकारता तो ऊपर छलांग मारकर कूदती थी । अपने सद्स्वभाव के कारण सोना लेखिका का प्रेम भाजन बनी थी ।

दूध पीकर और भीगे चने खाकर सोना कुछ देर कम्पाऊण्ड में चौकड़ी भरती थी। फिर छात्रावास के कमरों का निरीक्षण करना उसका दैनिक कार्यक्रम था । अंधेरा होते ही लेखिका के पलंग के पीछे से सटकर बैठती है और सबेरा होने पर बाहर निकल जाती है । घंटी बजते ही वह प्रार्थना के मैदान में पहुँच जाती । लेखिका के प्रति उसके स्नेह-प्रदर्शन के कई प्रणालियाँ हैं । लेखिका के बाहर खड़े होने पर वह सामने या पीछे से छलांग लगाती और सिर के ऊपर से दूसरी ओर निकल जाती । कभी कभी वह लेखिका के पैरों से अपना शरीर रगड़ने लगती । लेखिका के बैठ रहने पर वह साड़ी का छोर मुँह में भर लेती और कभी पीछे चुपचाप खड़े होकर चोटी ही चबा डालती, डाँटने पर वह अपनी बड़ी गोल और चकित आँखों में ऐसी अनिर्वचनीय जिज्ञासा भरकर एकटक देखने लगती । थोड़े दिनों में अन्य पशुओं से उसकी मैत्री बढ़ी । फ्लोरा कुत्ती और बच्चों से उसका स्नेह बढ़ा ।

जब लेखिका बदरीनाथ की तीर्थयात्रा के लिए गई तब फ्लोरा को साथ ले गयी । सोना के लिए तन्हाई खटकने लगी । लेखिका और फ्लोरा के अभाव ने उसे और भी अस्थिर कर दिया । छात्रावास भी बन्द रहा । बच्चे भी नहीं थे इसलिए वह बाहर जाने लगी । माली ने उसे एक लम्बी रस्सी से बाँध दिया । एक दिन वह छलांग मारकर कूद पड़ी और गले में रस्सी अटक कर गिर पड़ी । और उसने अन्तिम साँस ली । महादेवी के वापस आने पर

सब जीव उनके चारों ओर घूमकर हर्ष मना रहे थे । लेकिन अकेली सोना नहीं दिखाई पडी । वे बहुत व्यथित हुईं । हिरन के संबंध में महादेवी का कथन है "पशु जगत् में हिरन जैसा निरीह और सुन्दर दूसरा पशु नहीं है - उसकी आँखें तो मानों करुणा की चित्र लिपि है ।"[1] मानव की स्वार्थ भावना पर लेखिका की बात है "बेचारी सोना भी मनुष्य की इसी निष्ठुर मनोरंजन प्रियता के कारण अपने अरण्य परिवेश और स्वजाति से दूर मानव-समाज में आ पडी थी ।"[2]

दुर्मुख खरगोश

चौथा स्मृति चित्र "दुर्मुख खरगोश" का है । वह लडाकू था । किसी से मिलता-जुलता नहीं था । इसलिए लेखिका की शिष्याओं ने उसका नाम "दुर्मुख" रखा । वह क्रोधी प्रकृति का था अतः "दुर्वासा" नाम भी उचित था । लेखिका के पडोस में खरगोश का एक जोडा था और उसके तीन बच्चों को एक मार्जारी के क्रोध का पात्र बनना पड़ा । उनमेंसेएक माँ के कठिन प्रयत्न से बच गया । वही बच्चा लेखिका के हाथ पहुँचा ।

लेखिका अपने कमरे में ही बैठने-सोने के लिए एक रुईदार गद्दी बिछाकर दूध पिलाकर उस निरीह जीव को पालने लगी । फिर भी पैने दांतों वाले उससे चिन्तित हुई । दूध-भात आदि देर से देने पर वह देनेवाले के हाथ पर चोट पहुँचाता था । स्वभाव के समान उनका रूप भी विचित्र था । उसका एक कान सफेद और दूसरा काला था । सभी पशुपक्षी दुर्मुख से डरते थे ।

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - सोना हिरनी - पृ.47
2. वही - पृ.47

उसके भय से छिपकली जैसे अन्य जन्तु भी उस कमरे से दूर रहते थे । स्वजाति की सतर्कता और आतंकित मुद्रा का उसमें अभाव था । उसका शब्द चित्र प्रस्तुत करते हुए लेखिका लिखती है "ऐसे वह अन्य खरगोशों के समान प्रियदर्शन था, परन्तु एक विशेषता के साथ । कुछ बडे बडे सघन कोमल और चमकीले फर के रोमों से उसका शरीर आच्छादित था, पूँछ छोटी और सुन्दर और पंजे स्वच्छ थे , जिनसे वह हर समय अपना मुख साफ करता रहता था । कान बिलायती खरगोशों के कानों के समान कुछ कम लम्बे थे, परन्तु उनकी सुडौलता और सीधे खड़े रहने में विशेष मोहक सौंदर्य था ।"[1] उसके अकेलापन के कारण उत्पन्न क्रोध को लक्ष्य कर महादेवी ने एक शशक वधू खरीद ली, जिसके रूप के अनुकूल नाम "हिमानी" रखा गया । "वह हिमखण्ड जैसी चमकीली, शुभ्र और लाल विद्रुम जैसी सुन्दर आँखों वाली थी, इसी से उसे हिमानी कहने लगे ।"[2] हिमानी उसके साथ रहने पर भी उसका स्वभाव तैसा ही वैसा था । शशक वधू के बच्चे होने पर एक दिन दुर्मुख ने क्रोध से दो नन्हें शशकों को क्षत विक्षत कर डाला ।

एक रात दुर्मुख ने एक साँपोले से लडकर अपना जीवन त्याग दिया । मृत्यु के पहले उसने साँपोले को पहलवान के समान दो खण्ड करके छोडा था । दुर्मुख के इस स्वभाव का कारण लेखिका के अनुसार यह है "जीवन के आरंभ से ही उस पर दुर्योग भार्जारी की निष्ठुर छाया आ पडी थी । वह अन्य शावक के समान खेलता-खाता माँ की स्नेह-छाया में बडा होता तो पता नहीं कैसा होता ।"[3]

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - दुर्मुख खरगोश - पृ. 61
2. वही - पृ. 63
3. वही - पृ. 66

गौरा - गाय

गौरा लेखिका की बहिन के घर में पली हुई बछिया थी । गौरा गाय को देखते ही लेखिका ने सहर्ष प्यार-दुलार से उसे पालने के लिए स्वीकार किया । "पुष्ट लचीले पैर, भरे पुट्ठे, चिकनी भरी हुई पीठ, लम्बी सुडौल गर्दन, निकलते हुए छोटे-छोटे सींग, भीतर की लालिमा की झलक देते हुए कमल की दो अधखुली पंखडियाँ जैसे कान, लम्बी और अन्तिम छोर पर काले सघन चामर का स्मरण दिलानेवाली पूँछ सब कुछ साँचे में ढला हुआ सा था ।"[1] गौरा के रोमों की सफेदी में एक विशेष चमक थी । "गौरा की उज्ज्वलता देखकर ऐसा लगा, मानों उसके रोमों पर अभ्रक का चूर्ण मल दिया गया हो, जिसके कारण जिधर आलोक पडता था, उधर विशेष चमक उत्पन्न हो जाती थी ।"[2]

लेखिका के घर पहूँचते ही परिवारकों ने बडी श्रद्धा और प्रेम से उसको माला पहनाई और घी का चौमुखा दिया जलाकर आरती उतारी । उसका नाम "गौरांगिनी" या "गौरा" रखा गया । उनके नेत्रों में अतिशय आत्मविश्वास का भाव झलकता था । मनुष्य से साहचर्य जनित लगाव, मानवीय स्नेह के समान ही वह उसकी निकटता चाहता था । "निकट जाने पर वह सहलाने के लिए गर्दन बढ़ा देती, हाथ फेरने पर अपना मुख अविश्वस्त भाव से कंधे पर रखकर काली बिल्लौरी आँखें मूँद लेती । जब उससे दूर जाने लगते, तब गर्दन घुमा-घुमाकर देखती रहती । आवश्यकता के लिए उसके पास एक ही ध्वनि थी, परन्तु उल्लास, दुःख, उदासीनता, आकुलता आदि की अनेक छाया-छबियाँ उसकी बडी और काली आँखों में तैरा करती थी ।"[3] कुछ ही दिनों में वह पशु-पक्षियों के

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - गौरा गाय - पृ. 69
2. वही - पृ. 70
3. वही - पृ. 71

साथ हिलमिल गई । छोटे-बडे, लघुता-विशालता का अन्तर भूल गए । कुत्ते-बिल्ली उसके पेट के नीचे पैरों के बीच में खेलते थे । वह सब को आवाज़ से नहीं, पैर की आहट से भी पहचानती थी । फाटक पर मोटर के पहुँचने, भोजन आदि अवसरों पर वह भिन्न भिन्न धुन से पुकारने लगती थी ।

एक वर्ष के बाद गौरा ने एक पुष्ट सुन्दर बछड़े को जन्म दिया जो लाल रंगवाला होने के कारण उसका नाम "लालमणि" रखा गया । उसको "लालू" ही पुकारते थे । गौरा अधिक दूध देती थी । अतः आसपास के लोग ही नहीं, कुत्ते, बिल्ली भी नित्य दुध पान किया करते थे । दुग्ध दोहन के समय ये सब गौरा के सामने एक पंक्ति में बैठ जाते थे और दूध पीने के उपरांत अपने अपने स्वर में कृतज्ञता ज्ञापन सा करते हुए गौरा के चारों ओर उछलने कूदने लगते थे । गौरा भी इसी में प्रसन्नता का अनुभव करती थी । कभी देर आने पर रंभा रंभाकर मानों उन्हें पुकारती थी ।

गौरा को दुहने के लिए एक ग्वाला नियुक्त था । कुछ दिनों बाद गाय का शरीर दिनों दिन दुर्बल होता गया । कई डाक्टरों ने निरीक्षण परीक्षण किए । एक्सरे लिया । पता चला गाय को सुई खिलायी गई है । रक्त संचार के साथ यदि हृदय का आरपार हो जायेगा तो मरेगी । गुड़ में लपेटकर सुई खिलाई होगी । पूछताछ हुई तो सुई की बात ज्ञात हुई । उस ग्वाले ने गुड़ की डली के भीतर सुई रखकर खिलाया ताकि उस गाय के मर जाने पर उससे अधिक दूध खरीद लिया जाएगा । गौरा का आना वह सह नहीं पाता था । इसीलिए उसकी यह दुर्गति हुई ।

गौरा का अन्तिम दिन बहुत दुःख भरा हुआ । उसकी सुन्दर पर उदास आँखों के कोनों में पानी की दो बूँदें झलकने लगती थी । लेखिका उसके पास ही बैठी रहीं । अन्त में अपना मुख लेखिका के कंधे पर रखकर वह निश्चल हो गयी । लेखिका कहती है "मैं ने बहुत से जीव-जन्तु पाल रखे हैं, अतः उनमें से कुछ को समय-असमय बिदा देनी ही पड़ती है । परन्तु ऐसी मर्म-व्यथा का मुझे स्मरण नहीं ।"[1] उसका पार्थिव अवशेष गंगा को समर्पित किया गया ।

नीलू कुत्ता

नीलू कुत्ता की अलसेशियन माँ 'लूसी' नाम से पुकारी जाती थी । हिरणी के समान वेगवती साँचे में ढली हुई देह जिसमें व्यर्थ कहने के लिए एक तोला माँस भी नहीं था । महादेवी जी इसका शब्द चित्रण करती है "ऊपर काला आभास देनेवाले भूरे पीताभ रोम, बुद्धिमानी का पता देनेवाली काली पर छोटी आँखें, सजग खड़े कान और साधन, रोयेंदार तथा पिछले पैरों के टखनों को छूने वाली लंबी पूँछ, सब कुछ उसे राजसी विशेषता देता था ।"[2] वह सामान्य कुत्तों से भिन्न थी । लूसी गले में गठरी बाँधकर लोगों की सेवा करती थी । एक दिन किसी पर्वतीय गाँव से एक भूटिया कुत्ता भटकता हुआ वहाँ आया और वे सहचर हो गए । लूसी ने दो बच्चों को जन्म दिया । उनमें से एक मर गया और एक बचा । चार-पाँच दिन के पिल्ले को छोड़कर लूसी दुकान गयी और फिर वापस नहीं आयी ।

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - गौरा गाय - पृ. 74
2. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - नीलू कुत्ता - पृ. 79

लेखिका ने उस अनाथ पिल्ले को आश्रय दिया और बडे प्यार से पालने लगी । उनकी आकृति और स्वभाव अन्य कुत्तों से भिन्न था । अन्य कुत्तों के समान खाने की चीज़ को देखकर लालायित होना, कृतज्ञता प्रकट करना, पूँछ हिलाना ये सब उसमें नहीं थे । नीलू कुत्ते का वर्णन इस प्रकार महादेवी देती है । "रोमों के भूरे, पीले और काले रंगों के सम्मिश्रण से जो रंग बना था, वह एक विशेष प्रकार की धूप-छाँही हो गयी थी । धूप पड़ने पर एक ही झलक मिलती थी, छाँह में दूसरे की ओर दिये के उजाले में तीसरे की । कानों की चौडाई और नुकीलेपन में भी कुछ नवीनता थी । सिर ऊपर की ओर अन्य कुत्तों के सिर से बडा और चौडा था और नीचे लम्बोतरा, पर सुडौल । पूँछ अलसेशियन कुत्तों की पूँछ के समान सघन रोमों से युक्त, पर ऊपर की ओर मुडी कुंडलीदार थी । पैर अलसेशियन कुत्ते के पैरों के समान लम्बे, पर पंजे भूटिये के समान मज़बूत चौडे और मुडे हुए नाखूनों से युक्त थे । शरीर में ऊपर का भाग चौडा, पर नीचे का पतले पेट के कारण हल्का और तीव्र गति का सहायक था । आँखें न काली थी, न भूरी और न कंजी । उन गोल और काली कोरवाली आँखों का रंग शहद के रंग के समान था, जो धूप में तरल सुनहला हो जाता था और छाया में जमे हुए मधु सा पारदर्शी लगता था ।"[1]

उसकी आकृति के अतिरिक्त बल और स्वभाव की भी अपनी विशेषताएँ थीं । ऊँचाई से छलांग मार सकता था । उसका स्वर-भारी और गूँजनेवाला था । प्रिय खाद्य को भी यदि फेंक दे दिया जाय तो वह खायेगा नहीं । एक बार छिडक जाय तो बहुत मनाने के बाद ही सामने आ जाता ।

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - नीलू कुत्ता - पृ. 82

वह प्राय: बरामदे में बैठा करता था । किसी नए या अपरिचित आदमी के असमय आने पर लेखिका के कमरे में आकर खडा होता और लेखिका के "आ रही हूँ" कहने पर दुबारा बरामदे में जाकर बैठता था, वहाँ आने वाले सबको वह पहचानता था । वह हिंसक नहीं था । घर के प्रत्येक जीव की रक्षा करना वह अपना कर्तव्य स्वयं समझता था । रात भर वह पहरेदार के समान चक्कर लगाता रहता था । कोई पक्षी शावक घोंसले से गिरने पर उसे मुँह में लेकर मालकिन के पास ले जाकर उसे घोंसले में सुरक्षित रखते तक वहीं खडा रहता । रात में कई बार वह पूरे कॉंपाउण्ड का और पशु-पक्षियों के घर का चक्कर लगाता रहता था । लेखिका कहती है कि कुत्ते भाषा नहीं जानते लेकिन ध्वनि जानते हैं । कोई आवाज़ देता है तो वह तुरन्त लेखिका के पास आता और "जाओ" के सुनने तक वहीं खडा रहता । तेरह वर्ष तक वह उनके साथ रहा ।

एक बार जब मोटर-दुर्घटना में आहत होकर लेखिका को अस्पताल जाना पडा, तब सन्ध्या तक लेखिका की प्रतीक्षा करके, अस्पताल से जानेवालों को देखकर उसकी सहज चेतना ने किसी अनिष्ट का आभास पा लिया । तीन दिन तक उसने न कुछ खाया न पिया । अन्त में डॉक्टर से अनुमति लेकर उसे अस्पताल लाया गया । जन्म से मृत्यु तक वह लेखिका के साथ रहा । अत: उससे संबद्ध सारी घटनायें चिरस्मरणीय हैं । शान्त और निर्लिप्त भाव से उसकी मृत्यु भी हुई ।

निक्की, रोजी और रानी

अन्तिम स्मृतिचित्र महादेवी के बाल्यकाल से संबद्ध है । निक्की, रोजी और रानी उनके बचपन की सहेलियाँ थीं । निक्की, नेवला, रोजी कुत्ती

और रानी घोड़ी थी । 'रोजी' महादेवी जी को अपने पाँचवें जन्म दिन पर भेंट में मिली कुतिया थी । "रोजी सफेद थी, किन्तु उसके छोटे सुडौल कानों के भीतर, पूँछ का सिरा, माथे का मध्य भाग और पंजों का अगांश कत्थई रंग का होने के कारण उसमें कत्थई किनारीवाली सफ़ेद साड़ी की शबल रंगीनी का आभास मिलता है ।"[1]

'रोजी' महादेवी के परिवार की साथी थी । यात्रा करते समय वह भी साथ चलती थी । कभी कभी आम के पेड़ों से छोटी-बड़ी आँबियाँ गिर पड़ती थी तो वह उन पर कूद पड़ती और बच्चों को ला देती थी । दोपहर के समय अपनी माँ की आँख बचाकर महादेवी जब उसके साथ घूमने निकलती थी तो ठीक समय पर वह खिड़की से कूदने के लिए आ जाया करती थी ।

एक दिन घूमने के बाद रोजी नकुल दम्पति के एक छोटे बच्चे को मुँह में दबाया आयी । वह बच्चा आकार में गिलहरी के समान था, पर आकृति में अन्तर था । "भूरा चमकीला रंग, काली कत्थई आँखें, नर्म नर्म पंजे, गुलाबी नन्हा मुँह, रोओं में छिपे हुए नन्हीं सिपियों से कान, सब कुछ देखकर हमें वह जीवित नन्हा खिलौना सा जान पड़ा ।"[2] उसको देखकर महादेवी खुश हुई । वह उसे पालने लगी । उसका नाम नकुल रखा गया, पर "निक्की" ही पुकारी जाती थी । गिलहरी के समान कीट, पतंग, फल इत्यादि उसके खाद्य पदार्थ है । निक्की तो महादेवी के दुपट्टे की चुन्नट में छिपा हुआ झूलता रहता या गर्दन के पीछे चोटी में छिपकर बैठता और कान के पास नन्हा मुँह

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - निक्की, रोजी और रानी - पृ. 89
2. वही - पृ. 92

निकालकर चारों ओर की गतिविधि देखता था । निक्की तो महादेवी के स्कूल का साथी हो गया । वह महादेवी के साथ स्कूल पहुँचता था वहाँ एक लता पर बैठता था महादेवी स्कूल से लौटती तो वह कूदकर उसके कन्धे पर बैठता था और उनके साथ वापस आता था ।

महादेवी जी के बाबूजी एक घोडी खरीद लाये तो नाम रखा गया 'रानी' । उसका वर्णन इस प्रकार करती है "हल्का चाकलेटी चमकदार रंग, जिस पर दृष्टि फिसल जाती थी । खडे छोटे कानों के बीच में माथे पर झूलता अयाल का गुच्छा, बडी, काली, स्वच्छ और पारदर्शी जैसी आँखें, लाल नत्थुने जिन्हें फला-फलाकर वह चारों ओर की गंध लेती रहती, उजले दाँत और लाल जीभ की झलक देते हुए गुलाबी ओठोंवाला लम्बा मुँह, जो लोहा चबाते रहने पर भी क्षत-विक्षत नहीं होता था ।"[1]

रानी के लिए बरामदे में अस्तबल बनाया गया । रानी सभी बच्चों को अपनी पीठ पर बिठाकर बार बार घुमाती । रानी बडी बुद्धिमति थी । एक बार छोटे भाई ने तमाशा के लिए सोने के दो कडे रानी के कानों में वलय की तरह पहनाये । बाद में यह बात भूल गई । सारे घर में कडे की तलाश होने लगी । इस समय रानी अपने कानों को खुरों से खोदती और हिन-हिनाती रही । वहाँ की मिट्टी खोदने पर दोनों कडे मिल गये ।

रानी का एक बच्चा हुआ नाम था "पवन" । आगे अचानक महादेवी का परिवार अराजक राज्य पर क्रान्ति के कारण समझदारों के देश में

---

1. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा - निक्की, रोजी और रानी - पृ.99

निर्वासित हो गया । फिर वे छुट्टी पर घर लौटी तो निक्की मर चुकी थी । रानी और उसका बच्चा पवन किसी को दिये गये थे । केवल रोजी पैरों से लिपट कर कू कू करके रोने लगी ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि मानवेतर प्राणियों का महादेवी के साथ गहरा संबंध था । वे पशु-पक्षी बचपन से ही उनके संगी साथी रहे । उनके संपर्क-सुख का अनुभव, लगाव, आत्मीयता और निकटता जो उन्हें बाल्यकाल से होकर प्राप्त थी अतीत की वे रेखायें अनुकूल अवसर पाकर पूरी ममता के साथ विभिन्न रंगों में उदित होकर स्पष्ट हो जाती है । महादेवी ने अनाथ, घायल, दुबले जीवों को सहानुभूति-वश समय समय पर खरीद लिया और उचित परिचरण से उन्हें बडा किया । उन सब का अनुकूल नाम रखा । विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तुओं का उन्होंने पालन किया है । लेकिन इन में से किसी को भी बुरा मान लेने की चिन्ता उन्हें कभी नहीं हुई है । ये पशु-पक्षी उन्हें इतने प्रिय थे कि उन्हें किसी प्रकार का कष्ट पहुँचाना नहीं चाहती थी । दुष्ट, क्रूद्ध किसी भी पशु-पक्षी के प्रति उनका मन कभी कठोर नहीं था । निष्ठुर मनुष्य अपने शरीर पोषण और अहंकार की पुष्टि के लिए उन्हें मारता है । मनोरंजन के लिए शिकार करता है, कई कौतुक रचता है । पक्षी-जगत् में ही नहीं, पशु जगत् में भी मनुष्य की ध्वंसलीला ऐसी ही निष्ठुर है, इसके प्रति लेखिका के विद्रोह का स्वर इन रेखाचित्रों में स्पष्ट है । महादेवी अपने द्वारा पालित पशु-पक्षियों की जातिगत विशेषताओं, उनकी गति, दूसरे जन्तुओं से उनका व्यवहार, आदि की पकड से उनकी सूक्ष्मग्राहिता का

पता चलता है । उन जन्तुओं का कार्य कलाप निश्चित था । सब का अपना अपना कार्यक्रम था । सुबह सभी पशु-पक्षी एकत्र होते खाना-पानी लेते थे, घूमते थे । वे महादेवी के प्रति तरह-तरह की क्रीडाओं द्वारा स्नेह-प्रदर्शन किया करते थे । पशु भी मनुष्य के निश्चल स्नेह से परिचित रहते हैं । उनके व्यवहार से ये स्पष्ट संकेत मिलता था कि मनुष्य की आवाज़ को, ध्वनि को पहचानने की अपूर्व क्षमता उनमें हैं । समय असमय में उनका दुःखद अन्त भी हुआ है । उनका अंतिम संस्कार भी यथोचित् हुआ करता था । इन संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में महादेवी ने उनके रेखाचित्र सजीवता से खींचे हैं कि पाठक के मन में भी इन जीवों के प्रति सहानुभूति जागृत् होती है ।

तीसरा अध्याय

महादेवी वर्मा के निबन्ध

निबन्ध गद्य की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विधा है । गंभीर विचार-प्रकाशन और भाषा की पूर्णशक्ति का विकास निबंधों में ही संभव है । गद्य कवियों की कसौटी है तो गद्य की कसौटी निबंध और निबंधों की कसौटी वैयक्तिक निबंध है । एक श्रेष्ठ कवयित्री और उच्चकोटि के रेखाचित्रकार होने के साथ महादेवी मौलिक निबंधकार भी है । महादेवी अपनी सम्मिलित प्रतिभायुक्त दृष्टि जीवन और जगत् पर डालती हैं और अपनी अनुभूति तथा चिन्तन शक्ति से पाठक की रागात्मकता को जागृत करती हैं । उनके निबंधों का संग्रह हैं "श्रृंखला की कड़ियाँ", "क्षणदा", "साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध", "संकल्पिता" और "संभाषण" । इन में समय-समय पर दिये गये उनके कुछ भाषण भी संकलित हैं । उनके निबंधों का विभाजन निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है । सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, भाषा संबंधी और अन्य विषय-संबंधी । साहित्य संबंधी निबंधों में साहित्य और कला संबंधी उनके चिन्तन, व्याख्या विश्लेषण और मूल्यांकन होता है । अतः अन्य निबंधों से उनका अलगाव स्पष्ट है । इन समीक्षात्मक निबंधों का अध्ययन अगले अध्याय में किया जायेगा । अपने सामाजिक निबंधों के अन्तर्गत समाज और व्यक्ति और हमारी सामाजिक समस्याओं पर विचार करते हुए महादेवी भारतीय नारी और उसकी समस्याओं का जीता-जागता चित्रण प्रस्तुत करती हैं ।

सामाजिक निबंध

समाज और व्यक्ति

समाज और व्यक्ति का संबंध सापेक्ष है । क्योंकि एक के बिना दूसरे का अस्तित्व संभव नहीं । व्यक्ति ने समाज का निर्माण किया और

उसके स्वत्वों की रक्षा के लिए समाज बन गया । एक सामाजिक प्राणी, स्वतंत्र और परतन्त्र दोनों ही है । स्वतंत्र इसलिए है कि वह अपने लिए और समाज के लिए कोई भी ऐसा कार्य कर सकता है जिससे उसका और समाज का सार्वजनिक रूप से विकास हो सके ; और परतन्त्र इसलिए है कि वह कोई भी ऐसा कार्य नहीं कर सकता जिससे समाज के अन्य सदस्यों को हानि पहुँचे । जब व्यक्ति वैयक्तिक हानि -लाभ के लिए सार्वजनिक उपयोगिता को भूलने लगता है तब सामूहिक विकास के लिए वह बाधक सिद्ध होता है । जब तक मनुष्य संगठित शक्ति के रूप में रहेगा तब तक समाज की स्थिति सुदृढ़ रहेगी और समाज की उन्नति भी होगी । "प्रगतिशील समाज में व्यक्ति और व्यक्तियों का समूह अन्योन्याश्रित ही रहेंगे और उनका दान-प्रतिदान उपयोगिता की एक ही तुला पर विकास के एक ही बाँट से तोला जा सकेगा ।"[1] अर्थ का समुचित विभाजन और स्त्री पुरुष का आपसी संबंध, इन दोनों को समाज की आधार-शिलाएँ मानी जाती है । महादेवी की राय में समाज के समुन्नत विकास के लिए इन दोनों की स्थिति अनिवार्य है । अर्थ एक अनिवार्य सामाजिक तत्त्व है । समाज की सुख सुविधाओं का समान रूप से वितरण सभी सदस्यों में होना चाहिए । वह अपनी पूर्णता के लिए समस्त सदस्यों को उनकी शक्ति और योग्यता के अनुसार कार्य देकर उनके जीवन की सुविधायें प्रदान करता है । महादेवी का सुझाव है कि समाज को सुदृढ़ बनाने के लिए उसके पास कुछ ऐसे आधार स्तम्भों की आवश्यकता है जो उसे सर्वहारी आक्रामक क्रान्ति से बचा ले ।[2] वे मानती हैं कि समाज की अव्यवस्था का कारण विषम अर्थ व्यवस्था और स्त्री की अधिकार हीन स्थिति है । इसका उत्तरदायित्व समाज और शासन विभाग दोनों पर है । "केवल शक्ति से शासन हो सकता है, समाज नहीं बन सकता,

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 14।
2. वही - पृ. 14।

जिसकी स्थिति मनुष्य के स्वच्छन्द सहयोग पर स्थिर है । निरंकुश शासन, शासक का अन्त कर सकता है, निरंकुश समाज मनुष्यता को समाप्त कर देता है।"[1]

हमारी सामाजिक समस्यायें

शिक्षा का उद्देश्य, भारत में शिक्षा का प्रचार, शिक्षित भारतीय महिलायें आदि पर प्रकाश डालते हुए महादेवी कहती हैं कि शिक्षा आज हमें एक दूसरे के निकट लानेवाला सेतु न बनकर विभाजित करनेवाली खाई बन गयी हैं । उनके अनुसार हमारे देश की नैतिक और सामाजिक समस्याओं का मूल कारण शिक्षा की कमी है । भारत में शिक्षितों की संख्या न्यूनतम है, लेकिन इने-गिने ये शिक्षित व्यक्ति अपने कर्तव्य को भूल जाते हैं । ये समाज और देश की अनेकानेक समस्याओं और उनके कारणों की खोज करके उनका समाधान ढूँढ निकालने में अकर्मण्य रहते हैं । इस अवस्था से बचने का यह निर्देश महादेवी देती हैं कि सर्वप्रथम हमारी प्राथमिक शिक्षा की नींव सुदृढ़ होनी चाहिए । उसके शिथिल अस्थिर नींव पर माध्यमिक शिक्षा का भवन निर्मित होता है तो शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकती ।

हमारे यहाँ पढ़ी लिखी महिलाओं की संख्या बहुत कम है । वे अपने कर्तव्य से विमुख होकर बैठती हैं । क्योंकि भारतीय महिलायें उच्चशिक्षा जीवन निर्वाह के लिए, स्वावलंबन के लिए या योग्य पति की प्राप्ति के लिए

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 149

ग्रहण करती हैं । इसलिए वे अपने कर्तव्य से विमुख हो जाती हैं । महादेवी कहती हैं कि वस्तुत: मनुष्य बनने के लिए जीवन का अर्थ और उसका उपयोग करने के लिए, शिक्षा ग्रहण करनेवाली स्त्रियों की संख्या बहुत कम है । ज्ञान के वास्तविक अर्थ में ज्ञानी, शिक्षा के सत्य-अर्थ में शिक्षित वही व्यक्ति कहा जायेगा जिसने अपनी संकीर्ण सीमा को विस्तृत एवं अपने संकीर्ण दृष्टिकोण को व्यापक बना लिया है । शिक्षित नारियों की शक्तियों का विकास यदि होता तो वे हमारी संस्कृति के रक्षक और भविष्य के निर्माता हो जायेंगी । वे अपना दायित्व समझने लगी हैं । इस पर सन्तुष्ट होकर वे कहती हैं कि खुशी की बात है कि आज की स्थिति में शिक्षित महिलायें यह कर्तव्य भार उठाने के लिए तैयार होकर आगे बढ़ी हैं और वे अपने प्रयत्न में सफलता पाने लगी हैं ।

महादेवी के अनुसार सारी सामाजिक व्यवस्थाओं के प्राण, उसकी रूप-रेखा का आधार समाज के स्त्री-पुरुष का सामंजस्य पूर्ण संबंध है । वे दोनों एक दूसरे को समझें अपनी कमियों और विशेषताओं को हृदयंगम करें और मिलकर समस्याओं को सुलझा दें, तभी समाज की उन्नति होगी । स्त्री को आत्मविश्वास के साथ पुरुषों से मिलकर समाज की उन्नति के लिए स्तुत्य कार्य करना चाहिए । पुरुषों को भी इस कार्य में उचित सहयोग देना है, विषम मार्ग को सम बनाने में सहायक होना है । वे स्त्रियों की त्रुटियों की आलोचना करके उनकी कठिनाईयों को देखने लगे । अपनी संकीर्णता ने ही बाहर आनेवाली स्त्रियों को अधिक सतर्क कर दिया है । नारी को अपने जीवन का लक्ष्य बनाने का अधिकार है और समाज द्वारा निर्धारित विधान के विरुद्ध कहने की हिम्मत है ।

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 128

"शृंखला की कड़ियाँ" में भारतीय नारी-जीवन के विविध पक्षों पर महादेवी के विचार स्पष्ट होते हैं । यह कृति "जन्म से अभिशप्त, जीवन से सन्तप्त, किन्तु अक्षय वात्सल्य वरदानमयी भारतीय नारी को भेंट करती हैं ।"[1] इसमें भारतीय नारी का व्यक्तित्व, उसका अभिशप्त जीवन, हिन्दू नारी का पत्नीत्व, शिक्षित नारी का कर्तव्य, स्त्री का अर्थ स्वातंत्र्य आधुनिक नारी पर पाश्चात्य प्रभाव और युद्ध के प्रति नारी का दृष्टिकोण आदि नारी जीवन संबंधी विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है ।

भारतीय नारी का व्यक्तित्व

महादेवी की राय में भारतीय नारी की दो अवस्थायें हैं - एक ओर अतीव सम्मान और अत्यन्त श्रद्धा के साथ वह पवित्र देव मन्दिर की अधिष्ठात्री बनी तो दूसरी ओर उतनी अश्रद्धा और अनादर से घर के एक कोने में बन्दिनी । उनकी दृष्टि में आज के समाज में दो ही प्रकार की नारियाँ हैं । एक वे नारियाँ हैं जिनको समाज में अपने स्वतंत्र अस्तित्व और व्यक्तित्व के महत्व का पता नहीं और दूसरी वे हैं जो पुरुष समाज के गुणावगुण का अनुकरण करना अपना कर्तव्य मानती हैं ।

पुरुष और स्त्री दोनों के व्यक्तित्व के सामंजस्य से समाज आगे बढ़ता है । समाज की उन्नति के लिए दोनों मिलकर काम करें और सुख हों या दुःख दोनों में एक दूसरे के साथ रहें । नारी स्वभावतः स्नेहमयी,

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा

त्यागमयी और करुणामयी है । नारी का मानसिक विकास पुरुषों के मानसिक विकास से अधिक द्रुत, स्वभाव अधिक कोमल और मानसिक भाव अधिक तीव्र और स्थायी होते हैं । पुरुष द्वारा असंभव सामाजिक अभावों की पूर्ति वह कर सकती है । नारी का व्यक्तित्व और समाज में उनकी स्थिति, काल और परिस्थिति के अनुसार बदलती आई है । प्राचीन काल के सामाजिक जीवन में स्त्री का बड़ा हाथ था । उसका कथन सर्वमान्य और सर्वसम्मत था । मानव समाज की अनिवार्य पूर्ति उसी से संभव थी । पौराणिक कथाओं से इसका पता चलता है कि स्त्री पति का अनुकरण या छाया मात्र न होकर उसकी सहचारिणी और सहभागिनी रही थी । विदुषी मैत्रेयी, उपेक्षिता यशोधरा, सीता आदि ने निराश न होकर कर्तव्य के निर्दिष्ट मार्ग को स्वीकार किया । इसके बाद नारी ने अपने लिए गुलामी स्वीकार की । लेकिन इस बात का पता नहीं कि कब से स्त्री स्वतंत्र व्यक्तित्व से रहित, पुरुष की छाया मात्र मानी गयी । तब से "उसके पास न अपनापन है और वह न अपनापन चाहती भी है ।" नारी की शोचनीय स्थिति का मूल कारण यही अंधानुकरण है । वह स्वयं चाहकर ही पुरुष का गुलामी बनना चाहती है । अतः नारी की शोचेनीय अवस्था का कारण वह स्वयं है यद्यपि उसे दुर्बल, दयनीय और बन्दिनी बनाने में पुरुषों का योग कम नहीं है ।[1] अपने अत्यन्त प्रिय होने पर भी जब कभी स्त्री अपने विचारों के अनुकूल नहीं है तो पुरुष क्षुब्ध और असन्तुष्ट हो जाता है । महादेवी की राय में "पुरुष के अन्धानुकरण में स्त्री के व्यक्तित्व को अपना दर्पण बनाकर उसकी उपयोगिता तो सीमित कर ही दी, साथ ही समाज को भी अपूर्ण बना दिया ।"[2]

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 13
2. वही - पृ. 14

नारीत्व का अभिशाप

पुराणेतिहासों का उदाहरण देकर महादेवी ने यह साबित किया है कि संसार ने कभी भी नारी के त्याग को पवित्रतापूर्वक स्वीकार नहीं किया है । उनके अनुसार नारी घर में दुकान की वस्तु के समान है और ससुराल में उपेक्षित वस्तु । ऐसी नारी का जीवन वस्तुतः अभिशाप ही है ।

स्त्री ने पुरुष के लिए कितना त्याग, संयम, आत्मदान और बलिदान किया, अपने व्यक्तित्व को आदर्श के साँचे में ढालकर समर्पित किया, सब को पुरुष ने नारी में एक दुर्बलता ही मानी है । "अग्नि में बैठकर अपने-आपको प्रति प्राणा करनेवाली स्फटिक सी स्वच्छ सीता में नारी की अनन्त युगों की वेदना साकार हो गई है ।"[1] महादेवी मानती हैं कि वस्तुतः नारी के स्वभाव में कोमलता के आवरण में जो दुर्बलता छिपी है, वही उसके शरीर में सुकुमारता बन गयी है । नारी में एक बहुत बड़ी शक्ति है पर दुःख की बात यही है कि उसने अपनी शक्ति को पहचाना ही नहीं ।[2] वर्तमान युग में नारी की दयनीय दशा का कारण भी यही है । वह अपने कष्टों को चुपचाप सह लेती है । आज उसे कष्ट सहने का अभ्यास हो गया है । उसकी दशा एक निर्जीव प्राणी की सी हो गयी है । "नारी जाति भी समाज को अपनी शक्ति से अधिक देकर अपनी सहन-शक्ति से अधिक-त्याग स्वीकार करके संज्ञाहीन - सी हो गई हैं नहीं तो क्या बलिष्ठ से बलिष्ठ व्यक्ति को दहला देनेवाली, कठोर से कठोर व्यक्ति को रुला देनेवाली यन्त्रणाएँ वह इतने मूक भाव से सहती रह सकती ।"[3] हिन्दू नारी का घर और समाज से विशेष संबंध है लेकिन उन स्थानों

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 39
2. वही - पृ. 40
3. वही - पृ. 41

में उसकी स्थिति अत्यन्त करुण है । अपने पितृगृह में जन्म लेते ही घर के लिए उस अभागी को एक प्रकार का भार समझ लिया जाता है और पतिगृह में इस उपेक्षिता को घर का दासत्व स्वीकार करना पडता है । वह बन्दिनी है कि जिसके निकट स्वतंत्रता का विचार आना पाप कहा जाता है । इस पर भी उसे देवी की संज्ञा दी जाती रही है । इसलिए देवताओं को मनुष्य के लिए आवश्यक सुविधाओं का करना ही क्या है ? यही नारी के देवत्व की विडम्बना है ।

निर्भाग्यवश नारी विधवा हो गई तो उसके लिए संसार ही नष्ट हो गया । यह ऐसा अपराध है जिसके कारण उसे मृत्युदण्ड से भी भीषणतर दण्ड भोगते हुए शेष जीवन व्यतीत करना पड़ता है । सब प्रकार के ऐसे अत्याचारों से छुटकारा पाने के लिए आज देश में एक ऐसे देशव्यापी आन्दोलन की आवश्यकता पर महादेवी ज़ोर देती है । यदि ऐसा न किया जाय तो नारीत्व सर्वदा अभिशाप रह जायेगा ।

हिन्दु नारी का पत्नीत्व

हिन्दु स्त्री के पत्नीत्व पर विचार करते हुए महादेवी प्राचीन युग से आधुनिक युग तक की विवाह संबंधी धारणाओं का परिचय देती हैं । भारतीय स्त्री के जीवन का प्रथम लक्ष्य पत्नीत्व ही माना जाता है । स्त्रीत्व की सारी माधुर्यमयी महिमा उसके मातृत्व में केन्द्रित है । अतः जन्म होते ही उसके माता-पिता का ध्यान सब से पहले उसके विवाह की कठिनाईयों की ओर

जाता है । क्योंकि प्रचलित धारणा यह है कि कन्या कैसी भी हो उसको विवाह जैसे उत्तरदायित्व से वंचित करना वंश के लिए कलंक है ।

प्राचीनकाल में बिना उसे देखे-सुने ही उसके जीवन का क्रय-विक्रय हो जाता था, पर आजकल भी विवाह के योग्य कन्या को, बिकने के लिए खड़े हुए पशु की तरह देखना कुछ गर्व की बात नहीं । विवाह के समय पुरुष को कुछ और भी चाहिए - एक को अपनी पढ़ाई का पूरा खर्च चाहिए तो दूसरे को अपना व्यवसाय शुरू करने के लिए प्रचुर मात्रा में धन । यह क्रय-विक्रय स्त्री के जीवन के पवित्रतम बन्धन पर प्रश्न उठाता है और परावलम्बी पतियों के साथ उसका सौभाग्यवती बनना मुश्किल हो जाता है । इसके लिए वे आदेश देती हैं कि इससे छुटकारा पाने के लिए उसे स्वावलम्बिनी बना देना है । माता-पिता को अपनी कन्याओं को अपनी रुचि और शक्ति के अनुसार कला, उद्योग धन्धे तथा विभिन्न प्रकार की शिक्षा पाने दे, जिससे अपनी इच्छा के अनुसार घर के बाहर अन्य क्षेत्रों में वे कार्य कर सके और उनके लिए अनुयोज्य संगी को चुन सके ।[1] ऐसे माता-पिता है जो कन्या की शिक्षा के लिए कुछ धन व्यय करना नहीं चाहते । और दूसरे कुछ विवाह की लाठ में उनका मूल्य बढ़ाने के लिए कन्या को शिक्षा देते हैं । इस पत्नीत्व की अनिवार्यता से अनेक सुशिक्षित स्त्रियाँ विवाहित होना नहीं चाहती । क्योंकि उसे भय रहता है कि उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व को उसका सहयोगी नहीं चाहेगा ।

पुरुष शिक्षित होने पर भी अपने पुराने संस्कार से मुक्त नहीं । पुरुषों का विचार है कि पत्नी के रूप में स्त्री को स्वीकार करना केवल परोपकार

---

1. श्रृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 85

केलिए है । यही मनोवृत्ति उन्हें लड़की के माँ-बाप से कुछ माँगने के लिए प्रेरणा देती है । एक नहीं तो दर्जनों विवाह योग्य कन्याओं के पिता उससे अधिक धन देकर अपनी रूपवती, गुणवती और शिक्षित पुत्रियों को दान देकर कृतार्थ हो जाना चाहते हैं । ऐसा विवाह भी स्त्रीत्व के लिए कलंक है । गृहस्थाश्रम की अनिवार्यता कुछ सामाजिक और धार्मिक कारणों पर आधारित है । महादेवी की राय में "विवाह मनुष्य जाति की असभ्यता की भी सब से प्राचीन प्रथा है और सभ्यता की भी, परन्तु उसे सामाजिक के साथ साथ नैतिक और धार्मिक बन्धन बनाने के लिए अधिक परिष्कृत करना होगा ।"[1]

महादेवी के विचार में "कभी भारतीय पत्नी देश के लिए गरिमा की वस्तु रही होगी, परन्तु आज तो विडम्बना मात्र है ।"[2] समाज को उसकी स्थिति ठीक तरह से समझना है, नहीं तो स्त्री के पत्नीत्व की महिमा के नष्ट होने की संभावना है ।

शिक्षित नारी का कर्तव्य

महादेवी नारी की दयनीय स्थिति पर प्रकाश डालते हुए उसे भी पुरुष के समान घर के बाहर जाकर कोई भी पेशा करने की वकालत करती हैं । लेकिन ऐसी स्थिति में अपनी गृहस्थी के सन्तुलन को बनाये रखने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया गया है ।

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 87-88
2. वही - पृ. 89

युगों से नारी का कार्यक्षेत्र घर में ही सीमित रहा है, पर आज स्थिति वैसी नहीं रही । आज उसका अपना भी अस्तित्व और व्यक्तित्व है, इसलिए आज भारतीय नारी को अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्र कहा जाता है । आज स्त्री घर से बाहर भी, समाज का विशेष अंग तथा महत्त्वपूर्ण नागरिक के रूप में स्वीकार की जाती है । इसके नाते उसका कर्तव्य पहले से भी बढ़ गया है । आज उसके सामने सब से बडी समस्या यह है कि वह अपने लिए कौन सा कार्य क्षेत्र चुने, घर या बाहर या फिर दोनों ही ।

कुछ प्रगतिशील विचारधारा की नारियाँ ऐसा मानती हैं कि घर भी स्त्री के लिए उतना ही आवश्यक है जितना कि पुरुष के लिए । बाहर वह अपना कार्यक्षेत्र स्वतंत्रतापूर्वक कर सकती है । ऐसा करने में उसका पत्नीत्व या मातृत्व कोई बाधा नहीं डाल सकता । भारतीय नारी ने कभी निष्पक्षतेइस समस्या पर विचार नहीं किया । आज के युग में ऐसी शिक्षित स्त्री बड़ी कठिनता से ही मिलेगी जिसे केवल गृह में रहकर ही आत्म-सन्तोष मिलती हो । घर और बाहर का प्रश्न केवल उच्च-मध्य तथा साधारण गृहस्थों की स्त्रियों से ही सम्बन्ध रखता है ।

बडे बडे संपन्न परिवारों में जहाँ घर के अन्य कामों के लिए दास-दासियों की कमी नहीं होती, स्त्री को केवल पति या पिता के घर का अलंकार-मात्र बनकर ही रहना पड़ता है । वर्तमान युग की आर्थिक परिस्थितियों ने मध्यम और निम्न श्रेणी के परिवारों में भी दास-दासियों को इतना सुलभ कर दिया है कि स्त्रियों को घर के कामों से काफी अवकाश

मिल जाता है । वे मानने लग गयी हैं कि उनके जीवन का उद्देश्य केवल घर के काम करना ही नहीं है, बल्कि वे अपना मानसिक विकास करके बाहर समाज की भी सेवा कर सकती हैं । अतः स्त्री में दोनों काम करने की क्षमता है । घर और बाहर दोनों क्षेत्र उसके लिए खुले हैं, उसके संबंध और कर्तव्य व्यापक हो गये हैं । बाहर काम करने से घर की मर्यादा नष्ट हो जाती है, यह बात बहुत पुरानी और तथ्यहीन है । शिक्षा, चिकित्सा आदि के क्षेत्र में स्त्रियों के सहयोग से समाज का लाभ होगा । कानून के क्षेत्र में भी स्त्रियाँ अपनी योग्यता और बुद्धि का परिचय दे सकती हैं । साहित्य निर्माण में स्त्री का सहयोग, व्यक्ति और समाज दोनों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है । महिला-साहित्य और बाल-साहित्य की रचना में पुरुष की अपेक्षा स्त्री ही अधिक सफल निकलेगी ।

परन्तु स्त्री को किसी भी क्षेत्र में कुछ करने के लिए पुरुष को थोडा त्याग करना होगा । स्त्री- जब घर से बाहर जाकर अपना कार्यक्षेत्र चुनेगी तो पुरुष को उसे आने जाने की, अन्य व्यक्तियों से मिलने-जुलने की भी स्वतंत्रता देनी होगी । पुरुष अपना दृष्टिकोण उदार कर देने से ही यह संभव है । भारतीय नारी में छिपी शक्ति से महादेवी भली भाँति परिचित हैं । भारतीय नारी के पास कई विशिष्ट गुण हैं । स्त्री का स्नेह और सहानुभूति समाज के सन्तप्त जीवन के लिए शीतलता का उपचार बनेगी । आधुनिक समाज पर विचार करते हुए महादेवी का मन्तव्य हैं कि आधुनिक समाज में स्त्रियों के उचित, स्वतंत्र, विवेकी व्यक्तित्व का विकास नहीं हो सका है और उनके प्रत्येक कार्य में पुरुष के विचारों की प्रतिकृति पायी

जाती है । इसी से "एक का निरादर है और दूसरी से अविराम संघर्ष ।"[1] समाज का दृष्टिकोण एकांगी हो जाने पर जीवन की अनेकरूपता असंभव हो जाती है । संकीर्णता में स्त्री-जीवन का सर्वतोन्मुखी विकास नहीं हो सकता । अत: स्वस्थ सामाजिक व्यवस्था के लिए, अपने महान उत्तरदायित्व के अनुकूल मानसिक तथा शारीरिक विकास के लिए, स्त्री को स्वाधीन रहना चाहिए । क्योंकि जीवन की "सब से बडी और पहली आवश्यकता सामाजिक प्राणियों के स्वतंत्र विकासानुकूल वातावरण की सृष्टि कर देना है ।"[2] महादेवी स्त्री के व्यक्तित्व में अपनी सहज, कोमलता और सहानुभूति के साथ साहस और विवेक का होना आवश्यक मानती हैं । तभी वह संकीर्ण परंपरागत रूढियों से मुक्त होकर स्वच्छन्द वातावरण में अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान प्राप्त कर सकेगी । 20-25 वर्षों में समाज में नारी की स्थिति सुधरने लगी तो महादेवी उन्हें अपने कर्तव्य की याद दिलाकर कहती हैं कि आधुनिक युग में पूर्व और पश्चिम के जागृत देशों में स्त्रियाँ बरबरता की, पुरुषों के स्वामित्व की बेड़ियों को काटकर अपने राजनीतिक, सामाजिक अधिकारों द्वारा अपनी शक्तियों का विकास करके घर-बाहर पुरुषों के समान समाज और राष्ट्र के विकास का मार्ग प्रशस्त कर रही हैं । उन्हें स्त्रियों का उद्धार करना चाहिए । समाज में स्त्री को उन्नत और आदरणीय स्थान प्राप्त करना है । आर्थिक पराधीनता से मुक्त होकर स्वतंत्रता से जीने का अधिकार देना चाहिए । संपत्ति के स्वामित्व से वंचित असंख्य संपन्न विधवाओं के जीवन की दुरवस्था हम भूल नहीं सकते । यदि पुरुष के समान स्त्री को भी अर्थ संबंधी सुविधायें उपलब्ध हैं तो वह किसी के लिए बोझ न बनेगी दूसरों द्वारा तुच्छ समझकर समाज में उसकी उपेक्षा न होगी

---

1. श्रृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 16
2. वही - पृ. 17

और सामाजिक, राजनीतिक उन्नति के लिए सहायक भी होगी । केवल परंपरा की दुहाई देना व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के लिए घातक सिद्ध होगा । अतः भारतीय नारी को, प्राचीन परंपरा को नवीन वातावरण के अनुकूल बनाकर नई समस्याओं को सुलझाना है । "अब स्त्रियों से सम्बद्ध अनेक प्राचीन वैधानिक व्यवस्थाओं में संशोधन तथा अर्वाचीनों का निर्माण आवश्यक है ।"[1] उन्हें अधिकार प्राप्त करके अपने वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में अपनी बहनों से संबंधित विचारों को स्पष्ट करना हैं । उन्हें क्रियात्मक रूप देकर समाज का हित करना है । यह प्रयास बाधाओं से मुक्त नहीं है । महादेवी की आशा हैं कि भारत की जागृत साधन सम्पन्न बहनें अपना स्थान और स्वत्व पाकर समाज के लिए उपयोगी कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकेंगी ।[2]

मध्यम श्रेणी की महिलाओं की दुर्बलतायें अनेक हैं और जीवन संघर्ष कठोर । उन्हें ऐसी सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकता है जिससे उनके जीवन में कुछ स्वावलम्बन और आत्म विश्वास आ सके । हमारे देश में कृषक तथा अन्य श्रमजीवी स्त्रियों की संख्या भी कम नहीं है । उनकी जागृति के बिना नारी की जागृति अपूर्ण रहेगी । अतः उनकी दुर्दशा और अभाव को दूर करके स्वावलम्बी बनाने का भार जागृत, विदुषी और संपन्न बहनों का है । शिक्षा, चिकित्सा आदि विभागों में काम करनेवाली महिलाएँ भी परिस्थितियों के प्रभाव से अपने जीवन को ढाल लेने में समर्थ हो सकी हैं । भारतीय नारी त्याग, बलिदान और साधना के मार्ग द्वारा पहले की अपेक्षा अपने साध्य तक पहुँचने की शक्ति एक हद तक अर्जित कर सकी है । "अपने कर्तव्य की गुरुता

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 21
2. वही - पृ. 27

भली-भाँति हृदयंगम कर यदि हम अपना लक्ष्य स्थिर कर सकें तो हमारी लौह-शृंखलाएँ हमारी गरिमा से गलकर मोम बन सकती हैं ; इस में सन्देह नहीं ।"[1] भविष्य में भारतीय समाज में स्त्री की क्या दशा होगी, उसके अधिकारों की क्या सीमा होगी आदि समस्याओं का समाधान आज की शिक्षित नारी पर निर्भर है ।

स्त्री का अर्थ स्वातन्त्र्य

महादेवी नारी की आर्थिक पराधीनता पर समाज के प्रति अपना आक्रोश प्रकट करती हैं । अर्थ सदैव से शक्ति का अन्धानुगामी रहा है । जीवन के सभी क्षेत्रों में शक्ति द्वारा निर्धारित व्यवस्थायें रही और सबल की सुविधा और इच्छा के अनुसार उनमें परिवर्तन और संशोधन होता रहा । इससे दुर्बलों को जो कुछ सुविधायें मिलीं उसे स्वीकार करना पडा । स्त्री और पुरुष सामाजिक सुविधाओं की समान अधिकारी हैं । लेकिन समाज की सभी व्यवस्थाओं में निर्बल, सबल के बीच अधिकार को लेकर संघर्ष और विषमता मिलती है । अर्थ केवल पुरुषों की ही वस्तु समझा जाता रहा । शताब्दियों के बीत जाने पर भी धार्मिक और सामाजिक दृष्टि से सहधर्मिणी और गृहणी के रूप से माननीय स्त्री की स्थिति में आर्थिक दृष्टि से कोई परिवर्तन नहीं हो सका । इस उद्देश्य से कई संघर्ष हुए, कई काव्य लिखे गये । स्त्री पुरुष के सुख का साधन मानी जाती रही । अपनी संपूर्ण सुविधाओं और समस्त सुखों के लिए स्त्री को पुरुष पर निर्भर रहना पडा । वस्तुतः स्त्री की स्थिति समाज के विकास को नापनेकमाप-दण्ड बन सकेगी । इस पर लेखिका आश्चर्य

---

1. शृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 27

प्रकट करती हैं " मातृत्व की गरिमा से गुरु और पत्नीत्व के सौभाग्य से ऐश्वर्यशालिनी होकर भी भारतीय नारी अपने व्यावहारिक जीवन में सबसे अधिक क्षुद्र और रंक कैसे रह सकी ।"[1] लेकिन स्त्री पुरुष की सहायता माँगे बिना ही जीवन बिता सकेगी । कठोर आर्थिक पराधीनता धीरे धीरे व्यक्ति के मानसिक तथा अन्य प्रकार के विकास और आत्मविश्वास पर बाधा डालेगी जिससे वह अपने सामाजिक व्यक्तित्व की रक्षा नहीं कर सकेगी । भारतीय नारी के संबंध में महादेवी कहती हैं कि "समाज ने उसकी निश्चेष्टता को भी उसके सहयोग और सन्तोष का सूचक माना और अपने पक्षपात और संकीर्णता को भी अपने विकास और उसके जीवन के लिए अनुकूल और श्रेयस्कर समझने की भूल की ।"[2]

अर्थ का विषम विभाजन स्त्री-पुरुष को समान रूप से प्रभावित करता है । समाज ने स्त्री के संबंध में अर्थ का ऐसा विषम विभाजन किया है कि साधारण श्रमिक वर्ग से लेकर संपन्न वर्ग की स्त्रियों तक की स्थिति अत्यन्त दयनीय है । स्त्री, पुत्री, पत्नी, माता कोई भी आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं है । पुरुष अपने व्यावहारिक जीवन के लिए स्त्री पर उतना निर्भर नहीं हैं जितना स्त्री को होना पड़ता है । इसलिए स्त्री को सदा पुरुष के अधीन रहना पड़ा । महादेवी आज की जागृत नारी के जीवन की अनेक विषमताओं में प्रधान विवशता अर्थ की मानती है । जीवन में विकास के लिए दूसरों से सहायता लेना बुरा नहीं है । लेकिन नितान्त परवशता बुरी है । इस विषमता को दूर करना है ।

---

१. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. ११०

२. वही - पृ. ११५

कोई नियम, कोई आदर्श हमेशा के लिए नहीं बताया जाता । सब में परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन अवश्यम्भावी है । आधुनिक परिस्थितियों में भी स्त्री ने आर्थिक स्वतंत्रता की आवश्यकता को अपना लक्ष्य बनाया है । उसने समझ लिया कि अपने सामाजिक व्यक्तित्व को बनाये रखने के लिए दूसरों से कुछ ले ही नहीं, दूसरों को कुछ दे भी सकती । "वह आत्म-निवेदित वीतराग तपस्विनी ही नहीं, अनुरागमयी पत्नी और त्यागमयी माता के रूप में मानती भी है और रहेगी । ऐसी स्थिति में उसे वे सभी सुविधाएँ, वे सभी मधुर कटु भावनाएँ चाहिए जो जीवन को पूर्णता प्रदान कर सकती हैं ।"[1] आज की बदली हुई परिस्थिति में स्त्री जिस नये आदर्श को ग्रहण करना चाहती है, उसकी सफलता पर लेखिका का अपना पूरा विश्वास है इसलिए वह चेतावनी देती है कि "समाज यदि स्वेच्छा से उसके अर्थ संबंधी वैषम्य की ओर ध्यान न दे, उसमें परिवर्तन या संशोधन को आवश्यक न समझे तो स्त्री का विद्रोह दिशाहीन आँधी-जैसा वेग पकड़ता जायेगा और तब तक निरन्तर ध्वंस के अतिरिक्त समाज उससे कुछ और न पा सकेगा । ऐसी स्थिति न स्त्री के लिए सुखकर है न समाज के लिए सृजनात्मक ।"[2]

भारतीय समाज में यह गलत-फहमी प्रचलित है कि नारी सभी दृष्टियों से पुरुष से दुर्बल है । नारी न शारीरिक बल से पुरुष को जीती, न विद्याबुद्धि से, उसने तो केवल पुरुष के नीरस जीवन को सरस बनाकर ही अपनी विजय प्राप्त कर ली । पुरुष के लिए वह बन्धन हीन, कर्तव्य ज्ञान

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 116
2. वही - पृ. 116

शून्य, समाज रहित रही । उसका ध्येय पुरुष को आकर्षित करना है । बर्बर पशु समान मनुष्य ने ऐसी नारी की इच्छा की । अतः ऐसी रूप-व्यवसायिनी नारी सब गुणों में पायी जाती है । इसीलिए स्त्री को कभी देवी कहा गया, कभी मन्दिर में नृत्य कराकर कला की दुहाई दी गयी और कभी उसे अपने मनोविनोद की वस्तु समझ ली गयी और कभी उसे पतिता के नाम से संबोधित किया गया । इन पतिता स्त्रियों ने पुरुष की वासना की वेदी पर कितना बलिदान दिया है - इस पर कभी किसी ने विचार ही नहीं किया । हमारे समाज ने कुष्ठ रोगियों के लिए आश्रम बनाये, विक्षिप्तों के लिए भी चिकित्सालयों का प्रबंध किया, परन्तु इनके कल्याण के लिए कोई मार्ग नहीं ढूँढा ।[1] यह समाज का अन्याय ही नहीं, एक प्रकार का निष्ठुर अत्याचार भी है । स्त्री की स्थिति को यथार्थ रूप में देखने के लिए उसे कुछ व्यावहारिक रूप में भी देखना होगा ।

कुछ लोगों का विचार है कि स्त्रियाँ वेश्या का व्यवसाय स्वेच्छा से चुनती है और किसी भी दशा में वे अपनी इस स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं चाहतीं । परन्तु ऐसी कल्पना बिलकुल निराधार है । सौ में कोई एकाध स्त्री ही ऐसी होगी जो इस व्यवसाय को अपने अपमान का कारण न समझती हो अन्यथा सब कोई इस व्यवसाय को छोडकर कोई ऐसा व्यवसाय करना चाहती हैं जिनसे उनका आत्म-गौरव बढ़े । ये अवश्य ही सुयोग्य पत्नी या माता बन सकती थी । उन्हें कलंकित करके पुरुष उनकी निन्दा करते लज्जित नहीं होता । पुरुष के प्रलोभनों और बर्बरता को विलासिता की इन नारियों को कहीं भी सहानुभूति नहीं मिलती । ये समाज की दृष्टि से

---

1. शृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 117

हमेशा के लिए घृणित और तिरस्कृत रहती हैं । पुरुष किसी भी प्रकार के चारित्रिक पतन से घृणा का पात्र नहीं होता । बड़े से बड़ा दुराचारी पुरुष भी सती स्त्री के चरित्र का आलोचक ही नहीं न्यायकर्ता भी बन सकता है । ऐसी स्थिति में महादेवी कहती हैं कि जब तक पुरुष को अपने अनाचार का मूल्य नहीं देंगे तब तक इन शरीर-व्यवसायिनी नारियों के साथ किसी रूप में कोई न्याय नहीं किया जा सकता ।

आधुनिक नारी पर पाश्चात्य प्रभाव

पश्चिमी जीवन से प्रभावित आधुनिक नारी की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए महादेवी कहती है कि आधुनिक काल की महिलाएँ तीन श्रेणियों में रखी जा सकती हैं । ये एक दूसरे से भिन्न हैं । कुछ ऐसी हैं जिन्होंने पिछले कुछ वर्षों में राजनीतिक आन्दोलन को सफल बनाने के लिए पुरुषों की सहायता की है । कुछ ऐसी शिक्षिताएँ हैं जिन्होंने सामाजिक त्रुटियों का कोई समाधान न पाकर अपनी शिक्षा को केवल आजीविका और सार्वजनिक उपयोग का ही साधन बनाया है । कुछ ऐसी भी हैं जिन्होंने थोड़ी-सी शिक्षा के साथ बहुत सी पाश्चात्य आधुनिकता को मिलाकर अपने गृह-जीवन को एक नया रूप दे दिया है ।

राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेनेवाली स्त्रियों का त्याग और बलिदान भुलाया नहीं जा सकता । इस प्रकार स्त्री समाज को अपनी शक्ति का भान हुआ और वह मानने लगी कि वह भी पुरुष के साथ पग से पग मिलाकर चल सकती है । "क्रांन्ति की अग्रदूती और स्वतंत्रता की ध्वजा-धारिणी

नारी का कार्य जीवन के स्वस्थ निर्माण में शेष होगा, केवल ध्वंस में नहीं ।"[1]

शिक्षित नारियाँ ऐसी भी हैं जो शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य को नहीं समझतीं और समाज या देश के कल्याण के प्रति अपना कर्तव्य नहीं निभातीं । महादेवी की राय में भारतीय नारी चाहते हुए भी पश्चिमी नारीवत् नहीं बन सकती । पश्चिम की नारी जो आधुनिक वातावरण में पली हैं, आर्थिक दृष्टि से भी स्वतंत्र हैं । इसलिए सभी सामाजिक बन्धनों पर उसका अधिक प्रभुत्व है । नारी में ममता, त्याग, बलिदान, सहनशीलता आदि जो गुण हैं वे सब सहज और प्राकृतिक हैं । इसलिए भावुकता को वह त्याग नहीं सकी है । जहाँ एक ओर वह हर क्षेत्र में पुरुष को नीचा दिखाने का प्रयत्न करती है वहाँ दूसरी ओर पुरुष में नारी के प्रति जिज्ञासा जागृत रखने के लिए अपने सौंदर्य को बढ़ाने के कई कृत्रिम उपाय करती है । महादेवी के शब्दों में "वह अपनी प्रकृति को वस्त्रों के समान जीवन का बाह्य आच्छादन मात्र बनाना चाहती है, जिसे इच्छा और आवश्यकता के अनुसार जब चाहे पहना या उतारा जा सके ।"[2] पश्चिम में स्त्रियों ने बहुत कुछ पा लिया है परन्तु उनके भीतर की चिरन्तन नारी नहीं बदली है । पश्चिम स्त्री के समान सुख-सुविधायें प्राप्त न होने पर भी उसने उन्हीं को अपना मार्गदर्शक बनाना निश्चित किया है । परन्तु भारतीय नारी ने जब-जब भी पुरुष को अपने प्रतिद्वन्द्वी के रूप में देखने की कल्पना की, उसे एक प्रकार का आन्तरिक असन्तोष ही हुआ ।

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 56
2. वही - पृ. 49

आधुनिक नारी को प्राचीन विचारों का उपासक पुरुष-समाज अवहेलना की दृष्टि से देखता है । वह कभी उससे भयभीत होता है कभी उस पर हँसा देता है । "आधुनिक स्त्री जितनी अकेली है, उतनी प्राचीन नहीं, क्योंकि उसके पास निर्माण के उपकरण मात्र है, कुछ भी निर्मित नहीं ।"[1] इस हालत में स्त्री को अपनी योग्यता का परिचय देने के साथ साथ अपने ज्ञान और बढ़ाई का प्रमाण देने का प्रयास भी करना पड़ा । इस प्रकार पुरुष संबंधी परंपरागत विचार और अपने भीतर की नारी प्रवृत्ति की अस्थिरता ने उसे पुरुष के समकक्ष स्थान पाने की प्रेरणा दी ।

युद्ध के प्रति नारी का दृष्टिकोण

युद्ध के संबंध में पुरुष और स्त्री के दृष्टिकोण में जो अन्तर है, उसे व्यक्त करते हुए महादेवी कहती हैं कि सभ्यता की पहली सीढ़ी के साथ ही युद्ध का प्रारंभ हो गया । पुरुष को युद्ध से प्रेम है । वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की पूर्ति के लिए और अहंभाव को ऊँचा करने के लिए युद्ध का सहारा लेता रहा है । "पुरुष का जीवन संघर्ष से आरंभ होता है तो स्त्री का आत्म समर्पण से ।" स्त्री और पुरुष के स्वभाव में अन्तर हैं ., जिसने उन्हें एक दूसरे के साथ संबंध स्थापित करने योग्य बना दिया । सबल पुरुष पर शासन करने के साथ अनेक दुर्बलों को सबल बनाना है, इस कर्तव्य बोध के साथ घर की नींव स्त्री की बुद्धि पर रखी गई हैं, पुरुष की शक्ति पर नहीं । उसे अपने पारिवारिक जीवन के लिए दूसरों का सहयोग आवश्यक हो गया । स्त्री घर पर अनुरक्त है । घर ही उसका जीवन है । युद्ध घर के लिए नाशकारी है अतः नारी युद्ध से

---

1. श्रृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा - पृ.53

विमुख है । उसके स्नेह, तपस्या, त्याग, प्रेम आदि गुणों का विकास शांतिपूर्ण वातावरण में ही संभव है । स्त्री के स्वभाव ने पुरुष को युद्ध से कुछ विमुख अवश्य किया है । किन्तु पुरुष के अन्दर दबी युद्ध-भावना को वह पूर्णतः न दबा सकी । अतः देश, राष्ट्र, जाति के बीच होनेवाले युद्ध संघर्ष में वह भाग लेता है । अपनी अधिकार-लिप्सा में पुरुष स्त्री को बाधक बनने नहीं देता और युद्ध विमुखता को स्त्री की दुर्बलता मानता है । स्त्री में कोरी भावुकता इसलिए है कि उसमें शक्ति नहीं । इस पर नारी फिर शक्ति का रूप धारण कर गयी और वे अस्त्र जो उसने कभी छोडे थे एक बार फिर उसके आभूषण बन गये । "आपत्ति काल में नारी ने अस्त्र धारण कर सृष्टा का पद छोडकर संहारक का कार्य भी किया है..... आधुनिक युद्ध प्रिय राष्ट्रों की नारियों में यह संस्कार जन्म पा रहा है कि करुणा, दया, स्नेह आदि स्वभाव जात गुणों के संहार के लिए यदि पुरुष - जैसा पाशविक बल उनमें न आ सके तो उनकी जाति जाने योग्य नहीं ।"[1]

निष्कर्ष

महादेवी ने अत्यन्त गंभीर और शान्त मन से नारी-समस्या के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है । नारी समस्या पर उनका विचार सामाजिक भलाई की ओर उन्मुख है और उनकी पुष्टि सामाजिक चेतना का परिचय देती हैं । भारतीय नारी के जीवन के संबंध में महादेवी के विचारों में सत्य अधिक है । यद्यपि विज्ञान के प्रभाव के कारण भारतीय नारी के जीवन में विकास हुआ है तथापि हमारे समाज की स्त्रियाँ अभिशाप से पूर्णतः मुक्त नहीं ।

---

1. शृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 35

सांस्कृतिक निबंध

"क्षणदा", "संकल्पिता" और "संभाषण के कुछ निबंधों में संस्कृति संबंधी महादेवी के विचार व्यक्त हैं । महादेवी भारतीय संस्कृति पर गर्व करती हैं । इन में संस्कृति, संस्कृति और प्राकृतिक परिवेश, संस्कृति की पृष्ठभूमि, साहित्य, संस्कृति और शासन, भारतीय संस्कृति और बौद्ध धर्म आदि पर महादेवी अपने स्वतंत्र, प्रौढ़ विचार प्रस्तुत करने का प्रयत्न करती हैं ।

संस्कृति

संस्कृति की परिभाषा देते हुए महादेवी कहती हैं "संस्कृति जीवन के बाह्य और आन्तरिक संस्कार का क्रम ही तो है और इस दृष्टि से उसे जीवन को सब ओर से स्पर्श करना ही होगा । इसके अतिरिक्त वह निर्माण ही नहीं, निर्मित तत्वों की खोज भी है । भौतिक तत्व में मनुष्य प्राणितत्व को खोजता है, प्राणितत्व में मनस्तत्व को खोजता है और मनस्तत्व में तर्क तथा नीति को खोज निकालता है, जो उसके जीवन को समष्टि में सार्थकता और व्यापकता देते हैं । इस प्रकार विकास पथ में मनुष्य का प्रत्येक पग अपने आगे सृजन की निरन्तरता और पीछे अन्वेषण छिपाये हुए हैं ।"[1] मानव के हर क्षेत्र में विकास ही उस देश की संस्कृति के विकास में साथ दे सकता है ।

बदलती परिस्थितियों के अनुसार संस्कृति शब्द की परिभाषा भी बदलती रहती है । जैसे जीवन निरन्तर सृजन का नाम है वैसे ही संस्कृति

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 2।

भी निरन्तर विकासशील है । संस्कृति नदी के समान गतिशील है । देश, काल, जल-वायु एवं मानव की व्यक्त और अव्यक्त विचारधाराएँ उसका परिष्कार करती रहती हैं । किसी जाति की संस्कृति को समझने के लिए उसके विकास की सभी दिशाओं का ज्ञान अनिवार्य है । किसी मनुष्य समूह के साहित्य, कला, दर्शन और प्रत्येक व्यक्ति के शिष्टाचार भी उसकी संस्कृति का परिचायक है । महादेवी के अनुसार जीवन जैसे आदि से अंत तक निरन्तर सृजन है वैसे ही संस्कृति भी निरन्तर संस्कार-क्रम है । हमारा यह सृजन क्रम विचार, ज्ञान, अनुभव, कर्म आदि क्षेत्रों में चलता रहता है ; उसी के द्वारा हम जीवित रहते हैं । जीवन पूर्ण हो गया का अर्थ उसका समाप्त हो जाना है । संस्कृति के संबंध में ही यही बात सच है ।

संस्कृति और प्राकृतिक परिवेश

जड-जगत् की अपनी चेतना शक्ति विद्यमान है । जीव का प्रकृति, प्राकृतिक परिवेश से विशेष संबंध है । अतः मानव संस्कृति के विकास में इसका महत्वपूर्ण योग है । मानव जैसी प्रकृति का श्रेष्ठतम रूप है और उसका विकास क्रम अधिक स्पष्ट है । मनुष्य ने अपने बौद्धिक और मानसिक शक्ति द्वारा अपने जीवन मूल्यों का आविष्कार किया और इस प्रकार संभाव्य मूल्यों को बनाता और बिगाडता रहा । मानव के निर्माण के लिए प्रकृति ने जिस प्रकार जैव-सृष्टि में अनेक प्रयोग किये वैसे मानव भी अपनी भाव सृष्टि द्वारा अनन्त प्रयोग करता आ रहा है । भिन्न भिन्न प्राकृतिक परिवेशों से प्रभाव ग्रहण

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 2।

करके वर्ण, रूप गठन आदि में विशेष होकर भी मनुष्य जाति की मानवीयता में सामान्य है । प्रत्येक भूखण्ड के निवासी मानव विकास के पथ पर चलकर एक साथ बुद्धि और हृदय के संस्कार के एक ही स्तर पर पहुँच सके । संस्कृति वस्तुत: "ऐसी जीवन पद्धति है जो एक विशेष प्राकृतिक परिवेश में मानव निर्मित परिवेश संभव कर देती है और फिर दोनों परिवेशों की संगति में निरन्तर स्वयं आविष्कृत होती रहती है ।..... इसमें मनुष्य के सूक्ष्म विचार, कल्पना, भावना आदि का संस्कार उसकी चेष्टा, आचरण आदि बाह्याचार की परिष्कृति उसके अन्तर्जगत पर प्रभाव डाली है ।"[1] सभ्यता संस्कृति का पर्याय नहीं है । वह मनुष्य के मात्र भ्रष्टाचार को व्यक्त करती है । यह विशेषता आन्तरिक संस्कार की है । तत्वत: एक होने पर भी मनुष्य जाति को विभिन्न परिवेशों में विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ा और भिन्न समाधानों को स्वीकार करना पड़ा । इस प्रकार प्रत्येक मानव समूह की जीवन-पद्धति में अन्दर होता है । कालान्तर में एक विशेष प्राकृतिक परिवेश में विकसित होकर सामान्य मानव जाति के भीतर उपजाति उत्पन्न होती है । प्रत्येक देश या राष्ट्र भी इस प्रकार व्यक्तित्व संपन्न हो जाता है । प्रत्येक मानव जाति अपनी संस्कृति प्राकृतिक परिवेश के आधार पर प्राप्त करती है और उसके अनुसार संज्ञा पाती है । जिस संस्कृति के पास जीवन के व्यापक मूल्य और उपलब्धियाँ सुलभ हैं अपनी शक्ति के द्वारा दूसरी संस्कृति पर विजय प्राप्त करती हैं । मानव जीवन की एकता में आस्थावान जाति पर कोई संघर्ष विजय प्राप्त नहीं कर सकता । मनुष्य और उसके परिवेश के व्यक्तित्व के समान धर्म, दर्शन, साहित्य आदि की सभी उपलब्धियों के बीच में एक सक्रिय जिज्ञासा रहती है जो मूल्यों का निर्माण करती हैं । इस जिज्ञासा में मानव की चिर अतृप्ति विद्यमान है जिससे एक के बाद एक का हल करके अनेकों दिशाओं में वह क्रियाशील हो उठता है । उदाहरण के लिए भारत का प्राचीन साहित्य पूर्वजों की संघर्ष-कथा ही नहीं उनकी कठिन कोमल प्रकृति का उद्गीथ भी है ।[2] यहाँ के प्राकृतिक परिवेश में मानव जीवन की

विशिष्ट संस्कार पद्धति है, उपलब्धि है, इन सब की समग्रता भारतीय संस्कृति की संज्ञा में अन्तर्निहित है ।

भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि

महादेवी भारतीय संस्कृति का उद्गम-स्रोत वैदिक साहित्य मानती हैं । वैदिक साहित्य के समान प्राचीन और समृद्ध साहित्य विश्व में किसी भी देश के मानव के पास नहीं । हिमालय भारतीय संस्कृति के हर नये चरण का पुरातन साथी रहा है । भारत के वैभवपूर्ण अतीत वर्तमान, आशामय भविष्य के साथ हिमालय का अटूट संबंध रहा है और रहेगा । जो विजयी बनने की कामना से उसपर चढ़ने गये, उन्होंने उसकी और उसके साथ समाधि करनेवाले साधुओं की समाधि को भंग कर दिया । "संसार के किसी अन्य पर्वत को मानव की संस्कृति, काव्य, दर्शन, धर्म आदि के निर्माण में ऐसा महत्व नहीं मिला है जैसा हमारे हिमालय को प्राप्त है । वह मानों भारत की संश्लिष्ट विशेषताओं का ऐसा अखण्ड विग्रह है, जिस पर काल कोई खरोंच नहीं लगा सका ।"[1] भारतीय संस्कृति के विकास में हिमालय के समान भारतीय नदियों की भी महत्वपूर्ण भूमिका है । गंगा, यमुना, सरस्वती तीर्थों के तटों पर भारतीय संस्कृति का उद्भव और विकास हुआ ।

प्राकृतिक परिवेश की विविधता ने वैदिक साहित्य को सूक्ष्म, अक्षय सौंदर्यबोध प्रदान किया और मानव की जिज्ञासा को रहस्यमय दार्शनिक

---

1. संभाषण - महादेवी वर्मा - पृ. 29-30

सिद्धांतों तक व्याप्त किया । स्थूल प्रकृति की पृष्ठभूमि में जो सूक्ष्मता है वह बाह्य रूप में निहित स्थूलता का आभास है । "साहित्य यदि संस्कृति का अक्षय वसन्त है तो जीवन दर्शन को उसकी धरती की गहनता में छिपा लू कहा जा सकता है ।"[1]

भारतीय चिन्तन की पद्धतियाँ उसके परिवेश की ऋणी है । प्रकृति के भिन्न भिन्न रूपों ने मानव के अन्तर देवत्व का बोध पैदा किया । "सर्वं खलिवदं ब्रह्मा" "काव्य में जो तत्व सौंदर्य की सीमा में बँध गया है, वही दर्शन में सत्य के रूप में मुक्त हो सका है और पुनः वही नैतिक धरातल पर शिव की परिभाषा में अवतरित हुआ है ।"[2]

"भारतीय संस्कृति विविधतामयी है, क्योंकि भारत की प्रकृति अनन्त रूपा है । वह समन्वयवादिनी है, क्योंकि प्रकृति सब को स्वीकृति देती है ।"[3] उसमें ज्ञान, कर्म, और भक्ति की भिन्न विचारधाराएँ तथा बौद्ध, ब्राह्मण एवं मुस्लिम संस्कृतियाँ समंजित होकर एक रूप हो गई हैं । "भारतीय संस्कृति तो शताब्दियों को छोड सहस्राब्दियों तक व्याप्त तथा एक कोने में सीमित न रहकर बहुत विस्तृत भूभाग तक फैली हुई है ।"[4] अपनी संस्कृति के विकास में साधक भी हम ही थे और आज बाधक भी हम ही है । भारतीय संस्कृति के अतीत की वैभव कथा मात्र हमें सुनाई नहीं देती, वरन् वर्तमान की

---

1. संभाषाण - महादेवी वर्मा - पृ. 69
2. वही - पृ. 69
3. वही - पृ. 70
4. महादेवी साहित्य - सं. ओंकार शरद - पृ. 34

करुण-गाथा भी साथ ही हमारे कानों में गूँजती रहती है । "भारतीय संस्कृति निश्चित पथ से काट-छाँट कर निकाली हुई नहर नहीं, वह तो अनेक स्रोतों को साथ ले अपना तट बनाती और पथ निश्चित करती हुई बहनेवाली स्रोतस्विनी है ।"[1] "किसी एक विचार, एक भावना और एक धारणा की सीमा उसके लिए बन्धन है, क्योंकि वह असंख्य नदियों, स्रोतों को अपने में मुक्ति देनेवाला समुद्र है ।"[2]

साहित्य, संस्कृति और शासन

भारतीय संस्कृति के सदभव स्थान पर जन्मे तुलसी, सूर, कबीर जैसे साधकों और सारस्वत पुत्रों ने भारत की समन्वयात्मक संस्कृति को भारतीय साहित्य और चिन्तन के रूप में प्रकाशित किया । इस पुण्य देश के महाकवि कालिदास विश्व विख्यात है । यहीं से वह किसी भी समस्या को सुलझा सकती हैं । खेद की बात है कि हम इस उच्च संस्कृति के उपयोग केलिए, नव-निर्माण के लिए किसी योजना का आविष्कार नहीं कर सके । देश की परतन्त्रता का, विकास-शील सांस्कृतिक परंपराओं पर कहीं बुरा प्रभाव पडा । आज राजनीतिक दृष्टि से हम स्वतंत्र हैं लेकिन हमारी मानसिक दासता दूर नहीं हुई है । "हमारी राजनीति दलों में गतिशील है । हमारा धर्म रूढियों में अचल हैं और हमारा समाज विषमता में मूर्छित है ।"[3] इससे छुटकारा केवल साहित्यकार से संभव है राजनीति से नहीं । साहित्यकार, कलाकार और

---

1. महादेवी साहित्य - सं. ओंकार शरद - पृ. 34
2. संभाषाण - महादेवी वर्मा - पृ. 70
3. वही - पृ. 39

चिन्तक निराशा के अन्धकारपूर्ण जीवन में आलोक बिखेर सकते हैं । वे जीवन को आदर्श देते हैं, उसके मूल्यों की स्थापना करते हैं और उन मूल्यों की रक्षा के लिए जीवन की वाणी लगाने में प्रेरणा भी देते हैं । स्वस्थ शरीर और मन के समान राष्ट्र का मानसिक और भौतिक विकास इन्हीं के द्वारा होता है ॥ अत: महादेवी कहती हैं कि "राज्य की योजनाओं में ऐसी निश्चित योजना होनी चाहिए जिससे साहित्य और राजनीति मिलकर निर्माण कार्य कर सके ।"[1] संस्कृति और साहित्य के साथ शिक्षा का अटूट संबंध है । विदेशी शासकों ने हमारी शिक्षा में सांस्कृतिक विशेषताओं पर बल नहीं दिया । शिक्षा का मतलब विद्यार्थी को पूर्ण बनाना है । लेकिन इस ओर विदेशियों का ध्यान नहीं गया ।

शिक्षा का उद्देश्य विशेष संस्कार और परिस्थिति के अनुकूल मनुष्य की बुद्धि, हृदय और ज्ञान का संशोधन और सुधार करके समाजोपयोगी नागरिक को उपलब्ध करना है । हमारी शिक्षा-व्यवस्था में मनुष्य की संभावनाओं की ओर ध्यान नहीं दिया गया । इसका परिणाम है कि "जिस व्यावसायिक नियम से हम महंगा प्रमाण पत्र देने का व्यापार करते हैं उसी से खरीददार वैध-अवैध, उचित-अनुचित किसी भी साधन से सस्ता प्रमाण पत्र चाहता है । इससे बाधा डालने पर विद्यार्थियों द्वारा शिक्षकों की हत्यायें तक हो चुकी हैं । मार-पीट के समाचार तो नित्य ही मिलते रहते हैं ।"[2] समाज-परिस्थिति से जो संकट ग्रस्त है उनका जीवन निराशा से कुण्ठित है ।

---

1. संभाषण - महादेवी वर्मा - पृ.41
2. वही - पृ.42

उनसे देश के नवनिर्माण की प्रतीक्षा व्यर्थ है । महादेवी कहती हैं "प्रेरणा, स्फूर्ति और ज्ञान की दृष्टि से हमारी शिक्षा में ऐसा क्रान्तिकारी परिवर्तन चाहिए जो नवीन पीढ़ी को चारित्रिक दृढ़ता और सांस्कृतिक दृष्टि दे कर उन्हें उस महान देश के गौरव के अनुरूप सशक्त और उदार मनुष्य बना सके ।"[1] एकता और विश्व बन्धुत्व की भावना साहित्य में निहित हैं । यदि आज के विषम जीवन में एकता बनाये रखना चाहते हैं तो हमें शिक्षा में साहित्य और संस्कृति का विशेष स्थान देकर, विद्यार्थी को मानव एकता और विश्व बन्धुत्व का सन्देश देकर, उन्हें पूर्ण मनुष्य बना देना है ।

भारतीय संस्कृति और बौद्ध दर्शन

महात्मा बुद्ध के विचार उनके व्यक्तित्व और करुणाभाव से महादेवी अत्यधिक प्रभावित हैं । भारतीय संस्कृति के निर्माण में महात्मा बुद्ध का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । वे अहिंसा और शांति के संदेशवाहक और कर्मनिष्ठ तत्वान्वेषक हैं । बौद्ध संस्कृति और वैदिक संस्कृति में कुछ अन्तर है । वैदिक संस्कृति किसी विशाल संस्कृति का अन्तिम चरण है और बौद्ध संस्कृति विषम परिस्थितियों के भार से दबे जीवन का संपूर्ण प्राण-प्रवेग है । वैदिक संस्कृति में शक्ति का गर्व है और सृजन का ओज है पर बौद्ध संस्कृति में सहानुभूमि है शक्ति का प्रदर्शन नहीं, निर्माण का अहंकार नहीं । वैदिक संस्कृति अपनी यथार्थता में आदर्श के निकट है और बौद्ध संस्कृति अपनी बौद्धिकता में अधिक यथार्थोन्मुखी है । परन्तु दोनों विकास की ओर अग्रसर हैं ।

---

1. संभाषण - महादेवी वर्मा - पृ. 43

महादेवी ने करुणा का संदेशवाहक भगवान बुद्ध को स्वीकार किया है । उनके अनुसार आदर्श पुरुष बुद्ध ने भारतीय संस्कृति को गति प्रदान की है । उन्होंने बुद्ध को मानव-मानव के बीच सीधा संबंध बनानेवाला करुण सेतु माना है । महात्मा बुद्ध में कठोर बुद्धिवाद और कोमल मानवीय तत्व का संयोग प्राप्त है । बुद्ध विशुद्ध बौद्धिक और सहज मानव भी । साधारण मानव होकर वे मानवों के भगवान बन गये । अपने धर्म की स्थापना में परमात्मा की मध्यस्थता न स्वीकार करनेवाले वे एकमात्र व्यक्ति हैं । बुद्धिवाद और मानवतावाद के साथ उनकी दूरदर्शिता और संगठन शक्ति सम्मिलित थीं । बौद्ध संस्कृति के बुद्ध, धर्म और संघ तीन स्तंभ हैं । जिनमें पहला बुद्ध द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों से संबंध रखता है, दूसरा उनके द्वारा निश्चित नैतिक आचरण से और तीसरा सिद्धांत और धर्म के प्रसारार्थ संगठन से । सिद्धांतों के संबंध में सहज व्यावहारिकता का ध्यान रखकर और संघ के संबंध में सद्भाव - मूलक नियंत्रण रखकर उन्होंने अपने निर्माण की गहराई और ऊँचाई दोनों दी थी ।

बुद्ध का मार्ग दुःख का मार्ग नहीं बल्कि निवृत्ति का मार्ग है । दुःख उनके अनुसार प्रत्यक्ष जीवन का दुःख है । धन, काम आदि की तृष्णा से ही मनुष्य दुःखी होता है । मनुष्य कोई वस्तु प्राप्त करने का प्रयत्न करता है पर उसे नहीं मिलती तो दुःख होता है । अतः जब तक मनुष्य अपनी तृष्णा और इच्छा को समाप्त नहीं करता तब तक उसके दुःख का अन्त भी नहीं । इस प्रकार बुद्ध ने जो कुछ कहा वह मौलिक और भारतीय परंपरा के अनुरूप ही है । बौद्ध धर्म ने भारत से जन्म लेकर विदेश में विकास पाया । फिर भी वह भारतीय संस्कृति के अनुकूल है और भारतीय बिना किसी कठिनाई के इसे अपना सकता है ।

निष्कर्ष

महादेवी अपने सांस्कृतिक निबंधों में भारतीय संस्कृति की, यहाँ की प्रकृति, हिमालय, नदियाँ आदि से संबंध जोडकर उनकी महिमा गाती हैं । संस्कृति के साथ बौद्ध धर्म संबंधी उनके विचार भी उच्चकोटि के हैं ।

भाषा संबंधी निबंध

महादेवी अपने कुछ निबंधों में भाषा का स्वरूप, उसका विकास भारतवर्ष की भाषाओं तथा राष्ट्रभाषा पर प्रकाश डालती हैं । "भाषा का प्रश्न" लेख में भाषा की उत्पत्ति संबंधी विभिन्न मतों पर विचार करते हुए उन्होंने भाषा को मानव की सब से रहस्यमयी तथा मौलिक उपलब्धि माना है । "वैसे बाह्य जगत भी ध्वनि संकुल है तथा मानवेतर जगत् को भी अपने सुखद-दुःखद जीवन स्थितियों को व्यक्त करने के लिए कण्ठ और स्वर प्राप्त है ।"[1] पशु-पक्षियों से मनुष्य को अलग करनेवाला उत्तम साधन भाषा है । पशु-पक्षी भी ध्वनियों द्वारा अपने सुख-दुःख को व्यक्त करते हैं । लेकिन वे सार्थक नहीं है । इनमें प्रेषणीयता का अभाव है । मनुष्य की ध्वनियाँ सार्थक हैं उसमें हृदय और बुद्धि को समान रूप से किसी विचार या भाव का बोध देने की शक्ति है । मनुष्य सर्जनात्मक प्रतिभा से अपनी जीवन-अभिव्यक्ति के लिए ध्वनियों को शब्द संकेतों के नये रूपों में परिवर्तित करके प्रयोग करने लगा । वाणी द्वारा उसने अपने रागात्मक संस्कार और बौद्धिक उपलब्धियों को उचित भाषा में स्थापित किया । "मनुष्य की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति में सब से अधिक

---

1. संभाषण - महादेवी वर्मा - पृ. 7।

समर्थ और अक्षर भाषा ही होती है ।"[1] वह मनुष्य की आन्तरिक बाह्य परिष्कार का साधन है । भाषा ध्वनि, अर्थ, शब्द का समन्वित रूप है । मनुष्य की भाषा अनेक सरल, जटिल, अन्तर बाह्य प्रभाव में पडकर परिवर्तित हो जाती है । कालान्तर में मनुष्य के समग्र जीवन की अभिव्यक्ति शब्दों द्वारा संभव हो जाती है । प्रत्येक संस्कृति से संबंधित अपनी भाषा होती है । ध्वनि का ज्ञान आत्मानुभव से और अर्थ का बुद्धि से प्राप्त होते हैं । वाणी आत्मानुभूति की मौलिक अभिव्यक्ति है जो समष्टि भाव से अपने विस्तार के लिए भाषा का रूप ग्रहण करती है । इसी से पाणिनि ने कहा है "आत्मा बुद्धया समेत्यार्थात् मनोयुक्ते विवक्षया" । {आत्मा बुद्धि के द्वारा सब अर्थों का आकलन करके मन में बोलने की इच्छा अपना करती है ।}

भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार भाषा में भिन्नता पैदा होती है । भाषा व्यावहारिक जीवन में आदान-प्रदान की वस्तु है । हमारे देश की स्थानात्मक विविधता, उसकी सांस्कृतिक एकता की पूरक रही है । यहाँ की जीवन पद्धति, चिन्तन, सौंदर्य बोध में भिन्नता होते हुए भी तत्वगत एकता पायी जाती है । प्रत्येक राष्ट्र संस्कृति और प्रबुद्ध मानवीय समाज के द्वारा गरिमा प्राप्त करता है । भारत वर्ष इसका उत्तम उदाहरण है । यहाँ अनेक भाषायें बोली जाती हैं उनमें से प्रत्येक भाषा "वीणा के ऐसे सधे तार के समान रह कर ही सार्थकता पाती है, जो रागिनी की संपूर्णता के लिए ही अपनी झंकार में अन्य तारों से भिन्न है ।"[2] सभी भारतीय भाषाओं ने अपनी

---

1. संभाषण - महादेवी वर्मा - पृ. 72
2. वही - पृ. 73

भावनाओं और विचारों की उपलब्धि से राष्ट्र जीवन को संपन्न किया है । "उनकी देशगत भिन्नता, उनकी तत्वगत एकता से प्राणवती होने के कारण महार्घ है ।"[1]

यद्यपि राजनीतिक दृष्टि से हम स्वतंत्र हैं तथापि भाषा की दृष्टि से हम ऐसे बन्धन में पडे हैं जिससे किसी भी प्रकार मुक्त नहीं हो सकते । अज्ञान के अन्धकार में पडे हमारे देश में दृष्टि के आलोक ने पथ की सीमाओं को उज्ज्वल बनाया । इस आलोक की दीपशिखा भाषा ही है ।

हमारा देश और राष्ट्र भाषा

भारत वर्ष की अनिवार्य विशेषता उसकी भौगोलिक अखण्डता और सांस्कृतिक एकता है । हिमालय से कन्याकुमारी तक फैला हुआ हमारा देश, आकार और आत्मा दोनों दृष्टियों से महान् और सुन्दर है । उसका बाह्य सौंदर्य विविधता की सामजंस्यपूर्ण स्थिति है और आत्मा का सौंदर्य विविधता में छिपी हुई एकता में है । इस महादेश की प्रतिभा ने इसकी अन्तरात्मा को एक रसमयता में प्लावित करके इसे विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान किया है, जिससे यह आसमुद्र एक नाम की परिधि में बँध जाता है ।"[2] ये सभी बाह्य और आन्तरिक, स्थूल और सूक्ष्म स्थितियाँ एक दूसरे पर प्रभाव डालती और एक दूसरे से संयमित होती चलती हैं । हमारा देश अपने

---

1. संभाषण - महादेवी वर्मा - पृ. 73
2. वही - पृ. 75

प्राकृतिक वैभव और आन्तरिक विभूति दोनों में अत्यन्त समृद्ध हैं । एक भूखण्ड में रहनेवाले लोगों का आपसी परिचय संपर्क आदि उसके आन्तरिक-बाह्य संसार को प्रभावित और संचालित करता है । आचार, नीति, व्यवस्था, दर्शन आदि के समन्वय से वहाँ के मानव का व्यक्तित्व रूपायित होता है । अर्थात् प्रत्येक राष्ट्र की संस्कृति अक्षय ही होती हैं यद्यपि परिस्थितियाँ क्षणिक होती हैं । "मानव संस्कृति एक होकर भी अनेक रूपात्मक ही रहेगी । उसकी विविधता का नष्ट होना उसके व्यक्तित्व का पाषाणीकरण है ।"[1]

हमारा देश अपने प्राकृतिक वैभव और आन्तरिक विभूति दोनों में अत्यन्त समृद्ध है । "रूपात्मक प्रकृति के प्रति हमारी रागात्मक दृष्टि, जीवन के प्रति हमारी आस्था, समाज, देश और विश्व के विषय में हमारी नैतिक मान्यताएँ तत्त्वतः एक रही है, इसी से हमारे साहित्य, कला, दर्शन आदि अपनी विविधता में भी एक ही है ।"[2]

भारत में विविध भाषायें प्रचलित हैं । एक प्रदेश में रहनेवाले मानव-समूह की भाषा उनके परस्पर व्यवहार का साधन है । साथ ही उनके उस समूह के जीवन, सुख-दुःख, आकर्षण, विकर्षण, स्वप्न-आकांक्षा, यथार्थ-आदर्श, जय-पराजय आदि की अभिव्यक्ति भी है । अतः भाषा और संस्कृति का अविच्छिन्न संबंध है । किसी जाति की भाषा के अध्ययन से उसके

---

1. संभाषण - महादेवी वर्मा - पृ. 76
2. वही - पृ. 77

सांस्कृतिक विकास का परिचय मिलता है । भाषा ही अनेक संकेतों द्वारा संस्कृति को चिरन्तन रूप प्रदान करती है । देश का व्यक्तित्व उसकी संस्कृति है । वह सार्वभौम होकर भी उसका अपना रहा है । हमारे देश की स्थिति अन्य भाषा भाषी देश से भिन्न है । हमारी अपनी एक भाषा होती है, लेकिन हम पराधीन बनने के कारण उसको अब तक पूर्णत: प्राप्त नहीं कर सके ।

जहाँ तक हिन्दी का प्रश्न है वह अवधी, व्रज, भोजपुरी, मगही, बुँदेली, आदि प्रादेशिक बोलियों और भाषाओं के साथ विकसित हुई । हिन्दी ने अपनी प्रकृति और गठन के अनुसार इन सभी बोलियों से और देशी-विदेशी भाषाओं से आवश्यकतानुसार शब्दों को ग्रहण करके समृद्ध हो गयी । प्रत्येक जीवित भाषा गतिशील होकर विकसित और परिमार्जित हो जाती है । हिन्दी के भावी रूप को भी उसकी गति का स्वाभाविक परिणाम होना चाहिए । वे उसे संपूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए दोहरे सम्बल की आवश्यकता मानती हैं । उसको बाह्य जगत् के प्रति विशाल दृष्टिकोण रखना चाहिए और अपने रूप को सबल और परिचित बनाना चाहिए । उसकी लिपि का स्वरूप ऐसा है कि नाम मात्र के परिवर्तन से वह संपूर्ण भारतीय भाषाओं के लेखन और आधुनिक युग के टंकन, मुद्रण यंत्रों के साथ अपनी संगति बैठा लेगा । भाषा को सीखना उसके साहित्य को जानना है और साहित्य को जानना, मानव-एकता की स्वानुभूति है । साहित्य के द्वारा मनुष्य सुख दु:ख की कथा दूसरों तक पहुँचा देता है । साहित्य के प्रेय और श्रेय की चर्चा करते हुए आपने कहा है कि प्रत्येक युग और प्रत्येक देश में साहित्य की उत्कृष्टता की कसौटी उसकी व्यापकता है । भारत की अखण्डता और एकता को बनाए रखने के लिए देश, जाति, संप्रदाय भेद-भाव के बिना सब को हृदय से हिन्दी का स्वागत करना चाहिए ।

अन्य विषयक निबंध

महादेवी ने विभिन्न विषयों पर कुछ निबंध लिखे हैं । "कसौटी पर", "दोष किसका", "हमारे वैज्ञानिक युग की समस्या", "हिन्दी - पत्र जगत एक दृष्टिकोण", "स्वर्ग का एक कोना", "सुई दो रानी डोरा दो रानी" आदि ।

कसौटी पर

"कसौटी पर" निबंध में लेखिका ने बाह्य परिस्थितियों को मानव की आन्तरिक भावनाओं और विचारों की कसौटी माना है । अतः उनके अनुसार किसी व्यक्ति के जीवन सिद्धांतों और आदर्शों का मूल्य व्यावहारिक दृष्टि से नगण्य है तो उन्हें अपनाना व्यर्थ है । आगे वे कहतीं हैं कि आज हमारा आचरण अपने स्वीकृत सिद्धांतों और आदर्शों के अनुकूल नहीं होता । एक ज़माना ऐसा था जब हम अपने सिद्धांतों, आदर्शों और स्वप्नों के अनुसार व्यावहारिक जीवन बिताते थे । लेकिन शताब्दियों की दासता ने हमारी नैतिकता को नष्ट कर दी । "आज जब हम पृथ्वी के एक छोर पर रहकर भी दूसरे छोर से इस प्रकार बँधे हैं कि एक ओर से उठा स्वर दूसरी ओर का राग भी बन सकता है और चीत्कार भी, तब न जीवन का मूल्यांकन सहज है और न कसौटी का एकरूप रह गया है ।"[1] इस व्यापक संपर्क से हमारे जीवन मूल्यों में परिवर्तन हुआ । बदली परिस्थिति में हमारा आत्मविश्वास नष्ट हो गया और उसके स्थान पर हम पर असंख्य भूलों का भार पड गया । हमारा नैतिक

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 32

पतन हुआ । लोग दम्भी, स्वार्थी और अविवेकी हो गये । आज स्वार्थपरता, मिथ्या और कपट जीवन के सभी क्षेत्रों में व्याप्त है । जीवन की विकृति विषैली गैस के समान शताब्दियों के बाद भी हमें शिथिल और दुर्बल बना देती है । क्योंकि उससे हम इतने ग्रस्त हो गये कि पूर्ण मोचन असंभव है । हमारी गति और दृष्टि भ्रमित हो गयीं और हम अपने भविष्य के लिए कोई रास्ता प्रशस्त नहीं कर सके । आज भी अपने प्राप्त लक्ष्य तक पहुँचने में हम असमर्थ हो जाते हैं । महादेवी कहती हैं कि आज ईसा, बुद्ध आदि महात्माओं के उपासक भी उनके सिद्धांतों का विरुद्ध आचरण करते हैं यद्यपि वे आदर्श भ्रमात्मक नहीं है । "क्योंकि वे उन महात्माओं के जीवन में स्पन्दित होकर अपने युग की कठिन से कठिन अग्नि-परीक्षा पार कर आया है ।" लेकिन वे इस विरुद्ध आचरण के लिए अपने को दोषी नहीं मानते, परिस्थिति पर दोषारोपण करते हैं । हमें इस भ्रमात्मकता से मुक्ति प्राप्त करनी है ; जीवन की विषमता को दूर करके अन्धविश्वास और रूढ़ियों की कठोर परिस्थितियों का निर्भर्जन करके अपने हृदय का परिष्कार करना चाहिए । जीवन की व्यापकता के साथ विकसित सभी मिथ्याचारों को नष्ट करना है । हमारे पास अतीत का संचित गौरव है जो नवनिर्माण की सुदृढ़ नींव बन सकती है । "विकास की पहली आवश्यकता है कि हमारे बौद्धिक ऐश्वर्य, हृदय की प्रेरणा और क्रिया में ऐसा सामजंस्य-पूर्ण तारतम्य हो, जो हमारे जीवन के राग को विरोधी स्वरों से बेसुरा न कर सकें ।"[1]

दोष किसका

"दोष किसका" लेख में महादेवी अपने साहित्यिक जीवन के कुछ कटु अनुभवों द्वारा संपादक के उत्तरदायित्व और उसकी शिथिलताओं पर

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 34

प्रकाश डालती हैं । निर्भीकतापूर्वक अपने दृष्टिकोण को प्रकट करने पर भी संपादकों के प्रति महादेवी के मन में सहानुभूति है । संपादन में होनेवाली सभी त्रुटियों के लिए वे केवल संपादक को दोषी नहीं मानतीं । संपादक को साहित्यिक असाहित्यिक अनेक रचनायें पढ़नी है । यह ध्यान रखना है कि बीच में कोई साहित्यिक कृति कूड़े के टोकरे में न चली जाय । महादेवी की राय में संपादक को सामान्यत: कई विषयों के व्यावहारिक रूप का ज्ञान होना अनिवार्य है । हिन्दी पत्रों की संख्या के अनुसार उनके संपादकों की संख्या कम नहीं है । व्यक्तिगत दुर्बलतायें और व्यावसायिक परिस्थितियाँ संपादकीय जीवन को विषाक्त बना देने के कारण लेखकों और संपादकों में विश्वास तथा सद्भावना की कमी संभव है । महादेवी चाहती हैं "यदि संपादकों में अपने गुरु भार को वहन करने की क्षमता उत्पन्न हो सके, उनमें तथा लेखकों में सहानुभूति तथा विश्वासपूर्ण अटूट संबंध स्थापित हो सके और उसकी शक्ति संगठित हो सके, तो हमारी अधिकांश आपत्तियाँ दूर हो जावे ।

हमारे वैज्ञानिक युग की समस्या

आधुनिक युग की समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए महादेवी कहती हैं कि वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण आज व्यक्ति शारीरिक रूप से जितना निकट आता जा रहा है उतना ही मानसिक रूप से दूर भी होता जा रहा है । इस स्थिति को मिटाने के लिए महादेवी दोनों पक्षों में सामंजस्य को आवश्यक मानती हैं ।

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 79

आज विज्ञान की आश्चर्य जनक प्रगति हुई है । लेकिन विज्ञान की उन्नति के साथ-साथ अनेक जटिल समस्यायें भी पैदा हुई हैं । ये हमारी मानसिक समस्याओं को जटिलतर बनाती हैं । आज का मानव विज्ञान का अनुयायी है । साथ ही बुद्धिवादी भी । हमारे देश में हृदय का स्थान बुद्धि से ऊँचा रहा । यद्यपि विज्ञान हमारी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है तथापि हमारी मानसिक समस्याओं को जटिल भी बना देता है । चिन्तक देश के कोने कोने के जीवन को एक दूसरे के निकट लाता है । हमारी संस्कृति की विशेषता भिन्नता में एकता है । इस एकता को बनाये रखने के लिए बुद्धि से बुद्धि का हृदय से हृदय का तादात्म्य अनिवार्य हो जाता है । क्योंकि महादेवी कहती हैं कि बीते कुछ वर्षों से हमारे जीवन से संस्कार का बन्धन विच्छिन्न होता जा रहा है और यदि यही क्रम रहा तो निकट भविष्य में हमारे लिए संस्कृति पर अपना अधिकार नष्ट हो जायेगा ।

आज जीवन में भारी परिवर्तन हुआ है । वैसे ही मनुष्य-मनुष्य के बीच अजनबीपन बढ़ रहा है । हृदय-हृदय का विरोध बढ़ता रहता है । अब विज्ञान ने वर्षों को घंटों में बदल दिया है । अतः आज दूरी को निकटता बनाने के मुहूर्त में हमें निकट की दूरी से सावधान रहना चाहिए । पहले हमें अपने देश के हर कोने का परिचय प्राप्त करना है और उसके बाद विश्वनगर का परिचय ।

हिन्दी पत्र जगत् का दृष्टिकोण

अन्य कलाओं के समान पत्रकारिता का विकास भी मनुष्य की आत्मविस्तार की प्रवृत्ति का परिणाम है । पत्रकार्य की सीमाओं का अतिक्रमण करके इसका निरन्तर बहुरूपी विकास हो रहा है । "मनोविज्ञान उक्त कला का ऐसा अमोघ शास्त्र है, जो व्यष्टि और समष्टि को एक साथ ही स्पर्श करके एक व्यापक धरातल पर दोनों के मानसिक परिवर्तन का कारण हो जाता है ।"[1] इस मानसिक गतिशीलता को गहराई, विस्तार और व्यापकता देने का कार्य समाचार पत्र करता है । पत्र जगत का कार्य आज अनेक साधनों जैसे दूरभाष, आकाशवाणी, दूर मुद्रक, दूर चित्रक, रेडियो विज्ञापन आदि द्वारा संपन्न है ।

प्रादेशिक विशेषता को सुरक्षित रखते हुए संपूर्ण देश की विशेषता को बनाये रखना पत्रों का प्रमुख और प्रधान कर्तव्य है । हिन्दी अपने पत्रों द्वारा इस कर्तव्य को सामर्थ्य और दूरदर्शिता से संपन्न कर रही है । हिन्दी के पत्रों के कई भेद हैं । दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, वार्षिक आदि । सरकारी असरकारी वर्गीकरण के अन्तर्गत अनेक उपवर्ग होते हैं । नीति, उद्योग, व्यापार, शिक्षा आदि को लेकर भी अनेक भेद हो सकते हैं । संस्थाओं द्वारा प्रकाशित मुख पत्र, शोध-पत्र आदि की कई सीमायें होने के कारण उनकी उपयोगिता की कसौटी सीमित है । विदेशी दूतवासियों से भी अनेक हिन्दी पत्र प्रकाशित होते हैं, जिनमें देश-विशेष संबंधी ज्ञातव्य के साथ उसकी प्रचारात्मक नीति का भी योग है । आधुनिक प्रचार-युग में प्रत्येक उद्योग का महत्त्वपूर्ण पक्ष विज्ञापन है । साधनहीन, उत्साही सामान्य वर्गीय शिक्षित जन द्वारा

---

1. महादेवी साहित्य - सं. ओंकार शरद - पृ. 559

पत्र साहित्य प्रकाशन होता है । नवीन युग-बोध से जुडे होने पर भी यह भारतीय एकता और संस्कृति की वाहिका है ।

स्वर्ग का एक कोना और सुई दो रानी डोरा दो रानी

इन दोनों निबंधों में महादेवी अपनी कश्मीर और बदरीनाथ की यात्राओं की स्मृतियों का मनोहारी वर्णन करती हैं । "स्वर्ग का एक कोना" में कश्मीर की प्राकृतिक सुन्दरता के दृश्यों के साथ वहाँ के दर्शनीय स्थलों का भी सुन्दर वर्णन मिलता है । वे कश्मीर की भव्य प्राकृतिक सुन्दरता का वर्णन यों करती हैं "चारों ओर से नीले आकाश को खींचकर पृथ्वी से मिलाता हुआ क्षितिज रूपहले पर्वतों से घिरा रहने के कारण बादलों के घेरे जैसा जान पडता था । वे पर्वत अविरल और निरन्तर होने पर भी इतनी दूर थे कि धूप में जगमगाती असंख्य चाँदी सी रेखाओं के समूह के अतिरिक्त उनमें और कोई पर्वत का लक्षण दिखाई न देता था । जान पडता था कि किसी चित्रकार ने अपने आलस्य के क्षणों में रूपहले रंग में तूलिका डुबाकर नीले धरातल पर इधर उधर फेर दी है ।"[1]

कश्मीर फूलों का देश हैं । वहाँ के असंख्य फूलों में दो जंगली फूल मज़ारपोश और लाल पोश महादेवी को बहुत प्रिय लगे । वहाँ के निवासियों के जीवन पर प्रकाश डालते हुए वे लिखती हैं कि कश्मीर के बालक और स्त्रियाँ सरल जान पडीं । वे हँस-मुख रहते थे । उनका घर दियासलाई के डिब्बे के समान छोटा था । छोटी छोटी बालिकाओं की मन्दस्मित में याचना,

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 40

प्रौढ़ाओं की फीकी हँसी में विवशता और वृद्धाओं की सरल दृष्टि में वात्सल्य झाँकता रहता था । इसी से वहाँ के लोगों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति का परिचय मिलता था ।

कश्मीर के सौंदर्य कोष में शालमार और निशात बाग बहुत प्रसिद्ध है । इनके निर्माण से मुसलमान शासकों ने कश्मीर को एक स्वर्ग ही बना दिया । इस निबंध में स्वर्ग के उस कोने की पर्वत-मालाओं, नदियों, बगीचों और वहाँ की प्राकृतिक सुषमाओं को विभिन्न रेखाओं में और खण्डचित्रों में महादेवी प्रस्तुत करती हैं । इसप्रकार महादेवी कश्मीर की नैसर्गिक सुषमा को साकार करने का सफल प्रयास करती हैं ।

सुई दो रानी, डोरी दो रानी

इसमें महादेवी बदरीनाथ की यात्रा का यथार्थ वर्णन करती हैं । बदरीनाथ पहुँचते ही मार्ग में "सुई दो रानी", "डोरा दो रानी" आवाज़ ने महादेवी के ध्यान को आकृष्ट किया । मलिन भूरे बालवाले बालक, लाल मूँगों की मालाओं से अपने को सजाये हुए, चकित दृष्टि वाली युवतियाँ तथा वात्सल्य से भरी हुई वृद्धाएँ दिखाई पड़ीं । कड़ी सर्दी के कारण स्त्रियाँ और पुरुष कम्बल पहनते थे । बदरीनाथ पुरी का वर्णन करते हुए महादेवी लिखती हैं "श्वेत कमल की पंखरियों के समान लगनेवाले पर्वतों के बीच में निरन्तर कल-कल नादिनी अलक नन्दा के तीर पर बसी हुई वह पुरी, हिमालय के हृदय में छिपी हुई इच्छा के समान जान पड़ी ।"[1]

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 82

यह यात्रा कश्मीर की यात्रा से भिन्न प्रकार की भी है । पुरी देखने पर उन्हें निराशा हुई । क्योंकि वहाँ की संकीर्ण गलियाँ और घर दुर्गन्धपूर्ण और गन्दे थे । कई प्रकार के लोग विविध भागों से यहाँ आया जाया करते थे । यहाँ की देखने योग्य वस्तुओं में मन्दिर और अलकनन्दा के बीच में एक बहुत उष्ण जल का और एक ठण्डे जल का स्रोत है । वहीं एक कुंड बना दिया है जिसमें दोनों स्रोतों का जल मिलाकर यात्रियों को स्नान कराया जाता है । वहाँ एक मन्दिर था जो भीतर द्वारों पर कटघरे से लगाकर मानों भगवान् को भी बन्धन में डाल दिया है । "द्वारपाल उन्हीं को सरलता से प्रवेश करने देते हैं, जो वेशभूषा से संभ्रान्त व्यक्ति जान पड़ते हैं । मलिन वेश वाले दरिद्र उन आने जानेवालों को देखते रहते हैं ।"[1]

चाँदी का पहाड़ देखने में संगमरमर का भ्रम करा देता था । बदरीनाथ ऐतिहासिक तीर्थस्थान हैं ; लेकिन गली और गाँव गंदा है, मन्दिर टूटा जा रहा है । शायद किसी दिन यह ऐतिहासिक नगरी पुरातत्व वेत्ताओं की खोज का विषय रह जायेगा ।

महादेवी इन निबंधों से एक ओर स्वर्ग जैसे कश्मीर और दूसरी ओर पुरी जैसे तीर्थस्थान की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास करती हैं । दोनों में यह अन्तर हैं कि बदरीनाथ की यात्रा में कश्मीर के प्राकृतिक सौंदर्य के स्थान पर उनकी अन्तर्दृष्टि वहाँ के लोगों की दयनीय

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 85

स्थिति पर पडी स्पष्ट होती है । वे उस पवित्र स्थान पर पायी जानेवाली गन्दगी, मन्दिर के कुप्रबंध पुजारियों का अनुचित व्यवहार, रूढिवादिता आदि की ओर भी इसमें संकेत करती हैं ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त निबंधों के अध्ययन से महादेवी के निबंधों में गद्य की सी विचारात्मकता एवं पद्य की सी भावात्मकता का सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है । ऐसी चित्रकत्री की तूलिका की विशिष्टता, दार्शनिक की अन्तर्दृष्टि एवं कवि वाणी की काव्यात्मकता अन्यत्र दुर्लभ है । अपने इन निबंधों में विभिन्न विषयों पर आपने निर्भीकता से अत्यन्त तर्कपूर्ण विचार व्यक्त किये हैं और विविध तथ्यों का निरूपण करते हुए संश्लेषणात्मक एवं विश्लेषणात्मक चिन्तन प्रस्तुत किया है ।

चौथा अध्याय

महादेवी के आलोचनात्मक निबंध

महादेवी का रचनात्मक व्यक्तित्व उनकी रचना धर्मिता से जुड़कर उद्दीप्त हो उठा है । छायावाद युग ने नयी काव्य सृष्टि के साथ नये काव्य चिन्तन की, नये काव्य शास्त्र की नये काव्यालोचन की भी नींव रखी ।[1] समालोचना की इस प्राणवन्त प्रणाली में, एक नये काव्य सिद्धांत की स्थापना हुई । तत्कालीन परिवेश से प्रभावित होकर अनेकानेक प्रतिकूलताओं के बीच कवि कर्म के साथ समीक्षात्मक कर्म का दायित्व भी वहन करना पड़ा । सर्जनात्मकता संबंधी उनकी अपनी कुछ अवधारणायें हैं । सर्जनात्मकता के बहु आयामी पक्षों के प्रत्येक विषय पर महादेवी की जो मौलिक मान्यतायें हैं ये उन्होंने यामा, दीपशिखा, सांध्यगीत, संधिनी, आधुनिक कवि की विस्तृत भूमिकाओं के अतिरिक्त साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध, और क्षणदा आदि में व्यक्त की है । कला और काव्य के स्वरूप पर विचार करते हुए महादेवी अपने विचारात्मक निबंधों में काव्य का स्वरूप, उद्देश्य, प्रयोजन, तत्व, भेद, वर्ण्य-विषय, भाषा, छन्द और लय आदि विषयों की चर्चा करती हैं ।

कला काव्यकला, मूर्तिकला, चित्रकला

सृजन के विभिन्न और विविध तत्वों से परिचित होने के नाते उनकी मान्यतायें बोधगम्य और सहज हैं । कला के संबंध में महादेवी के विचार मौलिक एवं प्रौढ़ हैं । कला का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है । कला के सत्यं, शिवं, सुन्दरं पर प्रकाश डालते हुए वे कहती हैं कि मनुष्य में जो सत्यम् का रूप छिपा है वही एक सुन्दर साधन खोजकर संसार में शिवमय

---

1. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा विज्ञप्ति - गंगाप्रसाद पाण्डेय - पृ. 9

कलाकृति के रूप में परिणत हो जाता है । "वास्तव में मनुष्य में सत्य का ऐसा एक क्रियात्मक और रहस्यमय अंश छिपा हुआ है, जो अपनी अभिव्यक्ति के लिए सुन्दरतम साधन खोजता रहता है और इस सत्य का सौन्दर्य में रागात्मक प्रकाशन ही कला के सत्यं शिवं सुन्दरं की परिभाषा हो सकता है ।"[1] कलाकार का लक्ष्य हमारे जीवन की सुन्दर-असुन्दर, दुर्बल-सबल, पूर्ण-अपूर्ण वस्तुओं में सामंजस्य लाना है ।

कला को महादेवी कला के लिए नहीं मानती, वे कला को जीवन की अभिव्यक्ति मानती हैं । "कला यदि जीवन की, सौंदर्य में, सत्य में अभिव्यक्त है तो भी वह जीवन से सम्बद्ध है..... वह हमारे नीरस जीवन को सरस बनाने में, निराश्रय हृदय को अवलम्ब देने में और हमारे साधारण जीवन के लिए आदर्श स्थापित करने में सदा से समर्थ रही है ।"[2]

कला पर विचार करते हुए महादेवी कहती हैं कि ललित कला और उपयोगी कला में बहुत अन्तर नहीं हैं । ये दोनों कलाएँ वस्तुतः जीवन से बाहर नहीं । हमारे जीवन में उपयोगिता के स्थूल और सूक्ष्म का समान महत्व है वैसे ही कला के क्षेत्र में भी बाह्य और अन्तर्जगत के सौंदर्य का महत्व है । उपयोगिता का सूक्ष्म रूप ही वस्तुतः सौंदर्य है ।

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 40-41
2. वही - पृ. 50-51

काव्य कला, चित्रकला, मूर्तिकला इस प्रकार कला के विविध रूप हैं । मनुष्य अपने स्वभाव के अनुकूल इन विभिन्न कलाओं का आस्वादन करता है । इन में दृश्यकलाओं की ओर मनुष्य अधिक आकृष्ट है । मूर्तिकला, चित्रकला जैसी दृश्यकलायें हमारे नेत्र-स्पर्श और मन की तृप्ति करती है । इनमें मूर्तिकला अधिक सुगम, रंगों से सजीव और अधिक बोधगम्य होने से आनन्ददायिनी है । चित्रकला अतिप्राचीन कला का उत्कृष्टतम निदर्शन है । अन्य कलाओं के समान चित्रकला का व्यापक प्रचार प्रसार हुआ है । आज साप्ताहिक, मासिक और पत्रिकाओं में चित्रकला ने विशेष स्थान पाया है । लेकिन उसके वास्तविक गुणों को पहचानकर उसकी श्रेष्ठता को माननेवाले बहुत कम हैं । "जनता की विषम रुचि, चित्रकारों की दुरवस्था, चित्रों का सस्तापन, छापने की सुविधा, सब ने मिलकर इस कला के आदर्श की प्रतिमा जैसे तिल-तिल करके तोडने आरंभ किया है ।"[1]

चित्रकला के महत्त्व को समझाकर वे कहती हैं कि चित्रकला का आदर्श उन्नत हो सकता है । सुन्दर के साथ शिव का योग हो सकता है लेकिन युग की माँग के अनुसार पत्रिकाओं के व्यवसाय के जगत् में स्त्रियों के पवित्र स्त्रीत्व प्रदर्शन, बाज़ार को पोस्टर आदि द्वारा विज्ञापन आदि चित्रों से प्रस्तुत कला की हानि होती है ।

कला की व्याख्या के दौरान महादेवी अभिनय कला की चर्चा भी करती हैं । कला को विद्वानों ने अनुकरण माना है और अभिनय कला

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 53

इसका अपवाद नहीं । प्राचीन काल में आदर्श पात्रों का ही अनुकरण नाटकों में होता था । लोक जीवन पर व्यापक और स्थायी प्रभाव डालने के साधनों में अन्यतम नाटक है । रंगमंच नाटक की कसौटी है । आज तक इसके प्रायोगिक रूप का उचित विकास हिन्दी में नहीं हो सका है । वर्तमान काल में अभिनय कला का परिचय हमें पारसी रंगमंचों से मिलता है । परन्तु इन पारसी रंगमंचों द्वारा हम अपनी अभिनय कला की उन्नति न कर सके । मूक चलचित्रों तथा सवाक् चलचित्रों के साथ अभिनय कला के एक नवीन युग का प्रारंभ होता है। "अभिनय हमारी केवल प्राचीन ही नहीं, प्रिय कला भी है । यदि हम जीवन को अधिक परिष्कृत और सुन्दर बनाने में इसका उपयोग करें, तो इससे व्यक्ति और समाज दोनों ही अधिक पूर्ण हो सकेंगे ।"[1] महादेवी का विश्वास है कि अभिनय कला अपनी पूर्ण तथा चरमावस्था पर पहुँचने के मार्ग में ही है ।

काव्य का स्वरूप

महादेवी के अनुसार काव्य सर्वोत्तम कला है । काव्य की परिभाषा वे यों देती हैं । "सत्य काव्य का साध्य और सौन्दर्य साधन है । एक अपनी एकता में असीम रहता है और दूसरा अपनी अनेकता में अनन्त ।"[2] सत्य अत्यन्त व्यापक है । हम उसे व्यष्टि रूप में अपनाते हैं । साहित्य युग सापेक्ष्य है । महादेवी व्यक्तिचेतना के विस्तार को काव्य का स्वरूप मानती हैं । कवि कर्म के लिए वे हृदय तत्व और बुद्धि तत्व दोनों का विकास

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 97
2. दीपशिखा - महादेवी वर्मा - पृ. 5

आवश्यक मानती हैं ।[1] प्रत्येक सच्चे कलाकार की अनुभूति प्रत्यक्ष सत्य का ही नहीं अप्रत्यक्ष सत्य का भी स्पर्श करती है । "बहिर्जगत से अन्तर्जगत तक फैले और ज्ञान तथा भाव क्षेत्र में समान रूप से व्याप्त सत्य की सहज अभिव्यक्ति के लिए माध्यम खोजते-खोजते ही मनुष्य ने काव्य और कलाओं का आविष्कार कर लिया है ।"[2] अतः उनकी राय में बहिर्जगत और अन्तर्जगत में व्याप्त इस सत्य की अभिव्यक्ति का उत्तम माध्यम है काव्य । सत्य की प्राप्ति के लिए काव्य सौंदर्य का सहारा लेता है । सौंदर्य जितना अधिक जीवन की पूर्णतम अभिव्यक्ति के निकट रहकर होता है उतना ही वह महान कहा जा सकता है । उसमें हमारी अन्तर वृत्तियों का महत्व है । साहित्य की मूल प्रेरणा आनन्द नहीं है । साहित्य सृजन केवल रुचि, इच्छा या विवशता का परिष्कार नहीं है । साहित्य सृजन के लिए महादेवी विशेष प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास को अनिवार्य मानती हैं । विशेष प्रतिभा संपन्न साहित्यकार का विशेष महत्व सर्वस्वीकृत है ।[3] उनकी राय में साहित्य सृजन केवल श्रम नहीं है, न वह आजीविका के लिए स्वीकृत कोई पेशा है। साहित्य सृजन अपने सृष्टा केलिए जीवन है । साहित्य विशेष व्यक्तित्व का परिणाम है । इसी अर्थ में उसे व्यक्तिगत कहा जा सकता है । लेकिन साहित्य-सृष्टि का लक्ष्य स्वान्तः सुखाय नहीं है । उसका परम उद्देश्य लोकहित है ।[4] मनुष्य आकार में भिन्न होते हुए भी संवेदना के स्तर पर समान हो सकते हैं । इस मूलभूत एकता के कारण साहित्यिक उपलब्धियाँ काल से सीमित नहीं है । उसमें जीवन के परिष्कार

---

1. दीपशिखा - महादेवी वर्मा - पृ. 7
2. वही - पृ. 9
3. क्षणदा - महादेवी वर्मा -पृ. 114
4. वही - पृ. 116

और परिवर्तन की मुद्रायें अंकित होती हैं इसलिए वह व्यापक सामाजिक कर्म है । "साहित्य का उद्देश्य समाज के अनुशासन के बाहर स्वच्छन्द मानव-स्वभाव में उसकी मुक्ति को अक्षुण्ण रखते हुए, समाज के लिए अनुकूलता, उत्पन्न करना है ।"[1] वस्तुत: साहित्य सृजन समग्र जीवन, समस्त शक्तियों का संश्लिष्ट दान है ।

महादेवी सृजन प्रक्रिया में कल्पना का प्रमुख स्थान मानती है । उसमें सौंदर्यबोध, संस्कृति, संस्कार आदि का भी महत्वपूर्ण योगदान स्वाभाविक है । विद्युत् के भिन्न उपकरणों के संयोजन से जैसे आलोक उत्पन्न हो जाता है, उसी प्रकार संवेग, संवेदन, स्मृति, कल्पना आदि के सामंजस्य पूर्ण संयोजन से सौंदर्य की सृष्टि होती है ।[2] वस्तुत: सौन्दर्य हमारे अन्त:करण की ऐसी तृप्तिमूलक स्वीकृति है जो विशेष व्यवस्था में प्राप्त होती है । इसी से सौंदर्य-बोध देश काल के भेदों के नीचे एक सामान्य और सब देश-कालों में स्वीकृत स्थिति भी रखता है । कलात्मक रचना मनुष्य की क्षतिपूर्ति की इच्छा का परिणाम है ।[3]

महादेवी लोकदर्शन को काव्य का प्रमुख साधन मानती हैं । कलाकार ऐसा जीवन संगी है जो अपनी आत्म कहानी में, हृदय-हृदय की कथा कहता है और स्वयं चलकर पग-पग के लिए पथ प्रशस्त करता है ।[4] कवि का दर्शन

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 112
2. दीपशिखा - महादेवी वर्मा - पृ. 10
3. वही - पृ. 12
4. वही - पृ. 44

जीवन के प्रति उसकी आस्था का दूसरा नाम है । कवि का वेदान्त - ज्ञान, जब अनुभूतियों के रूप में कल्पना से रंग और भाव जगत् में सौन्दर्य पाकर साकार होता है तब उसके सत्य में जीवन का स्पन्दन रहेगा । कला जीवन की विविधता समेटती हुई आगे बढ़ती है । अतः कलाकार के जीवन दर्शन में हम उसका जीवन व्यापी दृष्टिकोण मात्र पा सकते हैं ।

काव्य का प्रयोजन

काव्य का प्रथम और प्रमुख प्रयोजन समाज कल्याण है । "साहित्य का उद्देश्य समाज के अनुशासन के बाहर स्वच्छन्द मानव स्वभाव में, उसकी मुक्ति को अक्षुण्ण रखते हुए समाज के लिए अनुकूलता उत्पन्न करना है ।"[1] साहित्य द्वारा हमारा मानसिक परिष्कार होता है । अर्थात् हमारी मानसिक वृत्तियों की सामंजस्य पूर्ण एकता साहित्य के द्वारा संभव है । साहित्य मनुष्य की बुद्धि और भावना को मिलानेवाला पुण्य क्षेत्र है । वे ऐसे कवियों पर तीखा व्यंग्य करती हैं जो केवल अर्थ प्राप्ति के लिए साहित्य रचना करता है । आर्थिक प्रयोजन के प्रति उनमें वितृष्णा है । वे काव्य का मुख्य प्रयोजन जीवन की सामंजस्यपूर्ण रागात्मक अभिव्यक्ति मानती हैं ।[2]

काव्य के तत्त्व

महादेवी अनुभूति को ही काव्य का मूलतत्त्व मानती हैं । उसमें

---

1. धर्मदा - महादेवी वर्मा - पृ. 123
2. वही

बुद्धितत्व या चिन्तन की प्रमुखता भी है । कविता मनुष्य के हृदय की भाँति पुरातन है । कविता का भावपक्ष ही उसकी संवेदनशीलता का कारण है । कवि या प्रत्येक कलाकार को अपने जीवन में चेतना एवं अनुभूति का सामंजस्य करना पडता है, बुद्धिवाद की उपेक्षा करके भावना की ओर मुडना पडता है ।[1]

हमें उपयोग के लिए ज्ञान की आवश्यकता है परन्तु उपयोग के उपभोग के लिए हमें अनुभव आवश्यक है । संसार में जो सभी क्षेत्रों में सामंजस्य करने को तैयार है उसे जीवन सौन्दर्यमय दिखाई देता है । जगत की सुन्दरता के आधार पर ही काव्य की उन्नति संभव है । काव्य के आदर्श पर भी ज़ोर दिया जाता है । काव्य में यथार्थ और आदर्श की स्थिति पर महादेवी की मान्यता है कि आदर्श कल्पना है और यथार्थ प्रत्यक्ष जीवन ही है । केवल आदर्श को सुन्दर समझना हमारा भ्रम है । यथार्थ के बिना आदर्श की कल्पना नहीं कर सकते और आदर्श के बिना यथार्थ का गुण-दोष स्पष्ट नहीं होते । जीवन के प्रति आस्था रखने के कारण, कवि का विश्वास आदर्श में परिणत हो जाता है । "प्रत्येक सच्चे कलाकार की अनुभूति प्रत्यक्ष सत्य ही नहीं, अप्रत्यक्ष सत्य का भी स्पर्श करती है, उसका स्वप्न वर्तमान ही नहीं अनागत भविष्य को भी रूप रेखा में बाँधता है और उसकी भावना यथार्थ ही नहीं संभाव्य यथार्थ को भी मूर्तिमत्ता देती है ।"[2] इस प्रकार महादेवी काव्य के प्रमुख तत्व के रूप में जीवनानुभूति को स्वीकार करती है ।[3] वे जीवन में यथार्थ और आदर्श के समन्वय पर बल देती हैं ।

---

1. संधिनी - महादेवी वर्मा - पृ. 12
2. दीपशिखा - महादेवी वर्मा - पृ. 35
3. संधिनी - महादेवी वर्मा - पृ. 7

काव्य के भेद

महादेवी काव्य के भेदों पर विचार करते हुए गीतिकाव्य पर विशेष बल देती हैं । गीत के प्रारंभिक रूप की खोज वे वेदगीतों में करती हैं । उसका प्रभाव सब युगों के गीतों को विविधता देता रहा। "हिन्दी-गीतिकाव्य पर भारतीय गीति परंपरा की मूल प्रवृत्तियों का आ जाना स्वाभाविक है । तत्व चिन्तन, रहस्यानुभूति, प्रकृति, सौंदर्यदर्शन, स्वानुभूत सुख दुःखों की चित्रमय अभिव्यक्ति आदि से इन गीतों में विविधता और व्यापकता है ।"[1] हिन्दी के भक्ति युग में गीतों की प्रधानता थी । हिन्दी काव्य का वर्तमान, नवीन युग गीति प्रधान है । क्योंकि आज के मानव का व्यस्त और व्यक्ति प्रधान जीवन गीतिकाव्य की रचना के लिए ही अनुकूल है । स्वानुभूति को प्रधानता देनेवाले सुख-दुख भरे गीतों की रचना छायावादी युग में प्रभूत मात्रा में हुई ।

महादेवी का विचार है कि गीत का प्रारंभ मानव के प्रारंभ के साथ ही हो गया है । क्योंकि मनुष्य की रागात्मिका वृत्ति तथा आत्मानुभूति द्वारा ही संगीत की उत्पत्ति होती है और ये दोनों गुण मनुष्य में प्रारंभ से हैं । उनके अनुसार "काव्य, बुद्धि के आलोक में संवेदना का संप्रेषण है । मानव के जितने सृजन है, कविता उनमें सब से अधिक रहस्यमय सृजन है, जिस में उसके अन्तःकरण का संगठन करनेवाले सभी अवयव मन, चित्त, बुद्धि और अहंकार एक साथ सामजंस्यपूर्ण स्थिति में कार्य करते हैं ।"[2] महादेवी गीतों का संबंध हृदय की रागात्मिका वृत्ति

---

1. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 117
2. संधिनी - महादेवी वर्मा - पृ. 7

से मानती है । गीत की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए वे लिखती हैं, गेयता गीतिकाव्य का आत्म तत्व है । "गीत का चिरन्तन विषय रागात्मिका वृत्ति से संबंध रखनेवाली सुख-दुःखात्मक अनुभूति ही रहेगी । पर अनुभूति मात्र गीत नहीं, क्योंकि गेयता तो अभिव्यक्ति सापेक्ष है । साधारणतः गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख-दुखात्मक अनुभूति का वह शब्द रूप है, जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके ।"[1] गीत में करूणा का स्वर है और संवेदनीयता एवं मर्मस्पर्शिता भी होती है । गीति काव्य की भावात्मक कलात्मक विशेषताओं का विश्लेषण करके विभिन्न प्रकार के गीतों - कथागीत, लोकगीत, रहस्यगीत - की चर्चा भी उन्होंने की है । अलौकिक आत्मसमर्पण लौकिक स्नेह निवेदन, प्रकृति का सौंदर्य दर्शन, शाश्वत सुख दुःख आदि हार्दिक अनुभूतियों की अभिव्यंजना गीतों में होती है ।[2] गीतों को महादेवी काव्य की ऊँची ऊँची हिमालय श्रेणियों के बीच का एक सजल मेघखण्ड समझती हैं, जो उनसे दबकर टूटता भी नहीं है और बाँधकर रूकता भी नहीं है, प्रत्युत प्रत्येक चोटी का श्रृंगार बनकर आता है ।[3] "दीपशिखा में इनके कुछ चित्रगीत एकत्र किये गये हैं । इन्होंने गीतों की रूपरेखा चित्र के माध्यम से देने का प्रयत्न किया है । महादेवी काव्य भेदों का अधिक विवेचन नहीं करतीं, केवल गीति काव्य पर विस्तृत चर्चा करती हैं । स्वानुभूत चिन्तन के आधार पर महादेवी गीत की परिभाषा इस प्रकार देती हैं "सुख दुःख की भावावेशमयी अवस्था विशेष का गिने चुने शब्दों में स्वर साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है ।"[4]

---

1. दीपशिखा - महादेवी वर्मा - पृ. 59
2. दीपशिखा - चिन्तन के कुछ क्षण - महादेवी वर्मा - पृ. 57
3. सांध्यगीत - अपनी बात - महादेवी वर्मा
4. सांध्यगीत - अपनी बात - महादेवी वर्मा - पृ. 4

काव्य का विषय

कवि जीवन में कलात्मक रूप की भावना करता आया है । मानवता को संपूर्ण रूप से समझना और समझाना उसका लक्ष्य है । मानव कल्याण को ही अपना लक्ष्य बनाकर कवि को काव्य रचना करनी है । महादेवी काव्य में जीवन की व्यापकता और विविधता स्वीकार करती हैं । अध्यात्म तत्व का लोक जीवन से संबंध स्थापित करते हुए काव्य के विषय के संबंध में उनका कहना है "कविता के लिए आध्यात्मिक पृष्ठभूमि उचित है या नहीं, इसका निर्णय व्यक्तिगत चेतना ही कर सकती है । जो कुछ स्थूल, व्यक्त, प्रत्यक्ष और यथार्थ नहीं है यदि केवल यही अध्यात्म से अभिप्रेत है तो हमें वह सौन्दर्य, शील, शक्ति-प्रेम आदि सभी सूक्ष्म भावनाओं में फैली हुई अनेक अव्यक्त संबंधी धारणाओं में अंकुरित, इन्द्रियानुभूति प्रत्यक्ष की अपूर्णता से उत्पन्न उसकी परोक्ष रूप-भावना में छिपी हुई अपनी ऊर्ध्वगामी वृत्तियों से निर्मित विश्वबन्धुता, मानव धर्म आदि के ऊँचे आदर्शों से अनुप्राणित मिलेगा ।

काव्य की भाषा, छन्द और लय

महादेवी काव्य भाषा को व्यावहारिक भाषा से भिन्न मानती हैं । भाषा का संबंध मनुष्य के अन्तःकरण से है । भाषा उसके भाव जगत् का संचालन करने की क्षमता रखती । सच्चा कलाकार बोधगम्य भाषा में अपने भाव विचार को पाठक के सामने अभिव्यक्त करता है । काव्य भाषा के संबंध में वे कहती हैं कि "साहित्य और विशेषतः काव्य, व्यक्ति या समूह के भाव-जगत्

---

1. आधुनिक कवि - भूमिका - महादेवी वर्मा - पृ. 2।

को अनुकूल दिशा में क्रियाशील बनाने का लक्ष्य रखता है, अतः उसे भाषा की सम्पूर्ण शक्तियों और अन्तःकरण की समस्त संभावनाओं का उपयोग करना पड़े तो आश्चर्य नहीं ।"[1] वे कहती हैं, काव्य भाषा की शब्द योजना में भी एक प्रवाह, एक लय आवश्यक है । शब्द ध्वनि के उतार चढ़ाव में ही भाषा की लक्षणा, व्यंजना व्यक्त होती हैं । "हमारा समस्त दृश्य-जगत् परिवर्तन शील ही नहीं, एक निश्चित गतिक्रम में परिवर्तनशील है, जो अपनी निरन्तरता से एक लय युक्त आकर्षण-विकर्षण को छन्दायित करता है । काव्य व्यष्टिगत तथा समष्टिगत जीवन को एक विशेष गति-क्रम की ओर प्रेरित करने का साधन है, अतः उसकी शब्द-योजना में भी एक प्रवाह, एक लय अपेक्षित है ।"[2] कविता के लिए विशेष शब्द-चयन अपेक्षित है । व्यंजित अर्थ-बोध की भाव परिणति अनिवार्य है तो शब्द एक विशेष क्रम में छन्दोचित रहेगी । "वस्तुतः काव्य की भाषा अपनी प्रभविष्णुता का साथ देनेवाले छन्द-बन्ध ही स्वीकार करती है",[3] अतः कविता के विशेष शब्द-चयन और अर्थ बोधता, प्रभविष्णुता के लिए काव्य भाषा को छन्दबन्ध होना अनिवार्य है । लेकिन "उसकी स्वीकृति के मूल में चिन्तन से अधिक अनुभूति और विज्ञान से अधिक संस्कृति की प्रेरणा रहती है ।"[4] छन्द के बिना भी अच्छी कविता लिखी जा सकती है ।

छन्द और लय युक्त काव्य गेय होगा । यद्यपि काव्य के लिए गेयता अनिवार्य नहीं तथापि अनुभूति की तीव्रता भरी कविता संगीतात्मक

---

1. संधिनी - महादेवी वर्मा - पृ. 18
2. वही - पृ. 20
3. वही - पृ. 21
4. वही - पृ. 20

होगी । काव्य और संगीत का भेद उनकी दृष्टि में इस प्रकार है कि काव्य सार्थक शब्दों का समूह है और संगीत लय प्रधान ध्वनि समूह । जैसे "काव्य में गेयता संभव है पर अनिवार्य नहीं, वैसे ही संगीत के स्वरों में अर्थवत्ता संभव है, परन्तु अनिवार्य नहीं । एक के संगठन में बुद्धि विशेष क्रियाशील रही और दूसरे के संयोजन में हृदय ।"[1] गीत में भाव, शब्द, तन्मयता आदि लय से मिले रहते हैं । लोकगीत में भी समग्र जन-जीवन लय से घेर बैठा है ।

महादेवी छायावाद, रहस्यवाद, आदर्श और यथार्थ पर भी अपने स्वतंत्र विचार व्यक्त करती हैं ।

छायावाद

छायावादी कवि आलोचकों में महादेवी का महत्त्वपूर्ण स्थान है । वे छायावादी काव्य दृष्टि को शुद्ध साहित्यिक दृष्टि मानती हैं । महादेवी छायावाद के संबंध में प्रचलित भ्रम का तर्कपूर्वक निराकरण करके छायावाद के गुण दोषों का विवेचन करती हैं । "बुद्धि के सूक्ष्म धरातल पर कवि ने जीवन की अखण्डता का भावन किया, हृदय की भाव भूमि पर उसने प्रकृति में बिखरी सौन्दर्य सत्ता की रहस्यमयी अनुभूति प्राप्त की और दोनों के साथ स्वानुभूत सुख दुःखों को मिलाकर एक ऐसी काव्य सृष्टि उपस्थित कर दी, जो प्रकृति वाद, हृदयवाद, अध्यात्मवाद, रहस्यवाद, छायावाद आदि अनेक नामों का भार सँभाल सकी ।"[2] महादेवी भारत की सांस्कृतिक चेतना के अक्षय स्रोतों से छायावाद का

---

1. संधिनी - महादेवी वर्मा - पृ. 23
2. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 66

भावात्मक संबंध स्वीकार करती हैं । इतना ही नहीं छायावाद को प्रेरणा और शक्ति, युग के वातावरण, परिस्थिति और परंपरा से मिली हैं । वे प्राचीन वेद तथा उपनिषदों से उपलब्ध उपादानों को अपने अध्ययन के आधार रूप में ग्रहण करती हैं ।

छायावादी काव्य की सुन्दर भावभूमि और बहुरंगी शिल्प योजना पर उनकी अपनी और स्पष्ट स्वतंत्र मान्यतायें हैं । स्वानुभूति की अभिव्यक्ति, कल्पनाओं की समृद्धि, प्रकृति पर चेतन व्यक्तित्व का आरोप और सौन्दर्य तत्व छायावाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ है । अपनी कविता की इन विशेषताओं पर अत्यंत सारगर्भित और कलात्मक विवेचन उन्होंने किया है । महादेवी ने "छायावाद को पढ़ा नहीं अनुभव किया है ।"[1] उनकी मान्यता है पूर्ववर्ती काव्य की इतिवृत्तात्मकता की प्रतिक्रिया के रूप में छायावाद का उदय हुआ । वास्तव में "छायावाद के कोई रूढ़िगत अध्यात्म या वर्गगत सिद्धांतों का संयम न देकर हमें केवल समष्टिगत चेतना और सूक्ष्म सौंदर्य सत्ता की ओर जागरूक कर दिया ।"[2] छायावादी काव्य के विकास की प्रेरणा तत्कालीन साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थिति को मानती हुई युगीन वातावरण पर उन्होंने प्रकाश डाला है । छायावादी सांस्कृतिक चेतना पूर्णतः मानवीय है । स्वानुभूति की व्यंजना छायावाद का प्रमुख तत्व है । "इस व्यक्ति प्रधान युग में व्यक्तिगत सुख-दुःख अपनी अभिव्यक्ति के लिए आकुल थे, अतः छायावाद का काव्य स्वानुभूति प्रधान होने के कारण वैयक्तिक उल्लास-विषाद की अभिव्यक्ति का सफल माध्यम बन सका

---

1. कृतिकार - डा. नगेन्द्र - पृ. 170
2. साहित्यकार की आस्था तथा निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 60
3. वही - पृ. 88

उनकी राय में स्वानुभूति अभिव्यक्ति हमारे लिए नवीन नहीं । यह स्वानुभूति की अभिव्यक्ति वेद, गीत, संस्कृत - प्राकृत के काव्य, भक्ति काव्य आदि में बहुत बड़ी संख्या में उपलब्ध है । सरल लोक गीतों की भाव तीव्रता भी स्वानुभूतिमय है । जड-तत्व से चेतन की अभिन्नता, सर्ववाद का यह सूक्ष्मरूप छायावाद में पा सकते हैं जो सूक्ष्म सौन्दर्यानुभूति को जन्म देती है । छायावादी कवि ने प्रकृति और मानव की भावनाओं के सहज संबंध की स्थापना का प्रयास किया है । प्रकृति की विविधता सौंदर्यचेतना से समन्वित है । "प्रकृति के अस्त-व्यस्त सौंदर्य रूप - प्रतिष्ठा, बिखरे रूपों में गुण प्रतिष्ठा फिर इनकी समष्टि में एक व्यापक चेतन की प्रतिष्ठा और अन्त में रहस्यानुभूति का जैसा क्रमबद्ध इतिहास हमारा प्राचीनतम काव्य देता है वैसा अन्यत्र मिलना कठिन होगा ।"[1]

छायावाद के कवियों ने प्रकृति को जीवन की सनातन सहगामिनी के रूप में उसी रूप में अंकित किया है जिसप्रकार संस्कृत काव्यों में मिलता है । छायावाद तत्वतः प्रकृति के बीच में जीवन का उद्गीथ है, अतः कल्पनाएँ बहुरंगी और विविध रूपा है ।"[2] छायावादी प्रकृति में अपनी ही छाया देखता है । वह उसे अपनी तरह दुःख से पीडित और सुख से हर्षित पाता है ।

छायावाद में दुःख के दो रूप व्यक्त हैं । एक जीवन की विषमता की अनुभूति से उत्पन्न करुणा भाव दूसरा जीवन के स्थूल धरातल पर

---

1. दीपशिखा - महादेवी वर्मा - पृ. 33
2. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 85

व्यक्तिगम असफलताओं से उत्पन्न विषाद । करूणा हमारे जीवन और काव्य से प्राचीन काल से गहरा संबंध रखती है । छायावाद तो करूणा की छाया में सौन्दर्य के माध्यम से व्यक्त होनेवाला भावात्मक सर्ववाद ही रहा है ।

महादेवी, प्रसाद, पन्त, निराला आदि की छायावादी कविताओं के उदाहरण देकर यह दिखाने की कोशिश करती हैं कि छायावादी काव्य में सौन्दर्य तत्व अधिक है । स्वानुभूति पर यहाँ अधिक ज़ोर दिया जाता है, नारी का भी प्रकृति सापेक्ष समझकर वर्णन किया गया है ।

काव्य में कल्पना पर विचार करते हुए महादेवी कहती हैं कि इस कल्पना के पीछे जो संस्कार है वह भारतीय ही है । कल्पना का ऐश्वर्य लोक गीतों में पाया जाता है । "काव्य जब प्रकृति का आधार लेकर चलता है तब कल्पना में सूक्ष्म रेखाओं का बाहुल्य और दीप्त रंगों का फैलाव स्वाभाविक ही रहेगा ।"[1]

रहस्यवाद

रहस्यवाद छायावाद के समान नवीन न होने पर भी प्रयोग के अर्थ में विशेष प्राचीन नहीं । रहस्यवाद आत्मा का गुण है काव्य का नहीं ।

---

1. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ.85

रहस्यवाद के संबंध में महादेवी के विचार अन्य आलोचकों से भिन्न है । उनकी राय में कवि किसी अलौकिक सत्ता से अपना शान्त और निश्चल एकीकरण करना चाहता है । उस सत्ता का रूप रहस्यमय है । जब साधक को विश्व के प्रत्येक परमाणु में उसी अलौकिक सत्ता की दिव्य झाँकी दिखाई देने लगती है और उसे एक प्रकार का नशा और बेचैनी रहने लगती है तभी रहस्यवाद का अंकुर उसके हृदय में फूट पडता है । कवि असीम चेतन तथा असीम हृदय के बीच तारतम्य खोजने का प्रयत्न करता है और उसके रहस्यमय रूप के कारण उसे रहस्यवाद के नाम से पुकारा जाता है । रहस्यवाद को महादेवी पूर्णत: भारतीय काव्य धारा से संबंधित मानती हैं और भारतीय रहस्यवाद और पश्चिमी रहस्यवाद के बीच में जो अन्तर है उसे वे स्पष्ट करती हैं ।

रहस्य का अर्थ वहाँ से होता है जहाँ धर्म की इति है । रहस्य का उपासक सामंजस्यमूलक परमतत्व की अनुभूति करता है जो उसके व्यवहार को स्निग्धता देती है । धर्म के नरक, मृत्यु, स्वर्ग आदि का रहस्यवादी की दृष्टि में कोई महत्व नहीं । असीम में ससीम को खोना उसकी सीमा है । ईसाई रहस्यवाद ईसाई धर्म की परिधि में उत्पन्न होकर स्वयं एक संप्रदाय के भीतर संप्रदाय रह गया । धर्म और रहस्य भावना में विरोध न होने पर भी वे अलग अलग हैं । धर्म बाह्य जीवन में सामजंस्य लाने के लिए विधि-निषेधात्मक सिद्धान्तों को विश्वास में प्रतिष्ठित करता है ।

हमारी अन्त:शक्ति रहस्य पूर्ण है और बाह्य जगत् का विकास क्रम भी, अत: जीवन में ऐसे अनेक क्षण आते रहते हैं जिनमें हम इस

रहस्य के प्रति जागरूक हो जाते हैं । इस रहस्य का आभास या अनुभूति मनुष्य के लिए स्वाभाविक रही है । रहस्यवाद की चरम सीमा तक पहुँचने पर मनुष्य को तीन स्थितियों को पार करना है । पहले वह अणु अणु में स्वप्राणों की अनुभूति करता है, फिर विश्व प्राण की और अन्तिम स्थिति में महाप्राण के दर्शन करने लगता है । रहस्यवाद में जड-चेतन और उस विराट् सत्ता तीनों का एकीकरण हो जाता है । "प्रकृति के अस्त-व्यस्त सौंदर्य में रूप प्रतिष्ठा, बिखरे रूपों में गुणप्रतिष्ठा, फिर इनकी समष्टि में एक व्यापक चेतन की प्रतिष्ठा और अन्त में रहस्यानुभूति का जैसा क्रमबद्ध इतिहास हमारा प्राचीनतम काव्य देता है ।"[1]

भारतीय रहस्य भावना का आधार उपनिषद् है । उपनिषद् का अर्थ ही रहस्य है । रहस्यवाद की जो प्रवृत्तियाँ मिलती हैं उन सब के मूल रूप हमें उपनिषदों की विचारधारा से मिल जाते हैं । रहस्य भावना के लिए द्वैत की स्थिति भी आवश्यक है और अद्वैत का आभास भी । क्योंकि एक के अभाव में विरह की अनुभूति असंभव हो जाती है और दूसरे के बिना मिलन की इच्छा आधार खो देती है । भारतीय रहस्य भावना मूलत: बुद्धि और हृदय की सन्धि में स्थित है । बौद्ध और जैन धर्मों पर उपनिषद् का प्रभाव पडा है । पश्चिम में रहस्यवाद ब्रह्म और जीव की एकता पर आश्रित न होकर ब्रह्म और जगत के बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव में है । पश्चिम की रहस्य भावना में प्रकृति का प्रत्येक अंग सजीव और स्वतंत्र होता है, पश्चिम कवियों की रहस्य भावना में परम तत्व से आत्मा का तीव्र प्रेम या एकता का चरम विकास कठिन है ।

---

1. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 99

सूफियों का रहस्यवाद भारतीय चिन्तन के निकट है । भारतीय रहस्य चिन्तन की [illegible] है कि यह जीवन से संबद्ध है और उसके सामर्थक हमेशा क्रान्तिकारी रहे । रूढ़ि ग्रस्त धर्म, अंधविश्वास, कर्मकाण्ड के प्रति वे निर्मम हैं । जीवन के कल्याण के प्रति मौलिक विचार है, यह उपनिषद् काल की विचारधारा से भी प्रमाणित होता है । हिन्दी के रहस्यवादी कबीर, ऐसे क्रान्तिकारी थे । उन्होंने जीवन के निम्नतम स्तर को ऊँचाई, अपनी अशिक्षा को आलोक में और जड़ता को स्पन्दनों से भर कर जीवन में गतिशीलता लाने का प्रयत्न किया । कबीर तथा अन्य रहस्यवादी सन्तों और सगुण-भक्तों में अन्तर है । "सगुण उपासक यदि प्रशान्त स्निग्ध आभा फैलानेवाला नक्षत्र है, तो रहस्यद्रष्टा, अपने पीछे आलोक-पुंज की प्रज्वलित लीक खींचने वाला उल्का-पिण्ड ।"[1] छायावाद के प्रतिनिधि कवियों ने भी इस विचारधारा का विद्युत् स्पर्श अनुभव किया और उन्होंने इस परंपरा को अक्षुण्ण रक्खा ।

यथार्थ और आदर्श

यथार्थ और आदर्श पर महादेवी ने अपना मन्तव्य व्यक्त किया है । यथार्थ को वे जीवन का इतिवृत्त कहती हैं । प्रत्यक्ष जीवन ही यथार्थ है और उसे कैसे हम बनाना चाहते हैं वह आदर्श है । आदर्श हमेशा सुन्दर ही रहेगा यथार्थ को सुन्दर असुन्दर बनाना कृतिकार का स्वयं वरदान या अभिशाप है । यथार्थ सत्य है और आदर्श स्वप्न । एक युग का स्वप्न दूसरे युग का सत्य बनता ही आया है और इस प्रकार हमारे स्वप्नों को सत्य बनाते बनाते युगों से हमारे

---

1. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 116

समाज, संस्कृति और कला का विकास हुआ है । इस विकास की पद्धति के पीछे हमारी साहित्यिक और सामाजिक वृत्तियों के साथ तत्कालीन परिवेश का विशेष योग है । यथार्थ के सौंदर्य में ही जगत् का सौंदर्य है । जगत की इस सुन्दरता के आधार पर ही काव्य की उन्नति संभव है । आदर्श जीवन का निरपेक्ष सत्य है और यथार्थ सापेक्ष सीमा ।[1] जब हमारे अन्तर्जगत का संस्कार बाह्य जगत् के आचरण पर प्रभाव डालता है तभी हमारा आदर्श यथार्थ बन सकेगा । अतः आदर्श और यथार्थ में सामंजस्य लाना कलाकार का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए तभी उसका आदर्श यथार्थ बन सकता है और यथार्थ आदर्शमय ।

जीवन की विभिन्नता और एकता की अभिव्यक्ति के लिए काव्य में यथार्थ और आदर्श को अपनाया गया । कलाकार का प्रत्यक्ष सब का प्रत्यक्ष है । उसके नवीन रूपों का परिचय देने के लिए उसे जीवन के विभिन्न रूपों का सहारा लेना पडता है । यथार्थ का कलाकार प्रत्यक्ष की रेखाओं में किसी अपरिचित अप्रत्यक्ष स्थिति को अंकित करके हमें अप्रत्यक्ष का सौंदर्य जीवन की अखण्ड सजीवता के साथ प्राप्त करने योग्य बना देता है । अपरिचित या अप्रत्यक्ष परिस्थितियाँ कलाकार की भावना में स्थित हैं । "वह भावना सब परिस्थितियों में व्यापक और सब प्रत्यक्ष रेखाओं के लिए सामान्य हो सकती है, जीवन का अखण्ड आदर्श है ।"[2] यह आदर्श हमारी दृष्टि और मन की संकीर्णता को दूर करता है और व्यष्टि की चेतना को समष्टि तक पहुँचाने की दिशा देता है । कोई भी जाति अपने कालगत यथार्थ के निरीक्षण के बिना वर्तमान का मूल्यांकन नहीं कर

---

1. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 151
2. वही - पृ. 155

सकता और संभाव्य यथार्थ की कल्पना के बिना भविष्य की रूप रेखा निश्चित नहीं कर सकता । ये कार्य कला या साहित्य के क्षेत्र में ही अधिक सहज सुन्दर और संप्रेषणीय हो सकते हैं ।

यथार्थ और आदर्श काव्य रूपी नदी के दो किनारे हैं । जैसे सत्य और स्वप्न दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं और दोनों के मेल को ही जीवन कहते हैं, ठीक वैसे ही यथार्थ और आदर्श के सामंजस्य का नाम ही साहित्य है । "सच्चा कलाकार व्यावसायिक कम पर संवेदनशील अधिक होता है, अतः उसकी दृष्टि यथार्थ के संबंध में सन्तुलित और आदर्श के संबंध में व्यापक रहकर ही अपने लक्ष्य तक पहुँचती है ।"[1] कलाकार वही है जो आदर्श और यथार्थ के बीच की खाइयों को जीवन के सहज संवेदन से भर दे ।. इस प्रकार "यथार्थ और आदर्श" निबंध में महादेवी साहित्य के प्राणतत्व के लिए यथार्थ और आदर्श के उचित समन्वय को अनिवार्य मानती हैं ।

निष्कर्ष

महादेवी अपने आलोचनात्मक निबंधों में विभिन्न सामयिक समस्याओं पर अपना मत व्यक्त करती हैं । वे कथ्य से लेकर अभिव्यक्ति तक अपनी समीक्षा की मौलिकता को व्यक्त करते हुए उन्हें व्यावहारिक बना देती हैं । वे छायावादी काव्य से संबंध रखनेवाले छायावाद रहस्यवाद संबंधी

---

1. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 160

विवाद पूर्ण समस्याओं पर खूब जमकर विचार करके अपनी स्पष्ट मान्यताओं के द्वारा तत्संबंधी मान्यताओं का निर्धारण करती हैं । वे पूर्व निर्धारित शास्त्रीय सिद्धांतों के आधार पर न होकर अपनी काव्य प्रवृत्तियों के अनुकूल नवीन मानदण्डों के आधार पर काव्य संबंधी मौलिक सिद्धांतों की स्थापना करती हैं । महादेवी रहस्यवादी काव्य की प्रेरक शक्तियों पर विचार करके इसका उत्स ढूँढने का प्रयत्न करती हैं । आलोचना के क्षेत्र में उनका योगदान अवश्य ही महत्त्वपूर्ण है ।

पाँचवाँ अध्याय

महादेवी की भाषा एवं शैली

प्रत्येक साहित्यकार की सफलता रचना के कथ्यगत महत्त्व पर ही नहीं शिल्पगत विशेषताओं पर भी निर्भर है । रचना विशेष में अनुस्यूत सुन्दर भावों को वहन करने के लिए उचित भाषा और उनकी शैली अत्यन्त आवश्यक है । महादेवी की गद्य रचनाएँ भाषा शैली की दृष्टि से अनुपम है । स्वानुभूत मार्मिक स्पन्दनों से मुखरित होने के कारण उनकी कृतियाँ प्रेषणीयता में अमोघ रहती हैं ।

महादेवी ने भिन्न भिन्न प्रकार के गद्य लिखे हैं । प्रत्येक क्षेत्र में आप की भाषा शैली भी अलग अलग है । आपके संस्मरणात्मक रेखाचित्रों, आलोचनात्मक निबंधों और समाज संबंधी निबंधों से यह तथ्य प्रमाणित होता है कि उन्होंने विषयानुकूल भाषा शैली का प्रयोग किया है । उनके द्वारा प्रयुक्त ध्वनि संयोग, शब्द-संरचना, वाक्यों की बनावट आदि अभिप्रेत अर्थ को व्यंजित करने लायक है । महादेवी की भाषा ऐसे ही शब्दों से सुसज्जित है जो अपनी प्रभविष्णुता एवं प्रभावशीलता में अद्वितीय है तथा उपयोग की विविधता के साथ-साथ भिन्न भिन्न अर्थों का बोध करानेवाली शब्द शक्तियों से परिपूर्ण है । भारतीय संस्कृति का गुण गान करते समय आपकी भाषा संस्कृत गर्भित हो जाती है । रेखाचित्र और संस्मरण लिखते समय भाषा सरल एवं सरस है । भाषा को स्वाभाविक बनाने के लिए व्रजभाषा के शब्दों का प्रयोग भी हुआ है । रहस्यवाद, गीतिकाव्य आदि की व्याख्या करते समय अंग्रेज़ी के शब्द एवं पाश्चात्य साहित्यकारों के कथन और उद्धरण देकर उन्होंने अपना अंग्रेज़ी ज्ञान भी प्रकट किया है । नारी समस्या पर विचार करते समय उनकी भाषा जोश भरी एवं ओज गुण से

भरपूर हो गयी है । चिन्तन के समय आप की भाषा प्रौढ़ बनती है तो सामान्य स्थलों पर सरल एवं अभिधामूलक । जब कभी आवश्यकता पड़ती है तो लक्षणा एवं व्यंजना की ओर झुकती है । इस प्रकार अभिव्यक्ति में विविधता महादेवी की भाषा की विशिष्टता है । वह सरल, प्रौढ, संस्कृतनिष्ठ, तद्भव तथा देशज शब्दों के प्रयोग भरे, मुहावरे तथा लोकोक्तियों से युक्त, अलंकृत, काव्यमयी एवं चित्रमयी है । भाषा उनकी अत्यन्त परिष्कृत, अत्यन्त मधुर और अत्यन्त कोमल है । उसमें कहीं भी कर्कशता का चिह्न नहीं । व्याकरण का ज्ञान महादेवी को कम नहीं है, पर कलात्मकता की रक्षा के लिए ही उन्होंने व्याकरण ज्ञान की किंचित् उपेक्षा कहीं कहीं की है ।

संस्कृत निष्ठ

महादेवी संस्कृत की मेधावी लेखिका है । अतः उनकी भाषा में संस्कृत शब्दावली की भरमार है । भारतीय संस्कृति की व्याख्या करते समय आप की भाषा अत्यन्त गठित, संस्कृत निष्ठ एवं धारावाहिक है । जिसमें वे संस्कृत पर अपने अधिकार का पर्दाफाश करती हैं । उदाहरण के लिए "मधु मक्षिका जैसे कमल से लेकर भटकटैया तक और रसाल से लेकर आक तक सब मधुर तिक्त एकत्र करके उसे अपनी शक्ति से एक मधु बनाकर लौटती है, बहुत कुछ वैसा ही आदान-संप्रदान सुभद्रा जी का था । सभी कोमल-कठिन सह्य-असह्य अनुभवों का परिपाक दूसरों के लिए एक ही होता था । इसका तात्पर्य यह नहीं है कि उनमें विवेचन की तीक्ष्ण दृष्टि का अभाव था ।"[2] संस्कृत शब्द प्रचुरता का

---

1. महादेवी - नया मूल्यांकन - डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त - पृ. 304
2. संधिनी - महादेवी वर्मा - पृ. 16

अगला उदाहरण है - "मनुष्य की सहज प्रकृति और उसकी स्वार्जित संस्कृति में ऐसा अविच्छिन्न संबंध है, जिसमें एक की स्थिति में दूसरे की गति निहित है । दृष्टि के लिए जैसे वस्तु से रहित रंग की स्थिति नहीं होती, वैसे ही मूल प्रकृति के अभाव में, न विकृति में उसका अपकर्ष संभव है, न संस्कृति में उसका सामंजस्यपूर्ण उत्कर्ष । इस प्रकार प्रकृति यदि गति का उन्मेष है, तो संस्कृति उस गति की दिशानिबद्ध संयमित मर्यादा का पर्याय ।"[1]

महादेवी ने तत्सम शब्दों का प्रयोग काफी मात्रा में किया है, जैसे पराकाष्ठा, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बुद्धिग्राह्य, सौंदर्यबोध, लक्ष्य भेद, ध्वंसयुग, निष्प्राण आदर्श, भयोत्पादक, वायवी संकेत, मर्यादा-पुरुषोत्तम, कवि मनीषी, यथार्थदर्शी, अध्यात्मनिष्ठ, स्वप्न दर्शिनी, आत्मघाती प्रवृत्ति, वात्सल्य, नतमस्तक, विकलांग, अर्चना, अजीर्ण, अनन्त, मधुमक्षिका, सामंजस्यमूलक, स्पर्श, युगयुगान्तरव्यापी, अवश्यम्भावी, संवेदनशील, संवेगात्मक संस्कार, स्वानुभूति, पूर्व राग, अभिप्रेत, संवेदनीयता, मर्मस्पर्शिता, आरोह-अवरोह, रूपात्मकता, वाङ्मय, बहिर्मुखी, तारतम्य, शब्द संयोजन आदि ।

छायावादी युग में सूक्ष्म एवं अमूर्त की अभिव्यंजना के साथ शैली अवश्य दुरूह हो गई, पर भाषा की शक्ति और सौंदर्य में वृद्धि हुई । माधुर्य-गुण व्यंजित खडीबोली का रूप इस काल में ही प्रयोग में आयी । महादेवी वर्मा की भाषा इसका स्पष्ट उदाहरण है । संस्कृतमय भाषा में सरसता है ।

---

1. हिमालय - महादेवी वर्मा - पृ. 12

स्त्री के गरिमामय व्यक्तित्व की शक्ति का उल्लेख करते हुए उन्होंने संस्कृत श्लोक का उद्धरण किया है । नारी सौंदर्य को प्रकृति के चिर नवीन सामंजस्य को व्यक्त करते हुए वे कहती हैं

वह "आलोकदुकूलिन स्वर्ग कन्यका नूतन,
पूर्वाचन शोभी उदित हुई उज्ज्वल तेन ।"

ही नहीं वरन्

"त्रेता संग्रामों की ऐश्वर्यों की रानी भी है ।"[1]

छायावाद तथा रहस्यवाद की व्याख्या करते हुए उन्होंने वेदों और उपनिषदों के कई श्लोक उद्धृत किये हैं ।

उदा:- "यस्य भूमिः प्रमान्तरिक्षमुतोदरम ।
दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ।।"[2]

{भूमि जिसके चरण हैं, अन्तरीक्ष उदर है और आकाश जिसका मस्तक है, उस परम-शक्ति को नमन है ।}

"तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि "[3]

{यह सत्य है, वह आत्मा है वह तू है ।}

कविता की भाँति गद्य में भी महादेवी ने संस्कृत गुम्फित खडीबोली को अपनाया है । संस्कृत गर्भित होते हुए भी इनकी भाषा सरल, सरस एवं माधुर्ययुक्त है । महादेवी की शब्द सम्पदा का मूल स्रोत संस्कृत भाषा और साहित्य है । वे बछडा, रोयां, गर्भो की छुट्टी आदि शब्दों के स्थान

---

1. संभाषण - महादेवी वर्मा - पृ. 105
2. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 102
3. वही - पृ. 106

पर "तत्स", "रोम" और "ग्रीष्मावकाश" का प्रयोग करती हैं ।

तद्भव और देशज शब्द

महादेवी ने तत्सम शब्दों के साथ साथ तद्भव शब्दों का प्रसंगानुकूल प्रयोग किया है । उनके संस्मरणों और रेखाचित्रों में इसका प्रयोग अधिक देखा जा सकता है । "स्मृति की रेखाएँ" में देशज एवं तद्भव शब्दों का प्रयोग प्रभूत मात्रा में हुआ है । महादेवी कहती हैं कि जब एक दिन वह उत्तर पुस्तिकाओं और चित्रों को लेकर व्यस्त थी, तब भक्तिन सबसे कही घुमी - "ऊ बिचरिअउ तौ रातदिन काम माँ झुकी रहती हैं, अउर तुम पचे घुमती फिरती हौ ! चलौ तनिक तिनुक हाथ बटाय लेऊ ।"[1] किसी के लम्बे बाल और अस्तव्यस्त वेशभूषा देखकर भक्तिन कह उठती है "का ओहू कवित्त लिख जनत है" ..... "तब ऊ कुरछौ करि हैं धरि हैं ना बस गली गली गाउत बजाउत फिरि हैं ।"[2] भक्तिन की बातों में स्वाभाविकता लाने के लिए तद्भव शब्दों का प्रयोग बहुत सहायक सिद्ध हुआ है । वैसे ही ठकुरी बाबा का चित्रण करते समय लेखिका तद्भव शब्दों का प्रयोग अधिक करती हैं । बाबा ने परम शान्त स्वर पर स्नेहसिक्त स्वर में महादेवी जी से कहा "बिटिया रानी, का हम परदेसिन का ठहरै न देहौ ? बडी दूर से पाँच पियादे चले आइत हैं । ई तौ रैन-बसेरा है - "भोर भये उठि जाना रे ।" का झूठ कहित है ? हम तौ बूढ-बाढ़ मनई हैं ।"[3] महादेवी के प्रति ठकुरी बाबा का स्नेह जितना अथाह है यह दिखाने तद्भव शब्दों

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 13
2. वही - पृ. 17
3. वही - पृ.

का प्रयोग सफल हुआ है । इस प्रकार गाँव के अनपढ़ निरीह और उपेक्षित व्यक्ति के ठेठ शब्द भी उनके साहित्य में स्थान लेते गये हैं । महादेवी की भाषा को सर्वाधिक चमत्कार, कलात्मकता एवं सजीवता प्रदान करने का श्रेय इन लोकप्रचलित शब्दों को है जो जनसाधारण की धरोहर है और जो हिन्दी भाषा की बोलियों के प्राण हैं । जैसे हौले-हौले, हक्का-बक्का, बतासा, भोंगरी, बछिया, उनींदी, गुनगुना, खटोला, जूठन, अरगनी, बची खुची, बुआ, मेहरारू, छावडी, मचिया, गोंदरा, ससुर, ससुराल, पंडिताइन आदि ।

विदेशी शब्द

महादेवी की गद्य भाषा में विदेशी शब्दों का प्रयोग हुआ है । अंग्रेज़ी, अरबी और फारसी शब्दों का प्रयोग कहीं कहीं हुआ है । स्टूल, प्रेम, बँगला, कार, कम्पाउण्ड, फोटो, ड्रामा, आपरेशन, क्लास, फिलासफी, क्ले मॉडल, इन्लार्जमेंट, फाउन्टेन पेन, डिपार्टमेंट, अपील, अस्पताल आदि अंग्रेज़ी शब्दों का और उर्दू-फारसी शब्दों जैसे सफ़ेद, साफ़ा, हौज़, गर्दन, कलाबज़ो, चीज़, बालिश्त, खबर, दरवाज़ा, कुर्सी, नाप-जोख, बाज़ार, तकलीफ़, फ़िज़ूलखर्ची, नादान, ज़मीन-जायदाद, जंजीर, गुंजाइश, दावत, ग़म, मर्सिया आदि अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग अभिव्यक्ति को अधिक व्यावहारिक बनाने के लिए किया गया है ।

अशिक्षित, ग्रामीण जनता की भाषा में प्रयुक्त ऐसी कई रोचक और सजीव वाक्यावलियाँ है, जिनका रेखाचित्रों में विशेष स्थान है, रेखाचित्रों

के पात्रों की भाषा जन-जीवन की दैनिक व्यवहार की है, जिनमें समाज का हृदय बोलता है तथा जो लोक मानस का जीवन्त चित्र प्रस्तुत किया गया है । उदा: "ई कउन बड़ी बात आय ! रोटी बनाय जानिन हैं, बालरांध लेइत है, साग भाजी छौंक सकित है, अउर बाकी का रहा ।"[1] "का ई विद्या का कौनिउ इसथान नाहिन वा ?"[2] "मा भइया, करा धरा न होय, आपन बोहा-बरा आदमी रहा"[3] "अब हमार पत न बची मलकिन ।"[4]

मुहावरे, कहावत और लोकोक्ति

महादेवी जी की भाषा को लोकोक्तियों, कहावतों एवं मुहावरों ने भी पर्याप्त अलंकृत किया है । इनके प्रयोग से आपकी भाषा मार्मिक एवं मनोरंजक हो उठी है । जैसे "आँखों के अंधे नाम नैन सुख"[5], "चोरों की बारात में अपनी-अपनी होशियारी"[6], "एक पंथ दो काज"[7] "नौ दिन चले अढ़ाई कोस"[8], "रोज़ कुआ खोदना रोज़ पानी पीना"[9] "अपनी करनी अपनी भरनी"[10], "मानमती का कुनबा जोडना"[11], "दूध का जला मट्ठा भी

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 9
2. वही - पृ. 14
3. वही - पृ. 41
4. वही - पृ. 48
5. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 22
6. वही - पृ. 27
7. वही - पृ. 46
8. वही - पृ. 46
9. वही - पृ. 54

फूँक-फूँक कर पीता है ।"[1] "कीचड से कीचड को धो सकना संभव न होना"[2] "घर की मर्जाद चली जाना ।"[3]

महादेवी की भाषा को सुसज्जित करने में ऐसे उद्धरणों का सर्वाधिक हाथ रहा है जो वेदों, उपनिषदों तथा अन्य काव्य ग्रंथों से लिये गये हैं । लेखिका के विचारों, अपनी धारणाओं एवं मान्यताओं का समर्थन करने के लिए ये अत्यन्त सहायक सिद्ध होते हैं तो वाक्यावली के मध्य में आकर ही अपनी भव्यता से भाषा की शोभा बढ़ाते हैं । कभी वाक्यों से पृथक आकर भाषा को उद्दीप्त करते हैं । उदा:- "संग में पावन गंगा-स्नान" की पवित्रता और रूप में "गूढ़ रहस्य बना साकार" की व्यापकता आ गई ।"[4] "एक बाण-विद्ध क्रौंच से प्रभावित ऋषि "मा निषाद प्रतिष्ठा त्वं" कहकर यदि प्रथम श्लोक और आदि काव्य की रचना में समर्थ हो सका ।"[5] वाक्यों से पृथक् उद्धरण देकर भी आपने भाषा को सजाया है । जैसे "सुजातसो जनुषा रुक्मवक्षसे दिनो अर्का अमृतं नाम भेजिरे"[6] "आलोक रश्मि से बुने उषा - अंचल में आन्दोलन अमंद"[7] । "सजल शिशिर - धौत पुष्प देखता है एकटक किरण कुमारी की"[8]।

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 41
2. वही - पृ. 61
3. वही - पृ. 119
4. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 84-85
5. वही - पृ. 38
6. वही - पृ. 44
7. वही - पृ. 80
8. वही - पृ. 85

लोकोक्तियों के प्रयोग से इनकी भाषा समृद्ध हो गयी है । इन के प्रयोग ने उनकी भाषा पर चार चाँद लगाया है । विषय को अधिक स्वाभाविक बनाने के लिए यह सहायक होता है । उदाहरण के लिए "टेढी खीर", मैदान मारना, "रोम रोम गीला हो जाना", "हाथ पीले करना", दाँतों तले उँगली दबाना", कुत्ते की मौत करना आदि मुहावरे प्रसंगानुकूल एवं आकर्षक है । इन प्रचलित मुहावरों के अतिरिक्त नये मुहावरों की भी सृष्टि वे करती हैं । जैसे -"कन्या के दो संस्करण", "खोटे सिक्कों की टकसाल" आदि ।

महादेवी की भाषा को सरस एवं मनोहर बनाने में लोक-गीतों के मुखडों का हाथ है जो यत्र-तत्र वाक्यों के मध्य आकर अपनी रोचकता के कारण गद्य की नीरसता को सरस बना देता है ।
जैसे - "चुनरी त रँगाउब लाल मजीठी हो ।"[1]
"भोर भये उठि जाना रे ।"[2] "तुलसा महारानी नमो नमो ।"[3] आदि ।

अलंकृत काव्यमयी और चित्रमयी भाषा

महादेवी पहले कवयित्री बाद में गद्य लेखिका हैं । इसलिए उनकी गद्य रचनाओं में भाव और विचार का मेल है । नारी की दयनीय अवस्था,

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 69
2. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 75
3. वही - पृ. 93

प्राकृतिक परिवेश, कश्मीर का प्रकृति वर्णन आदि के चित्रण करते समय, महादेवी का कवि हृदय अधिक सक्रिय रहा है । अतीत के चलचित्र में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं । "फागुन की गुलाबी जाड़े की वह सुनहली संध्या क्या भुलाई जा सकती है । सबेरे के पलक पंखी वैतालिक एवं लयवती उड़ान में अपने अपने नीड़ों की ओर लौट रहे थे । बादलों के अन्तराल में उन पर चलाये सूर्य के सोने के शब्द बेधी बाण उनकी उन्माद गति में ही उलझकर लक्ष्य भ्रष्ट हो रहे थे ।"[1] संस्मरणों के अतिरिक्त विवेचनात्मक गद्य में भी इस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया गया है । "माता जिस प्रकार आस्था के बिना अपने रक्त से संतान का सृजन नहीं कर सकती, धरती जिस प्रकार ऋतु के बिना अंकुर को विकास नहीं दे सकती, साहित्यकार भी उसी प्रकार गंभीर विश्वास के बिना अपने जीवन के अपने सृजन में अवतार नहीं दे सकता ।"[2] महादेवी जब भाषण देती थी तब भी ऐसी अलंकृत भाषा का प्रयोग वह करती है उसके बारे में हिन्दुस्थान साप्ताहिक में कहा गया है "महादेवी जी जब भाषण देती थी तो लगता जैसे पतितपावनी गंगा कल-कल करती बहती आ रही है और हम उसमें स्नान कर रहे हैं । वह विभिन्न प्रतीकों व रूपकों को समेटती चलती थीं और प्रतीक भी अधिकतर प्रकृति के विस्तृत प्रांगणों से लिए हुए विशालता के द्योतक होते हैं ।"[3]

महादेवी जी एक अच्छी चित्रकर्त्री थी । उनके गद्य में चित्रात्मकता की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है । उनकी भाषा में शब्दों की ऐसी योजना हुई है कि वे वर्ण्य विषय का पूरा स्पष्ट चित्र खींच देती हैं ।

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 72
2. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 29
3. साप्ताहिक - हिन्दुस्थान - सितम्बर 27, 1987

महादेवी की भाषा में चित्रात्मकता के संबंध में डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने लिखा है "उनका एक एक शब्द स्पष्ट आकृति में भास्वरता धारण कर लेता है..... जो विवेच्य भाव उनकी संवेदना का लक्ष्य बना है, वह इन चित्रों की रंगीनी से साकार हो उठा है ।"[1] पथ के साथी में कवीन्द्र रवीन्द्र का सांगोपांग वर्णन है "मुख की सौम्यता को घेरे हुए वह रजत आलोक- मण्डल जैसा केश-कलाप, मानों समय ने ज्ञान को अनुभव के उजले झीने तन्तु में कात कर उससे जीवन का मुकुट बना दिया हो । केशों की उज्ज्वलता के लिए दीप्त दर्पण जैसे माथे पर समानान्तर रहकर साथ चलनेवाली रेखाएँ जैसे लक्ष्य पथ पर हृदय के विज्ञान चिह्न हों । कुछ उजली भृकुटियों की छाया में चमकती हुई आँखें देखकर हिम रेखा से घिरे अथाह नील जल कुण्डों का स्मरण हो आना ही संभव था ।"[2] इसे पढ़ने से कवीन्द्र रवीन्द्र का चित्र साकार होकर सामने आता है ।

ओज गुण युक्त भाषा

महादेवी जब कभी उपेक्षिता स्त्रियों के पक्ष में बोलती है, समाज में व्याप्त अंधविश्वासों, रूढ़ियों तथा संकीर्णताओं को समाप्त कर नव जागरण का सन्देश देना चाहती है तब उनकी भाषा अत्यन्त ओजमयी बन जाती है । उदाहरण "समाज में स्त्री की मर्यादा का जो स्थिर कर दिया गया है केवल यही उसकी गुरुता का मापदंड नहीं । स्त्री की आत्मा में उसकी मर्यादा की जो सीमा अंकित रहती है, वह समाज के मूल्य से बहुत अधिक गुरु और

---

1. महादेवी - संपादक डॉ. इन्द्रनाथ मदान - पृ. 212
2. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ . 1-2

निश्चित है, इसी से संसार भर का समर्थन पाकर जीवन का सौदा करनेवाली नारी के हृदय में सतीत्व जीवित रह सकता है और समाज भर के निषेध से घिरकर धर्म का व्यवसाय करनेवाली सति की साँसें भी तिल-तिल करके असती के निर्माण लगी रह सकती है ।"[1]

प्रसाद गुण युक्त भाषा

महादेवी की भाषा प्रसाद गुण युक्त है । भाषा के ओज और माधुर्य गुण बाह्य रूपों से संबंधित है तो प्रसाद गुण से अर्थ ग्रहण सहज हो जायेगा । महादेवी की भाषा की और एक विशेषता माधुर्य गुण है । जिस भाषा के गुण से हृदय आह्लादित और द्रवित होता है उसे माधुर्य गुण कहते हैं । इस प्रकार की भाषा का प्रयोग करूणा, शांत, एवं श्रृंगार के वर्णन में किया जाता है । महान विभूतियों एवं उपेक्षित पात्रों के वर्णन में माधुर्य गुण युक्त भाषा का प्रयोग मिलता है । माधुर्य गुण से युक्त भाषा प्राय: कोमल कान्त पदावली से युक्त है । "पथ के साथी" में शान्ति निकेतन का वर्णन माधुर्य गुण संपन्न है । "मानस पट पर शान्ति निकेतन का प्रार्थना भवन उदय हो आया । उसके चारों ओर लगे रंग बिरंगे शीशे से छनकर आता हुआ आलोक भीतर इन्द्रधनुषी ताना-बाना बुन देता था । संगमरमर की चौकी पर रखे हुए चमक फूलों पर घूम घूम भ्रमरों के समान मंडराता था । उसके पीछे बैठे कवीन्द्र की स्थिर दिव्य आकृति और उससे सब ओर फैलती हुई स्वर की निस्तब्ध तरंग माला ।"[2]

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 106
2. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ. 23

प्रसंगानुकूल भाषा

प्रसंगानुकूल भाषा के प्रयोग में कथन को मार्मिक बनाने के लिए महादेवी कुशल हैं । उनके संस्मरण और रेखाचित्रों की भाषा सरल है । विवेचनात्मक गद्य की भाषा गंभीर है । हास्य प्रसंगों में आपका प्रत्येक शब्द मुस्कुरा उठता है और करुणा के प्रसंगों में वे अपनी बातों से हमारी आँखों में आँसू भरा देती है । "अतीत के चलचित्र" और "स्मृति की रेखाएँ" में ऐसे अनेक अवसर है कि पढकर पाठक अश्रुसिक्त हो उठता है । घीनी भाई के जीवन की एक झलक प्रस्तुत करते हुए, उसकी बहन के चले जाने के बाद की उसकी स्थिति का वर्णन महादेवी यों करती है "पर एक दिन बहिन लौटी नहीं । सबेरे विभाता को कुछ चिन्तित भाव से खोजते देख बालक सहसा किसी अज्ञात भय से सिहर उठा । बहिन उसकी एक मात्र आधार बहिन । पिता का पता न पा सका और अब बहिन भी खो गई । वह जैसा था, वैसा ही बहिन को खोजने के लिए गली-गली में मारा-मारा फिरने लगा ।..... कभी किसी से टकराकर गिरते-गिरते बचता, कभी किसी से गाली खाता, कभी कोई दया से प्रश्न कर बैठता- क्या इतना, ज़रा-सा लडका भी पागल हो गया है ?"[1]

शैली

प्रत्येक रचनाकार की अपनी शैली होती है । शैली अभिव्यक्ति का माध्यम है । शब्द-योजना, वाक्य-योजना, भाव योजना और वस्तु योजना के विलक्षण संयोग को शैली कहते हैं । एक ही बात भिन्न भिन्न व्यक्ति

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 23-24

भिन्न भिन्न प्रकार कहते हैं यही कहना शैली कहलाती है । शैली के माध्यम से रचना का बहिरंग और अन्तरंग दोनों पक्षों का उद्घाटन होता है । भावों की सफल अभिव्यक्ति के लिए शैली का अपना महत्वपूर्ण योग है । लिखते समय लेखक जिस मानसिक स्थिति में होता है उसकी अभिव्यक्ति में यह भाव प्रकट होता है । लिखते समय यदि लेखक अधिक भावुक है तो उसकी शैली में भावुकता अवश्य दिखाई पड़ेगी । यदि वह दार्शनिक की स्थिति में है तो भाषा में दार्शनिक शब्दावली अधिक होगी एवं शैली में गंभीरता का आना स्वाभाविक है । यदि वह कल्पना लोक में है तो शैली चित्रात्मक बन जायेगी । इस प्रकार शैली वह कलात्मक उपलब्धि है जिसे लेखक या कवि अपने मन के प्रभाव को दूसरों तक पहुँचाने के लिए अपनाता है । शैली में विशिष्टता शब्द-योजना, वाक्यांशों का प्रयोग, वाक्यों की बनावट और उनकी ध्वनि आदि से लायी जाती है । शैली प्रतिभा की तरह अनायास नहीं प्राप्त होती, अपितु उसे अर्जित करना पड़ता है । शैली कृति का अभिन्न अंग है । अतः शैली का अध्ययन कृतियों के माध्यम से ही किया जा सकता है । शैली अनेक प्रकार की होती है जैसे चित्रात्मक एवं आलंकारिक भावात्मक, दार्शनिक, लाक्षणिक, कथात्मक, सूक्ति कथन शैली और विचारात्मक तर्क शैली आदि । इनमें से महादेवी सर्वाधिक का प्रयोग करती हैं । उनकी गद्य शैली की सब से बड़ी विशेषता विषयानुकूल शैली का प्रयोग है । इनकी प्रत्येक गद्य रचना की शैली विषय के मर्म समझने में सहायक होती है ।

चित्रात्मक

महादेवी के गद्य की प्रमुख शैली चित्रात्मक या वर्णनात्मक है । भावों की ठीक अभिव्यक्ति में यह शैली अत्यन्त सफल है । इस शैली में लेखक कम

से कम शब्दों में वर्णित पात्र अथवा वस्तु का चित्र पाठकों के सामने प्रस्तुत करता है । इस शैली में वाक्य छोटे एवं सरल होते हैं । चित्रात्मक शैली लेखक की कुशल अभिव्यंजना शक्ति का परिचायक है । यह शैली रेखाचित्र की अन्यतम विशेषता है । रूप और दृश्य वर्णन में तो इस शैली का उपयोग होता है । महादेवी के संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में इस शैली में अंकित चित्र में करुणा का भाव मुखरित हो जाता है।प्राय: व्यक्तियों के चित्र खींचते समय आपने इस शैली का प्रयोग किया है । अपने भृत्य रामा का चित्र खींचते हुए लेखिका कहती है - "किसी झुंझलाये शिल्पि के अन्तिम भूल जैसी अनगढ़ मोटी नाक, सांस के कंप प्रवाह से फैले हुए से नथुने, मुक्त हँसी से भरकर फूले हुए से ओठ तथा काले पत्थर की प्याली में दही को याद दिलाने वाले सफेद दन्त पंक्ति के संबंध में भी यही सत्य है ।"[1]

रधिया का चित्र इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है - "रधिया के मुख का आकर्षण भी उसकी व्यथा ही जान पडती थी - वैसे एक-एक करके देखने से, मुख कुछ विशेष चौडा था, नाक आँखों के बीच में तीखी रेखा खींचती हुई ओठ के ऊपर गोल हो गई थी । गहरे काले घेरे से घिरी हुई आँखें ऐसी लगती थी कि जैसे किसी ने उँगली से दबाकर उन्हें काजल में गाढ़ दिया हो । ओठों पर पडी हुई सिकुडन ऐसी जान पडती थी, मानों किसी तिक्त, दवा की प्याली से निरन्तर स्पर्श का चिह्न हो ।"[2] वैसे ही सुमित्रानन्दन पंत का चित्र खींचते हुए महादेवी चित्रात्मक शैली का प्रयोग करती हैं । "आकण्ठ अवगुण्ठित

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 13
2. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 96

करती हुई हल्की पीताभ सी चादर, कंधों पर लहराते हुए कुछ सुनहले से केश, तीखे नक्श और गौर वर्ण के समीप पहुँचा हुआ गेहुआँ रंग, सरल दृष्टि की सीमा बनाने के लिए लिखी हुई सी भवें, खिंचे हुए से ओठ, कोमल पतली उँगलियों वाले सुकुमार हाथ ।"[1] श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान के रेखाचित्र में आप सुभद्राजी का चित्र शब्दों के रंगों से भरकर हमारे सामने खडा कर देती है "मझोले कद तथा उस समय की कृश देहयष्टि में ऐसा कुछ उग्र या रौद्र नहीं था, जिसकी हम वीर गीतों की कवयित्री में कल्पना करते हैं, कुछ गोल मुख, चौडा माथा, सरल भृकुटियाँ, बडी और भावस्नात आँखें, छोटी सुडौल नासिका, हँसी को जमा करके गढ़े हुए से ओठ और दृढ़ता सूचक ठुड्ढी.... सब कुछ मिलकर एक अत्यन्त निश्चल, कोमल उदार व्यक्तित्व वाली नारी का ही पता देते थे ।"[2]

महादेवी को कवि हृदय प्राप्त है, कभी कभी प्रकृति के दृश्यों के चित्रण करते समय वह वर्णनात्मक हो जाता है । "क्षणदा" में कश्मीर के प्रकृति सौंदर्य का वर्णन करते समय वे लिखती हैं "चारों ओर से नीले आकाश को खींच कर पृथ्वी से मिलाता हुआ क्षितिज, रूपहले पर्वतों से घिरा रहने के कारण बादलों के घेरे जैसा जान पडता था । वे पर्वत अविरल और निरन्तर होने पर भी इतनी दूर थे कि धूप में जगमगाती असंख्य चाँदी सी रेखाओं के समूह के अतिरिक्त उनमें और कोई पर्वत का लक्षण दिखाई न देता था । जान पड़ता था कि किसी चित्रकार ने अपने आलस्य के क्षणों में रूपहले रंग में तूलिका डुबाकर नीले धरातल पर इधर उधर फेर दी है ।"[3] इसमें वर्णन की सजीवता के साथ साथ कवित्वमयी

---

1. पथ के साथी - महादेवी वर्मा - पृ.8।
2. वही - पृ.39
3. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ.40

शैली का प्रयोग हुआ है । चित्रात्मक शैली में अलंकारों का प्रयोग अधिक होता है । उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकारों से यह पाठकों के हृदय को आनन्द विभोर करा देता है । आलंकारिक शैली से जहाँ अर्थ सौंदर्य की सृष्टि होती है वहाँ सुन्दर शब्द लहरियों की सृष्टि भी की जाती है । रूप वर्णन में उपमानों तथा रूपकों द्वारा इस शैली का विशेष रूप से प्रयोग होता है । चमत्कृत ध्वनियों एवं वाक्यों की विलक्षणता द्वारा पाठक आकर्षित होता है । इस शैली के प्रयोग से कभी कभी कम से कम शब्दों में अधिकाधिक आशय व्यक्त हुआ है । "फागुन के जड़े की वह सुनहली संध्या क्या भुलाई जा सकती है । सबेरे के पुलक पंखी वैतालिक एक लयवती उड़ान में अपने अपने नीडों की ओर लौट रहे थे । विरल बादलों के अंतराल से उनपर चलाये हुए सूर्य के साने के शब्द भेदी बाणउन्मद गति में ही उलझकर भ्रष्ट हो रहे थे ।"[1]

कहीं वे सादृश्यमूलक अलंकारों का प्रयोग करती हैं । जैसे - "दूध से सफेद बाल और दूध फेनी-सी सफेद दाढ़ीवाला मुख झुर्रियों के कारण समय का अंकगणित हो रहा था कभी शंतेज आँखें, आज ऐसी लग रही थी मानों किसी ने चमकीले दर्पण पर फूँक मार दी हो ।"[2]

भावात्मक शैली

भावुक प्रसंगों का चित्रण करते समय इस शैली का प्रयोग होता है । कभी साहित्यकार किसी व्यक्ति, वस्तु या घटना से अधिक संवेदनशील

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 68
2. वही - पृ. 60-61

होकर कुछ लिखता है और वर्ण्य के प्रति पाठक के मन में सहानुभूति उत्पन्न करने में सफल होता है । उपेक्षित, दलित, पीडित पात्रों के वर्णन करते समय महादेवी इस शैली को अपनाती है । "चीनी फेरीवाला" में जब विमाता अपनी बहन से व्यभिचार करवाती है तब का वर्णन देखिए "व्यथा की कौन सी अंतिम यात्रा ने बहिन के नन्हें हृदय का बाँध तोड डाला उसे अबोध बालक क्या जाने । पर एक रात उसने बिछौने पर लेटकर बहिन की प्रतीक्षा करते-करते आधी आँख खोली और विमाता को कुशल बाजीगर की तरह, मैली कुचैली बहिन या कायापलट करते देखा । उसके सूखे होंठों पर विमाता की मोटी उँगली ने दौड-दौडकर लालीफेरी, उसके फीके गालों पर चौडी हथेली ने घूम-घूमकर सफेद गुलाबी रंग भरा, उसके रूखे बालों को कठोर हाथों ने घेर-घेर कर सँवारा और तब नए रंगीन वस्त्रों में सजी हुई मूर्ति को एक प्रकार से ठेलती हुई विमाता रात के अंधकार में बाहर अन्तर्हित हो गई ।"[1]

बाल विधवा का सही परिचय देते हुए महादेवी की पाठकों की आँखों में अश्रु बिन्दु ला देती है । "स्मरण नहीं आता वैसी करुणा मैं ने कहीं और देखी है । खाट पर बिछी मैली दरी, सहस्रों सिकुडन भरी मलिन चादर और तेल के कई धब्बवाले तकिये के साथ मैं ने जिस दयनीय मूर्ति से साक्षात् किया, उसके ठीक चित्र दे सकना संभव नहीं है । वह 18 वर्ष से अधिक की नहीं जान पडती थी - दुर्बल और असहाय जैसी । सूखे होंठवाले, साँवले, पर रक्त-हीनता से पीले मुख में, आँख ऐसे जल रही थी जैसे तेल हीन, दीपक की बत्ती ।"[2]

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 26
2. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 60

दार्शनिक शैली

जीवन- प्रकृति, लौकिक-अलौकिक, यथार्थ-अयथार्थ आदि में जब संघर्ष का अवसर आता है और लेखक को गहराई में पैठकर तत्संबंधी विचार व्यक्त करना पडता है तब दार्शनिक शैली प्रयोग में आती है । यह कुछ गंभीर है । उदाहरण "वास्तव में जीवन सौंदर्य की आत्मा है पर वह सामंजस्य की रेखाओं में जितनी मूर्तिमत्ता पाता है उतनी विषमता में नहीं । जैसे जैसे हम बाह्य रूपों की विविधता में उलझते जाते हैं वैसे-वैसे उनके मूलगत जीवन को भूलते जाते हैं । बालक स्थूल विविधता से विशेष परिचित नहीं होता । उसी से वह केवल जीवन को पहचानता है ।"[1]

लाक्षणिक शैली

साक्षात् सांकेतित अर्थ को अभिधार्थ, मुख्यार्थ या वाच्यार्थ कहते हैं । मुख्यार्थ के बाधित होने पर रूढ़ि के कारण जो अर्थ निकलता है उसे लक्ष्यार्थ कहते हैं । इन दोनों अर्थों से भिन्न एक नवीन अर्थ लिया जाता है तो उसे व्यंग्यार्थ कहते हैं । लाक्षणिक शैली का प्रयोग साहित्य में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है । महादेवी के गद्य साहित्य में इस शैली की प्रमुखता है । उनके संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं । समाज के अत्याचारों एवं कठोर व्यवहारों को देखकर महादेवी जी वेदना का अनुभव करती हैं । तब समाज पर उन्हें लाक्षणिक एवं व्यंग्य बाणों का प्रयोग करना पडता है । इससे वह पाठकों का ध्यान इन बुराइयों की ओर आकृष्ट करके समाज के प्रति

---

1. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 76

जागरूक रहने की चेतावनी देती हैं । "स्त्री किस प्रकार अपने हृदय को चूर-चूर कर पत्थर की देवी प्रतिभा बन सकती हैं, यह देखना है तो हिन्दू गृहस्थ की दूध मुँही बालिका से शापमयी युवती में परिवर्तित होती हुई विधवा को देखना चाहिए..... दूसरों के अमंगल के भ्रम से आँखों में दो बूँद जल भी इच्छानुसार नहीं आने दे सकती ।"[1]

लाक्षणिक शैली के प्रयोग से महादेवी अपने गद्य को काव्य की रसात्मक अनुभूति से भरा देती है । उदा: जिन रजकणों पर कभी रूपसियों के राग रंजित सुकोमल चरणों का न्याय भी धीरे धीरे होता था, उन पर जब यात्रियों के भारी जूतों के शब्द से युक्त कठोर पैर पडते थे, तब लगता था कि वे पीडा से कराह उठे हैं ।"[2] "जब आदर्श जल भरे बादल की तरह आकाश का असीम विस्तार पृथ्वी के असंख्य रंगों और अनंत रूपों में नहीं उतर सकता, तब शरद के सूने मेघ खण्डों के समान शून्य का धब्बा बना रहना ही उसका लक्ष्य हो जाता है ।"[3]

कथात्मक शैली

रेखाचित्र, कहानी और निबंध के बीच की विधा है । इसमें कथात्मकता कुछ सीमा तक अवश्य होती है । इसके प्रयोग से रेखाचित्र में

---

1. शृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 156
2. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 46
3. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 155

रोचकता आती है । महादेवी के संस्मरणात्मक रेखाचित्र कथात्मक शैली का उत्तम उदाहरण है ।

सूक्ति कथन शैली

महादेवी ने यत्र-तत्र सूक्तियों का प्रयोग किया है । ये सूक्तियां बड़े मार्मिक एवं अर्थगर्भित है । जहाँ उनके वाक्यों में अर्थ-गांभीर्य रहता है वहाँ सूक्तियों का प्रयोग भी हुआ है । सूक्तियों में गागर में सागर भरने की क्षमता है । छोटे वाक्य में बड़े से बड़ा तथ्य अथवा सत्य कह देना इस शैली की विशेषता है । जैसे, "वास्तव में जीवन, सौंदर्य की आत्मा है ।"[1] "आत्माघात मनुष्य की जीवन से पराजित होने की स्वीकृति है ।"[2]
"साधारणतः आज के पुरुष का पुरुषार्थ विलाप है ।"[3]
"स्नेह ही मनुष्यता के मन्दिर का एक मात्र देवता है ।"[4]
"आस्था, व्यक्ति के द्वारा समष्टि की स्वीकृति है ।"[5]
"सन्तान का जन्म माता की पीडा का भी जन्म है ।"[6]

इस शैली में गंभीर चिन्तन के साथ गूढ़ व्यंग्य और हास्य के पुट भी मिलते हैं ।

---

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 2
2. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा - पृ. 125
3. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा - पृ. 94
4. शृंखला की कडियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 101
5. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा - पृ. 26
6. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 125

महादेवी के गद्य की अपनी विशेषता उसकी वैयक्तिकता है । महादेवी की रचना शैली की कुछ निजी विशेषतायें हैं । कुछ शब्दों का प्रयोग वह बार बार करती है । जैसे "असंभव नहीं तो दुर्लभ, आवश्यक ही नहीं, त्रिवेणी संगम, लिपे-पुते, जीर्ण-शीर्ण आदि ।

विचारात्मक तर्क शैली

विभिन्न समस्याओं को पाठकों के सामने प्रस्तुत करने के लिए इस शैली का प्रयोग होता है । महादेवी ने कहीं कहीं इस शैली को अपनाया है । नारी की शोचनीय स्थिति की व्याख्या करते समय उन्होंने विचारात्मक तर्क शैली का प्रयोग किया है । "यदि पुरुष धनोपार्जन कर अपने कर्तव्य का पालन करता हुआ समाज तथा देश का आवश्यक और उपयोगी अंग समझा जाता है, राजनीतिक तथा सामाजिक अधिकारों का यथेष्ट उपयोग कर सकता है तो स्त्री गृह में भविष्य के लिए अनिवार्य सन्तान का पालन-पोषण कर अपने गुरु कर्तव्य का भार वहन करती हुई इन सब अधिकारों से अपरिचित तथा वंचित क्यों रखी जाती है ? संसार के और उसके बीच में ऐसी काली अभेद्य यवनिका क्यों डाल दी जाती है, जिसके कारण अपने गृह की संकुचित सीमा के अतिरिक्त और किसी वस्तु से उसका परिचय हो सकना असंभव है ? संसार की प्रगति से अनभिज्ञ, अनुभव-शून्य, पिंजर-बद्ध पक्षी के समान अधिकार-विहीन, रुग्ण, अशिक्षित नारी से फिर शक्ति-संपन्न सृष्टि की आशा की जाती है, जो मृगतृष्णा से तृप्ति के प्रयास के समान ही निष्फल सिद्ध होगी ।"[1]

---

1. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृ. 22

राष्ट्रभाषा के संबंध में महादेवी जी अपना मत प्रकट करती है - "हिन्दी अपना भविष्य किसी से दान में नहीं चाहती । वह तो उसकी गति का स्वाभाविक परिणाम होना चाहिए । जिस नियम से नदी नदी की गति रोकने के लिए शिला नहीं बन सकती, उसी नियम से हिन्दी भी किसी सहयोगिनी का पथ अवरुद्ध नहीं कर सकती ।"[1]

निष्कर्ष

महादेवी की भाषा सरल, प्रवाहपूर्ण और माधुर्ययुक्त है । भाव, भाषा और संगीत तीनों का संगम उनकी भाषा में होता है । उनका शब्द चयन विलक्षण, भावानुकूल है और वाक्य-विन्यास सुलझा हुआ और दृढ़ है । भाषा में सर्वत्र कविता की सरसता, तल्लीनता एवं तन्मयता है । अतः भावुकता, विदग्धता और स्वानुभूति को स्फूर्ति दायिकता उनकी भाषा की विशेषताएँ हैं । उनके गद्य की भाषा-शैली अपने में विशिष्ट है । महादेवी अपनी गद्य रचनाओं की सुसंस्कृत भाषा एवं शैली के माध्यम से पाठकों के हृदय पर अमिट प्रभाव डालती हैं ।

---

1. क्षणदा - महादेवी वर्मा - पृ. 108

उपसंहार

उपसंहार

आधुनिक युग में कविता के समानान्तर गद्य का विकास हुआ । कोई भी साहित्य रचना अपने प्रारंभ काल में उत्कृष्ट कोटि की नहीं होगी । यद्यपि भारतेन्दु युग से हिन्दी गद्य में रचनायें होने लगी थीं तथापि वे साहित्य की उत्कृष्ट कोटि में नहीं आतीं । आगे पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खडीबोली गद्य का परिष्कार एवं परिमार्जन किया, उसका प्रसार एवं प्रचार भी बढ़ने लगा । धीरे धीरे गद्य की कई विधाओं में सक्रियता दिखाई पड़ने लगी । नाटक, कहानी, आलोचना, उपन्यास, रेखाचित्र, संस्मरण, यात्रा-वर्णन आदि विभिन्न विधाओं से हिन्दी गद्य पर्याप्त रूप से समृद्ध होता गया । छायावादी युग में गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं की अभूतपूर्व उन्नति हुई । आज के जटिल जीवन में गद्य का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है । गद्य का संबंध हमारे वास्तविक जीवन से है । गद्य में सामाजिक यथार्थ की अन्तर-गताओं का चित्रण पद्य की अपेक्षा अधिक विस्तृत रूप से हो सकता है । गद्य का क्षेत्र इतना व्यापक है कि उसमें लेखक को अपनी बात कहने का अधिक अवसर मिलता है ।

छायावादी चतुष्टय कवियों में अनेक कारणों से महादेवी वर्मा अलग स्थान बनाये औरों से असंपृक्ता रही है । उनकी सृजनात्मक प्रतिभा का प्रथम उन्मेष कविता के रूप में हुआ और रचनात्मक कर्म अनवरत चलता रहा । साहित्य की अन्य विधाओं में रेखाचित्र, संस्मरण, निबंध, समीक्षा, अनुवाद आदि के अनेक बहुआयामी प्रतिभा का प्रतिफलन उनके साहित्य में हुआ ।

वे वास्तविकता की लेखिका हैं, उनकी रचनाओं में जीवनानुभव और वैचित्र्यमय मानव जीवन के, सुख दुःख की स्पर्शिता है । उनमें करुणार्द्र स्वभाव बचपन से ही विद्यमान था । मानव एवं पशुपक्षियों के प्रति लगाव बचपन से ही उनमें था । उनमें विश्व के प्रति स्नेह स्वीकृत था । सभी प्रलोभनों से वे विमुख रहती थीं । वे अत्याचारों के प्रति विद्रोह प्रकट करती थीं । लेकिन ध्वंस के लिए ध्वंस के सिद्धांतों में उनका कभी विश्वास न रहा । दुःखवादी कवयित्री की खुली हँसी, सभ्यता, संयम का अनुभव मिलनेवाले को देता है । समाज सेवा, राष्ट्र सेवा, नारी जीवन का उद्धार, निर्धन साहित्यकारों की सेवा आदि के लिए उन्होंने जीवन भर प्रयत्न किया । महात्मा गाँधी से मिलकर वे काम करती रही । उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन में सहभाग दिया और उसमें भाग लेनेवालों को चेतावनी दी और उन्हें संरक्षण भी दिया । शिक्षा संस्थाओं से वे आजीवन संबद्ध रहीं । महादेवी एक कुशल वक्ता हैं । उनके भाषण कुशलता पर प्रकाश डालते हुए रामनारायण उपाध्याय कहता है "उनके पास सहज भाषा का ऐसा जादू है कि हज़ारों की भीड़ उन्हें सुनने को उमड पड़ती है । गाँधीजी के बाद बोलचाल की भाषा का ऐसा सशक्त प्रवक्ता दूसरा नहीं देखा । उनके लिए नियोजित हर सभा स्थल छोटा पड जाता है ।" वे यथार्थवादी हैं और आस्थावान आदर्शवादी भी । समन्वय और सामंजस्य उनके जीवन के मूलाधार है । महादेवी की रचनाएँ उनके साहित्य-व्यक्तित्व संपन्न है । रचनाओं का प्रमुख स्वर समाज टीस है, मानवीय करुणा है । वे मानवीय संवेदनाओं की रचनाकार की लेखिका हैं । उनकी रचना का मर्म मानवता-वाद, लोक-कल्याण और व्यष्टि-समष्टि का समन्वय है । रेखाचित्र और संस्मरण को महादेवी की एक विशिष्ट उपलब्धि के रूप में स्वीकार करना समीचीन है ।

संस्मरण और रेखाचित्र हिन्दी गद्य साहित्य की अपेक्षाकृत नवीन विधाएँ हैं । गद्य साहित्य की एक स्वतंत्र कलात्मक विधा के रूप में इनका विकास आधुनिक युग में ही हुआ है । रेखाचित्र एक व्यक्ति केन्द्रित साहित्यिक विधा है । चित्र दृष्टि का संयोजन रेखाचित्र की अपनी विशेषता है । रेखा चित्रकार किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को कुछ रेखाओं से बिना रंगों की छाया से व्यक्त कर सकता है । रेखाओं की भाषा चाक्षुष होने के कारण उनकी पहचान में कोई बाधा नहीं होती । डॉ. नगेन्द्र के अनुसार शब्द चित्र छोटे और जीवंत होते हैं, अतः उनकी तुलना स्नैप शाट से की गई है ।" अतः रेखाओं से या शब्दों से बनाये हुए चित्र रेखाचित्र या शब्दचित्र कहलाते हैं ।

संस्मरण की प्रमुख विशेषता स्मृति है । इसमें प्रायः स्मर्यमाण से अधिक रचयिता के व्यक्तित्व की छाप होती है । रेखाचित्र में साधारणतः साधारण पात्रों की आकृति को भेदकर अन्तःप्रकृति का अंकन होता है, संस्मरण व्यक्ति के अतिरिक्त बाह्य घटनाओं और व्यक्तियों का लिखा जा सकता है । रेखाचित्र में चित्रण की प्रधानता है और संस्मरण में विवरण अधिक हैं । संस्मरण व्यक्तिनिष्ठ विधा है और रेखाचित्र वस्तुनिष्ठ । ये दोनों विधायें एक दूसरे के बहुत समीप है ।

डॉ. नगेन्द्र मानते हैं कि दोनों रेखाचित्र और संस्मरण की जाति एक है । संस्मरण और रेखाचित्र एक एक प्रकार है ; जिसमें किसी

वास्तविक व्यक्ति का चित्र होता है । श्री गोविन्द त्रिगुणायत के अनुसार संस्मरण और रेखाचित्र समकक्ष विधायें हैं । दोनों के कलाकार अतीत का संबंध वर्तमान से, वर्तमान का गठबन्धन भविष्य से, इस प्रकार करने का प्रयास करते हैं कि वस्तु, व्यक्ति या घटना का अर्थात् रूप निकल आवे और भावना तथा कल्पनामूलक रोचकता भी बने रहे, साथ ही लेखक की व्यक्तिगत रुचियाँ भी उभर आवे ।

इस प्रकार रेखाचित्र और संस्मरण दोनों में समानता अधिक है । यदि संस्मरण को कलात्मक बनाने के लिए चित्र शैली का सहारा लिया जाता है तो रेखाचित्र भी स्मृति के आधार पर ही अंकित किया जाता है । इसलिए प्राय: दोनों का प्रयोग एक साथ किया जाता है ।

महादेवी के संपूर्ण गद्य लेखन में "अतीत के चलचित्र", "स्मृति की रेखाएँ", "पथ के साथी", "मेरा परिवार", और "स्मारिका" में रेखाचित्र और संस्मरण की सीमाएँ एक दूसरे से घुल मिल गई हैं । इन्हें पूर्णत: संस्मरण नहीं कहा जा सकता क्योंकि इसमें चित्रों की रेखाएँ भी बोलती हैं । इनमें लेखिका का निरीक्षण सूक्ष्म है । संवेदना का रंग गहरा और उज्वल है । इसके चित्र उच्चतम मानवीय तत्वों से अनुप्राणित स्पन्दन शील है । ये न केवल रेखाचित्र हैं न केवल संस्मरण । प्राय: इनका रूप परस्पर अन्तर्भुक्त दिखाई देता है । ये संस्मरणात्मक रेखाचित्र हैं । ये उनकी उन्नत कोटि की सृष्टि हैं । क्योंकि उनकी हृदयगत भावनायें इनमें मुखरित हैं । "अतीत के चलचित्र" और

"स्मृति की रेखाएँ" में एक ओर समाज द्वारा पीडित, उपेक्षित - माता, भगिनी, पत्नी तथा पुत्री की करुण कथा का चित्रण है । वे नारियों की वेदना पीडा, मनस्थिति का ऐसा चित्रण खींचती हैं कि पाठक या श्रोता का हृदय भी उनकी वेदना में डूब जाता है । उनकी मनोदशा का यथातथ्य चित्रण पाठक पर पडता है । उदाहरण के लिए विमाता के अत्याचारों से पीडित, छोटी अवस्था में ही ममता से वंचित बिन्दा का कारुणिक चित्र पाठक के मन:पटल पर अंकित हो जाता है । दूसरी ओर पीडित एवं शोषित सामान्य पुरुषों की करुण कथा का वर्णन भी हुआ है । ये पाठक का ध्यान आकृष्ट करते हैं । "पथ के साथी" और "स्मारिका" में चित्रित हर विशिष्ट व्यक्ति को उन्होंने इसलिए महान कहा कि उनमें उन्होंने महा मानवता देखी है । "मेरा परिवार" में महादेवी कुछ विशिष्ट मानवेतर जीव-जन्तुओं के प्रति अपनी आत्मीयता और संवेदना की मार्मिक अभिव्यंजना करती हैं । इसमें पालतू पशु-पक्षियों के चित्रांकन में मानवतावाद का स्वर मुखरित है ।

महादेवी अपने निबंधों में समाज के दु:ख दैन्य उसके स्वार्थी और अभिशापों का प्रतिकार करती हैं । उसमें एक विद्रोही की आत्म रुदन कर रही है । वे कहीं कहीं आक्रोश या क्षोभ में आकर अनुचित कार्यों का प्रतिकार करना चाहती हैं तब व्यंग्य रूप में उनकी आन्तरिक भावना प्रकट हो जाती है । वहाँ न्यायपूर्ण, आदर्शपूर्ण आत्मा की झलक मिल जाती है । भारतीय नारी उपेक्षित, अपमानित, प्रताडित, अधिकारहीन, व्यक्तित्वहीन प्राणी है । उनके संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में अधिकांश नारी की परिवशता का चित्र उपस्थित करती हैं । नारी समस्या पर उनके विचार सामाजिक भलाई की ओर उन्मुख है ।

उनके कुछ निबंधों में भी नारी के जीवन के प्रति उनके दृष्टिकोण का परिचय मिलता है । उनके निबंधों की विशेषता उनकी भाव-विभोर गहरी चिन्तनशील प्रवृत्ति है । काव्यमयता उनके निबंधों की और एक विशेषता है । महादेवी का साहित्य-विषयक प्रतिमान किसी भी प्रकार की पूर्वग्रह-प्रवृत्ति की परिधि में सीमित न होकर जीवन की विविधता के साथ संचरणशील है । सामाजिक दृष्टि से मानव मात्र की एकता को ही वे सौंदर्य मानती हैं । समाज में फैली विवशता, दयनीयता, दारिद्र्य यह उसकी सबसे बडी कुरूपता है । जीवन के विविध मूल्यों के संबंध में इतना व्यापक और सुसंगत दृष्टिकोण उपस्थित करने के कारण इनकी विवेचना, आधुनिक समालोचना के लिए एक अभिनव पथ निर्माण करने में सफल सिद्ध होता है ।

विज्ञान की प्रगति पर प्रकाश डालते हुए उनका यह कथन है कि विज्ञान की उपलब्धियों के साथ ही मानवीय संवेदना को भी विकास होना चाहिए । भारत ने कभी भी आक्रामक की भूमिका नहीं निभाई । उसने तो, जब लोग यह भी नहीं जानते थे कि पृथ्वी कितनी बडी है "वसुधैव कुटुम्बकम्" की बात की थी । लेकिन यह विडम्बना ही है कि इतने बडे बडे संपन्न और समृद्ध देश अपनी सारी शक्ति मनुष्य को ही नष्ट करनेवाले हथियार बनाने में लगा रहे हैं । हिन्दी के विकास के संबंध में उनकी मान्यता ये हैं कि हिन्दी का विकास और सम्मान उसके अपने चरित्र के कारण बढ़ा है । हिन्दी को शासन की ओर कभी कोई मदद नहीं मिली । सत्ता की भाषा या आक्रामक की भाषा वह कभी नहीं रही । यह सत्य है कि हिन्दी के

उनके कुछ निबंधों में भी नारी के जीवन के प्रति उनके दृष्टिकोण का परिचय मिलता है । उनके निबंधों की विशेषता उनकी भाव-विभोर गहरी चिन्तनशील प्रवृत्ति है । काव्यमयता उनके निबंधों की और एक विशेषता है । महादेवी का साहित्य-विषयक प्रतिमान किसी भी प्रकार की पूर्वग्रह-प्रवृत्ति की परिधि से सीमित न होकर जीवन की विविधता के साथ संचरणशील है । सामाजिक दृष्टि से मानव मात्र की एकता को ही वे सौंदर्य मानती हैं । समाज में फैली विवशता, दयनीयता, दारिद्र्य यह उसकी सबसे बडी कुरूपता है । जीवन के विविध मूल्यों के संबंध में इतना व्यापक और सुसंगत दृष्टिकोण उपस्थित करने के कारण इनकी विवेचना, आधुनिक समालोचना के लिए एक अभिनव पथ निर्माण करने में सफल सिद्ध होता है ।

विज्ञान की प्रगति पर प्रकाश डालते हुए उनका यह कथन है कि विज्ञान की उपलब्धियों के साथ ही मानवीय संवेदना को भी विकास होना चाहिए । भारत ने कभी भी आक्रामक की भूमिका नहीं निभाई । उसने तो, जब लोग यह भी नहीं जानते थे कि पृथ्वी कितनी बडी है "वसुधैव कुटुम्बकम्" की बात की थी । लेकिन यह विडम्बना ही है कि इतने बडे बडे संपन्न और समृद्ध देश अपनी सारी शक्ति मनुष्य को ही नष्ट करनेवाले हथियार बनाने में लगा रहे हैं । हिन्दी के विकास के संबंध में उनकी मान्यता ये हैं कि हिन्दी का विकास और सम्मान उसके अपने चरित्र के कारण बढ़ा है । हिन्दी को शासन की ओर कभी कोई मदद नहीं मिली । सत्ता की भाषा या आक्रामक की भाषा वह कभी नहीं रही । यह सत्य है कि हिन्दी के

प्रवाह की वेगवती धारा को अब कोई रोक नहीं पाएगा, लेकिन यह बात भी सही है कि जब तक वह शासन के व्यवहार की भाषा नहीं बनती, उसके विकास में अवरोध बना रहेगा ।

महादेवी की समीक्षा दृष्टि कलात्मक और सौंदर्यमूलक है । उनकी जीवन दृष्टि आलोचना को अधिक प्रांजल और प्रखर बना सकती है । वे विचारों की ठोस भूमि पर गंभीर दृष्टि से साहित्य संबंधी विचारों को प्रस्तुत करती हैं । उनके सिद्धान्त स्वत: निर्मित है । छायावाद और रहस्यवाद के संबंध में जो वाद-विवाद हुआ तब छायावादी काव्य की प्रतिष्ठा के लिए उसका समर्थन उन्होंने ऐतिहासिक व्याख्यात्मक पद्धति के सहारे किया है । वे रहस्यवादी काव्य को पश्चिम का अनुकरण नहीं मानती हैं । भारतीय दर्शन और साहित्य का गंभीर अनुशीलन तो उन्होंने किया है । साथ ही पश्चिमी दर्शन में भी गहरी रूचि थी । सामयिक साहित्यिक प्रवृत्तियों के विवेचन के साथ-साथ इनकी समालोचना सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अनुशीलन की दृष्टि से भी अत्यन्त उपयोगी है । इनका सन्तुलित तथा संयमित विवेचन आधुनिक समालोचना की गति के लिए प्रेरक और प्राणप्रद सिद्ध होगा ।

भाषा की दृष्टि से महादेवी की गद्य रचना गरिष्ठ है । वे संस्कृत की प्रकाण्ड पण्डिता हैं । उन्होंने प्रसंगानुकूल भाषा का प्रयोग किया है । संस्मरणात्मक रेखाचित्रों की भाषा सरल है तो साहित्यिक एवं आलोचनात्मक निबंधों में प्रौढ़ और संस्कृत निष्ठ भाषा का प्रयोग हुआ है । गीति काव्य के लिए भाषा की समाहार शक्ति आवश्यक है । प्रत्येक शब्द का प्रयोग अव्यर्थ

रहता है । उनके भीतर विस्तृत अर्थ समेटे रहता है । आप शब्द-चयन बडी सावधानी से करती हैं । शैली की दृष्टि से भी उनकी गद्य रचना अनुपम है । क्योंकि आपने जितने प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है उतना किसी अन्य गद्यकार ने न किया हो । विषय की सरलता और जटिलता के अनुसार विभिन्न शैलियों का प्रयोग उन्होंने किया है । भाषा शैली का लचीलापन बेजोड है । वे रेखाचित्रकार हैं । महादेवी के चित्र उनके काव्य के पूरक हैं । "यामा" और "दीपशिखा" के समान उनके रेखाचित्रों में भी काव्यात्मक चित्र भरे पडे हैं । वे नितान्त प्राकृतिक भाषा में ऊँचे ऊँचे भौतिक आदर्शों को सहज ही अनुस्यूत करके रख देती हैं । उनकी भावव्यंजना गंभीर है । भाव प्रधान होने से चित्रात्मकता अनिवार्य रूप से आयी है । कहीं नाद सौंदर्य का प्रयोग भी आया । अभीष्ट विषय को शब्दों में मूर्त रूप इसी शक्ति के कारण दे सकती हैं । यथार्थ जीवन से उठाई गई विषयों को इधर उधर कल्पना का पुट देकर शब्दचित्रों द्वारा सजीव कर देने में वे सिद्धहस्त हैं ।

महादेवी की गद्य रचनाओं का अपना पृथक अस्तित्व है । गद्य के माध्यम से महादेवी ने हिन्दी साहित्य को अमूल्य अक्षय निधि- प्रदान की है । आप का गद्य साहित्य एवं समाज के लिए उपयोगी हैं । महादेवी ने समाज की उन्नति के लिए सामाजिक तथा सांस्कृतिक चेतना के उत्थान को आवश्यक समझा है । मानवता से जुडे होने के कारण ही महादेवी का गद्य संवेदनशील बन पडा है । चित्रों के द्वारा जीवन को यथार्थ रूप में देखने और परखने, उसमें मानव हृदय की अतल गहराईयों में उतरने और संवेदनशील आत्मीयता जगाने की क्षमता अद्वितीय है । समाज, परिस्थिति अथवा भाग्य द्वारा उपेक्षित व्यक्तियों की

अव्यक्त वेदना को स्वायत्त कर लेना और उनके प्रति एक सहज सक्रिय सहानुभूति प्रकट करना महादेवी जी की अपनी स्वभावगत विशेषता है ।

उनका जीवन एक दृष्टि से वैविध्यहीन है । अपने मन पसन्द कार्यों और विषयों में उन्होंने अपने जीवन को पूर्णतः केन्द्रित रखा । उनमें विद्रोह की भावना है ओज है । उनका संकल्प, उनका स्वर दृढ़ है । कहीं भी वे पराजित नहीं होतीं ।

महादेवी के व्यक्ति को समग्रता में देखने के लिए उनके संस्मरणों रेखाचित्रों और निबंधों का आकलन ज़रूरी है । पर सब मिलकर उनका व्यक्तित्व वेदना और करुणा के परमाणुओं में ही बना है । उनके संस्मरणात्मक रेखाचित्रों के पात्रों में व्यक्तियों की महानता ने नहीं बल्कि लघुता और मानवीयता ने महादेवी को अनुभूतिमय बनाया । उनकी गद्य गरिमा पर राचीरानी गुर्टू यों लिखती है "इन रचनाओं में लेखिका का समाज के प्रति एक जागरूक दृष्टिकोण भी है । कवि के रूप में जितनी वे पार्थिव समस्याओं से दूर है - गद्यकार होकर उतन ही समीप हैं । यद्यपि इनमें लेखिका युग-चेतना के अनुरूप विद्रोहिणी नहीं, फिर भी उसमें जैसे बुद्ध की करुणा और माता के विराट, मातृत्व के दर्शन होते हैं । वे घृणा से अधिक ममता और सहानुभूति में विश्वास करती हैं, इसलिए उसको विद्रोह की आग पर करुणा और सहानुभूति का हिम आच्छादित है, फिर भी कहीं कहीं वह दबाया नहीं जा सका है, विशेषतः नारी के प्रति होनेवाले अत्याचार से वह व्याकुल हो उठती है ।" हिन्दी साहित्य प्रेमी के हृदय में महादेवी की गद्य गरिमा की छाप चिर स्मरणीय रहेगी ।

संदर्भ ग्रंथानुक्रमणिका

संदर्भग्रंथानुक्रमणिका

महादेवी वर्मा के ग्रंथ सूची

1. अतीत के चलचित्र - महादेवी वर्मा
भारती भण्डार
इलाहाबाद, 1975.

2. आधुनिक कवि - महादेवी वर्मा
साहित्य सम्मेलन
प्रयाग, 1960.

3. स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा
भारती भण्डार
इलाहाबाद, 1986.

4. संकल्पिता - महादेवी वर्मा
सेतु प्रकाशन
झाँसी, 1968.

5. संभाषण - महादेवी वर्मा
साहित्य भवन
इलाहाबाद, 1975

6. सप्तपर्णा - महादेवी वर्मा
राजकमल प्रकाशन
इलाहाबाद, 1960.

7. संधिनी - महादेवी वर्मा
लोकभारती प्रकाशन
इलाहाबाद, 1965.

8. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा
सेतु प्रकाशन
झाँसी, 1968.

9. सांध्यगीत - महादेवी वर्मा
राजकमल प्रकाशन
इलाहाबाद, 1960.

10. यात्रा - महादेवी वर्मा
भारती भण्डार-लीडर प्रेस
इलाहाबाद, 1951.

11. रश्मि - महादेवी वर्मा
साहित्य भवन
इलाहाबाद

12. दीपशिखा - महादेवी वर्मा
भारती भण्डार
इलाहाबाद

13. नीरजा - महादेवी वर्मा
भारती भण्डार
इलाहाबाद

14. पथ के साथी - महादेवी वर्मा
लोकभारती प्रकाशन
इलाहाबाद, 1956.

15. मेरा परिवार - महादेवी वर्मा
लोकभारती प्रेस
इलाहाबाद, 1972.

16. शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा
भारती भण्डार
इलाहाबाद, 1942.

17. क्षणदा - महादेवी वर्मा
लोकभारती प्रकाशन
इलाहाबाद, 1956.

18. मेरे प्रिय संस्मरण - महादेवी वर्मा
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस
नई दिल्ली, 1991.

19. महादेवी साहित्य - सं. ओंकार शरद
सेतु प्रकाशन
झाँसी, 1969.

20. हिमालय - महादेवी वर्मा
लोकभारती प्रकाशन
इलाहाबाद, 1963.

अन्य सहायक ग्रंथों की सूची

1. महादेवी : नया मूल्यांकन - डॉ. गणपति चन्द्रगुप्त
भारतेन्दु भवन,
लोअर बाज़ार
शिमला, 1961.

2. गद्य लेखिका महादेवी वर्मा - योगराज थानी
भारतीय साहित्य मन्दिर,
दिल्ली, 1964.

3. महादेवी वर्मा- काव्य कला और जीवन दर्शन - सं. श्रीमती शचिरानी गुर्टू
गौतम बुक डिप्पो
दिल्ली, 1957.

4. महादेवी का गद्य साहित्य विश्लेषण और स्वरूप - डॉ. गोवर्द्धन सिंह
अनुभव प्रकाशन
कानपुर, 1988.

5. महादेवी चिन्तन व कला - संपादक इन्द्रनाथ मदान
राधाकृष्ण प्रकाशन
दिल्ली 1967.

6. महादेवी वर्मा और स्मृति की रेखाएँ - राजनाथ शर्मा
विनोद पुस्तक मन्दिर
आगरा-21, 1968.

7. महादेवी का गद्य साहित्य - डॉ. त्रिलोकीनाथ खन्ना
राधाकृष्ण प्रकाशन,
दिल्ली, 1965.

8. महादेवी संस्मरण ग्रंथ - सुमित्रानन्दन पंत
लोकभारती प्रकाशन
1967.

9. महीयसी महादेवी - गंगाप्रसाद पाण्डेय
लोकभारती प्रकाशन
इलाहाबाद, 1969.

10. महादेवी अभिनन्दन ग्रंथ - सं. देवदत्त शास्त्री
भारती परिषद
प्रयाग, 1964.

11. रेखाचित्र भूमिका - बनारसीदास चतुर्वेदी
भारती ज्ञानपीठ
काशी, 1963.

12. भारतीय साहित्य कोश - सं. डॉ. नगेन्द्र
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस
नई दिल्ली, 1981.

13. विचार और विश्लेषण - डॉ. नगेन्द्र
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस
दिल्ली, 1955.

14. दस तस्वीरें - जगदीश चन्द्र माथुर
राजकमल
नई दिल्ली, 1966.

15. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धांत-2 - गोविन्द त्रिगुणायत
भारती साहित्य मंदिर
दिल्ली, 1959.

16. हिन्दी रेखाचित्र: सिद्धांत और विकास - डॉ. मक्खनलाल शर्मा
प्रकाशक शब्द और शब्द उत्तर विजयनगर
आगरा-8, 1969.

17. हिन्दी रेखाचित्र - डॉ. हरवंशलाल शर्मा
मेहरा आफ सेट प्रेस
आगरा, 1969.

18. महादेवी - सं. इन्द्रनाथ मदान
राधाकृष्ण प्रकाशन
दिल्ली, 1965.

19. भारतीय साहित्यकोश - सं. डॉ. नगेन्द्र
प्रभात प्रकाशन
दिल्ली, 1987.

20. महादेवी - विचार और व्यक्तित्व - श्री शिवचन्द्र नागर
किताब महल
इलाहाबाद, 1956

21. साहित्यकार महादेवी - हर्षनन्दिनी भाटिया
कन्दर्प प्रकाशन
नई दिल्ली -2, 1984.

22. विचार और निष्कर्ष - श्री वासुदेव
भारती साहित्य मंदिर
दिल्ली, 1956.

23. महादेवी के रेखाचित्र - वेदवती राठी
पाठक प्रकाशन
अलीगढ़, 1989.

24. संस्मरण और संस्मरणकार - डॉ. मनोरमा शर्मा
विवेक प्रिन्टर्स
कानपुर, 1988.

25. हिन्दी रेखाचित्र -उद्भव और विकास - विनोद पुस्तक मन्दिर
आगरा, 1964.

26. महादेवी साहित्य - सेतु प्रकाशन
तलैया
झाँसी, 1970.

27. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
नागरी प्रचारिणी सभा
काशी, 1961.

- G5624 -

28. साहित्यिक निबंध - देवी प्रसाद गुप्त
पंचशील प्रकाशन
जयपुर

29. महादेवी की रचना धर्मिता के आयाम - डॉ. देवी प्रसाद गुप्त
पंचशील प्रकाशन,
दिल्ली, 1984.

30. हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी - श्री नन्ददुलारे वाजपेयी
इण्डियन पब्लिकेशन
इलाहाबाद, 1961.

अंग्रेज़ी ग्रंथ

1. A Handbook of literary Terms - Comp. H.L.Yellow ETC
Angus and Rebertson
London, 1955.

2. European Encyclopaedia - Vol.I

पत्र पत्रिकायें

1. आजकल - जुलाई 1951
2. आजकल - सितम्बर 1984.
3. धर्मयुग - 1967
4. अनुशीलन - आलोचना विशेषांक
द्वितीय भाग, 1987
5. साहित्य सन्देश - मार्च 1991.
6. हिन्दुस्थान साप्ताहिक - सितम्बर 1987.

UNIVERSITY OF SCIENCE

24-90